कृष्णा सोबती और माधवीकुट्टी के कथासाहित्य का तुलनात्मक अध्ययन

KRISHNA SOBTHI AUR MADHAVIKKUTTY KE KATHASAHITHYA KA THULANATMAK ADHYAYAN

THESIS

Submitted to

Cochin University of Science and Technology

For the degree of

DOCTOR OF PHILOSOPHY

BY

शैलजा के

SAILAJA K

Prof. Dr. A. ARAVINDAKSHAN
Head of the Department

Prof. Dr. M. SHANMUGHAN
Supervising Teacher

DEPARTMENT OF HINDI
COCHIN UNIVERSITY OF SCIENCE AND TECHNOLOGY
KOCHI - 682022

2002

CERTIFICATE

This is to certify that the **thesis** entitled **KRISHNA SOBTHI AUR MADHAVIKKUTTY KE KATHASAHITHYA KA THULANATMAK ADHYAYAN** is a bonafide record of work carried out by **Smt. SAILAJA. K** for the degree of **DOCTOR OF PHILOSOPHY** in the Department Of Hindi under my supervision and guidance. No part of this has hitherto been submitted for a degree in any University.

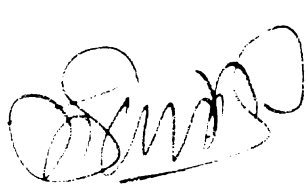

Prof. Dr. M. SHANMUGHAN
Supervising Teacher

Department of Hindi
Cochin University of Science
and Technology
Kochi – 682022

31st December 2002.

DECLARATION

I hereby declare that the work presented in this ***thesis*** *is based on the original work done by me under the guidance of* ***Dr.M.SHANMUGHAN****, Professor, Department Of Hindi, Cochin University of Science & Technology, Cochin-22 and no part of this thesis has been included in any other thesis submitted previously for the award of any degree in any University.*

Department Of Hindi
Cochin University Of Science & Technology
Cochin-682022.

Sailaja. K

भूमिका

साहित्य जिन्दगी का हमशक्ल है। भाषा जब मानव हृदय की धडकनों को समेट लेती है तब वह साहित्य का रूप हासिल करती है। बहुमुखी जीवन के तमाम पक्षों की अभिव्यक्ति में साहित्य अन्य कलाओं की अपेक्षा अधिक सक्षम है। उसकी उत्कृष्टता का कारण भी दूसरा नहीं। भारत जैसे बहु भाषा भाषी देश में विभिन्न परिवेश और आबोहवा में जीते लोगों में काफी भिन्नताएँ हैं तो भी उनमें एक प्रकार की सांस्कृतिक एकता भी अंतर्निहित है। भारत के बहुभाषीय, बहुधार्मिक, संस्कृति और परिवेश ने विभिन्न प्रान्तीय साहित्य को जन्म दिया है। भारत की सांस्कृतिक एकता को कायम रखने में इस साहित्य की अहं भूमिका है। विभिन्न भाषा-भाषी लोगों के रहन-सहन, रीति-रिवाज़, सभ्यता, संस्कृति आदि इनमें प्रतिफलित भी होती हैं। इन विविधताओं में निहित सांस्कृतिक एकता की अन्तर्धारा को समझने में तुलनात्मक साहित्य की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। विभिन्न भाषा भाषी लोगों की समस्याओं, अभिलाषाओं प्रत्येक प्रान्तीय साहित्य अवश्य प्रकाश डालता है, इसलिए तुलना आसान है और यों पारस्परिक संबन्ध भी उन्मीलित होगा। विविध प्रान्तीय साहित्यों का यह आपसी संबन्ध भारत की एकता के लिए भी सहायक है। इस दृष्टि से तुलनात्मक साहित्य की प्रासंगिकता व उपयोगिता निर्विवाद है।

भारत के अधिकांश राज्यों की मातृभाषा हिन्दी है। यह खासकर उत्तर भारत की भाषा है। मलयालम जैसे दक्षिण भारतीय भाषा के साथ उसका तुलनात्मक अध्ययन एक प्रकार से भारत भर की

जनता की जिन्दगी और सभ्यता की ओर रोश्नी डाल सकती है। वह भारत की विविधता में एकता की संकल्पना को उजागर करने में मददगार भी हो सकती है। इसी मकसद को ध्यान में रखकर ही मैं कृष्णा सोबती और माधवीकुट्टी के कथासाहित्य के तुलनात्मक अध्ययन करने का निर्णय लिया था। कृष्णा सोबती और माधवीकुट्टी हिन्दी और मलयालम के सशक्त हस्ताक्षर हैं। इन्होंने अपने परिवेश के जीवन के नब्ज एवं धडकनों को पकडने की भरपूर कोशिश की है। दोनों के कथासाहित्य के ज़रिए भारतीय नारी अपनी खूबियों एवं खामियों सहित साकार हो उठी है । प्रस्तुत शोध प्रबन्ध को अध्ययन की सुविधा के लिए पांच अध्यायों में विभाजित किया गया है ।

पहला अध्याय है ' कृष्णा सोबती और माधवीकुट्टी के विशिष्ट सृजनात्मक व्यक्तित्व का परिचय ' जिसमें दोनों लेखिकाओं के विद्रोही व्यक्तित्व एवं सृजनात्मकता की विशिष्टताओं का अध्ययन किया गया है। दोनों के साहित्यिक व्यक्तित्व के सृजन में अहं भूमिका निभानेवाले प्रेरक तत्वों का विवेचन भी किया गया है ।

दूसरा अध्याय कृष्णा सोबती और माधवीकुट्टी के रचनाकालीन परिवेश का अध्ययन ' है जिसमें दोनों के रचनाकाल के सामाजिक, राजनीतिक एवं आर्थिक परिस्थितियों का विश्लेषण और तदनुरूप उत्पन्न लेखकीय परिवेश का अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।

तीसरे अध्याय ' कृष्णा सोबती और माधवीकुट्टी की सर्जना और दर्शन ' में दोनों लेखिकाओं की सर्जना की पृष्ठभूमि में कार्यरत नारीवादी दर्शन का सामान्य परिचय दिया गया है और उसके

आधार पर दोनों की रचनाओं में अभिव्यक्त नारीजीवन की समस्याओं तथा उसकी अस्मिता के विभिन्न आयामों का परिचय दिया है।

चौथे अध्याय 'परिवर्तित मूल्य एवं मानवीय संबन्धों के विघटन की समस्याएँ ' में प्रेम, नैतिकता, अर्थ से जुडे मूल्यों में आए परिवर्तन के परिप्रेक्ष्य में मानवीय संबन्धों में विशेषकर स्त्री-पुरुष संबन्ध एवं अन्य पारिवारिक संबन्धों में आई दरारों का अध्ययन करने का प्रयास किया है।

पॉचवाँ अध्याय 'कृष्णा सोबती और माधवीकुट्टी की सर्जना की शिल्पगत विशिष्टताएँ 'है जिसमें दोनों लेखिकाओं की रचनाओं के भाषागत एवं शैलीगत विशेषताओं को प्रस्तुत किया गया है ।

अंत में ' उपसंहार ' के तहत दोनों लेखिकाओं की सृजना- त्मकता की विशेषताएँ एवं साम्य वैषम्य का संक्षिप्त आकलन प्रस्तुत है।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध की पूर्ति के लिए मेरे निर्देशक एवं गुरु डॉ. एम. षण्मुखनजी से मुझे काफी प्रोत्साहन मिला है। उनके प्रति मैं हार्दिक आभार प्रकट करती हूँ। विषय विशेषज्ञ डॉ. पी. ए. षमीम अलियारजी से मुझे शोध प्रबन्ध की तैयारी में नई दिशा एवं दृष्टि मिली है। मैं उनके प्रति भी एहसानमन्द हूँ। विभागाध्यक्ष डॉ. ए. अरविन्दाक्षनजी तथा विभाग के अन्य गुरुजनों के प्रति भी आभार प्रकट करती हूँ जिन्होंने मुझे प्रोत्साहन दिया है।

विषय सूची

पृष्ठ संख्या

अध्याय एक 1-35

कृष्णा सोबती और माधवीकुट्टी के विशिष्ट सृजनात्मक व्यक्तित्व का परिचय

जन्म एवं शिक्षा
रचना एवं पुरस्कार
विद्रोही व्यक्तित्व

अध्याय दो 36-54

कृष्णा सोबती और माधवीकुट्टी के रचनाकालीन परिवेश का अध्ययन

सामाजिक परिस्थिति
राजनीतिक परिस्थिति
आर्थिक परिस्थिती
केरल का खास परिवेश

अध्याय तीन 55-129

कृष्णा सोबती और माधवीकुट्टी की सर्जना और दर्शन

नारीवाद : सामान्य परिचय
नारीवादी सिद्धांत
लिबरल फेमिनिसम
राडिकल फेमिनिसम
मार्क्सवादी फेमिनिसम
सोष्यलिस्ट फेमिनिसम
राडिकल लेस्बियनिसम
अस्तित्ववादी व मनोवैज्ञानिक फेमिनिसम
नारीवादी स्वर : माधवीकुट्टी में

नारीवादी स्वर : कृष्णा सोबती में

अध्याय चार 130-170

परिवर्तित मूल्य एवं मानवीय संबन्धों के विघटन की समस्यायें

भारत-पाक विभाजन और मानवीय संबनधों में विघटन
आधुनिक भावबोध और बदलते मानवीय संबन्ध
परिवर्तित समय की अनुगूँज
नए ज़माने में अर्थ की भूमिका
प्रेम तथा नैतिकता की मान्यताएँ
तनावग्रस्त दाम्पत्य और दाम्पत्येतर संबन्ध
अन्य पारिवारिक संबन्ध

अध्याय पाँच 171-199

कृष्णा सोबती और माधवीकुट्टी की सर्जना की शिल्पगत विशिष्टताएँ

भाषा
संवाद
बिंबात्मकता
प्रतीकात्मकता
शैली

उपसंहार 200-205

ग्रंथ सूची 1-14

अध्याय एक

कृष्णा सोबती और माधवीकुट्टी के विशिष्ट सृजनात्मक व्यक्तित्व का परिचय

व्यक्ति अपने परिवेश के साथ अदृश्य धागों से बंधा रहता है। जन्म से ही देश की मिट्टी , भाषा , वातावरण , संस्कृति आदि का प्रभाव उसमें समा जाता है। किसी भी शख्स का व्यक्तित्व इन सब़का मिला जुला रूप है।

कुछ अनुपम लोग तो ऐसे हैं जो समय की राहों से बहुत दूर निकल जाने पर भी इन सबको दिल में संजोकर घूमते हैं। हिंदी कथा जगत की मशहूर लेखिका कृष्णा सोबती और मलयालम की अनुपम कथाकार माधवीकुट्टी दोनों ऐसे व्यक्तित्व हैं जो अपनी मिट्टी की गरिमा को दिल में दिया समान जलाती रहती है और जिसकी रोशनी उनकी रचनाओं को जगमगाती है।

जन्म एवं शिक्षा

कृष्णा सोबती का जन्म 18 फिरवरी 1925 को पश्चिमी पंजाब में गुजरात जिले के एक ज़मींदार परिवार में हुआ था। उनका बचपन वहाँ के एक खानदानी महल में सामंजस्यपूर्ण संयुक्त पारिवारिक माहौल में सभी वैभवों के साथ संपन्न हुआ। यहाँ उन्होंने पंजाबी ग्रामीण कृषक जीवन को पूरी जीवंतता और शक्ति के साथ अनुभव किया। उनकी शिक्षा दिल्ली, शिंला और लाहौर में हुई। भारत विभाजन के दौरान उनके परिवार को अपने काफी धन- दौलत से हाथ धोकर दिल्ली आना पडा। आगे पढ़ाई करने का अवसर भी प्राप्त नहीं हुआ। माउण्ड आबू में सिरोही के महाराजा तेजसिंह की अध्यापिका के रूप में उन्होंने दो वर्ष काम किया। फिर दिल्ली सरकार के 'अडल्ट् लिटेरसी ' का संपादक बन गई। सन् 1980 से उन्होंने अपने आप को पूर्णत : साहित्य सृजन में लगा रखा।

गाँव में जन्म और महानगरों में शिक्षा दीक्षा होने के कारण एक ओर उनके व्यक्तित्व में देहाती खेतीहर वर्ग में मौजूद खुलापन है तो दूसरी ओर शहरी सभ्यता की स्पष्ट झलक भी है। उन्होंने स्वीकार किया है कि देहातीपन अपनी आत्मा में बचा रखा है, और शहरीपन अपने तौर तरीके और लिबास में। शहर के सफेदपोश वर्ग के बंधे बंधाए व्यवहार, मान्यताएँ, साज संवार और अनुशासन को उन्होंने उसी ढ़ाँचे में जिया है और आत्मसात भी किया है।

मलयालम के लोकप्रिय कहानीकार, चित्रकार एवं अंग्रेज़ी के विश्व प्रसिद्ध कवयित्री है ' डॉ. कमलादास ' जिन्होंने इस्लाम धर्म को स्वीकार करते हुए ' डॉ. कमला सुरय्या ' बन गई है और फिलहाल सिर्फ सुरय्या नाम से अभिहित होना चाहती है। मलयालम में वह ' माधवीक्कुट्टी ' उपनाम से लिखती चली आ रही है। वे घर, परिवार एवं रिश्तेदारों की तरफ से ' आमी ' नाम से पुकारी भी जाती हैं। उनका जन्म सन् 1934 मार्च 31 को केरल के पुन्नयुरक्कुलम गाँव में नालप्पाट्टु परिवार में हुआ। उनके पिता स्वर्गीय वी.एम.नायर ' मातृभूमि ' के प्रबंधकीय संपादक थे। माता मलयालम की मशहूर कवयित्री बालामणियम्मा है। सुरय्या के पति स्वर्गीय माधवदास आई एम एफ के सीनियर कंसल्टेंड थे। उनके तीन बेटे हैं। उनकी शिक्षा केरल और कलकत्ता के स्कूलों में हुई। किशोरावस्था में ही उनकी शादी करा दी गई थी।

रचना एवं पुरस्कार

कृष्णाजी के आठ उपन्यास और एक कहानी संकलन है - डार से बिछुडी (1958), मित्रो मरजानी (1966), यारों के यार : तिन पहाड (1968), सूरजमुखी अन्धेरे के (1972), जिन्दगीनामा (1979), ऐ लडकी (1991), दिलो दानिश (1993), समय सरगम (2000), ' बादलों के घेरे ' (1980) कहानी

संकलन। इसके अलावा हम हशमत - दो भाग संस्मरणात्मक ग्रन्थ तथा चुनिंदी रचनाओं का संकलन सोबती एक सोहबत भी प्रकाशित है।

' ज़िन्दगीनामा ' उपन्यास के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार प्राप्त हुआ है। इसके अतिरिक्त उन्हें शलाका पुरस्कार, कथा चूडामणि पुरस्कार, भारतीय भाषा परिषद पुरस्कार भी प्राप्त हुए हैं।

माधवीकुट्टीयुडे मून्न् नोवलुकल (माधवीकुट्टी के तीन उपन्यास , 1977), मानसी (1978), मनोमी(1988), चन्दनमरड्.ड.ल (चंदन के पेड 1988),कटल मयूरम (सागर मयूर 1989), आदि माधवीकुट्टी के उपन्यास हैं।

मतिलुकल (दीवारें 1955), पतिनोन्न् कथकल (ग्यारह कहानियाँ 1958), नरिच्चीरुकल परक्कुम्बोल (चमगादडों के उडने पर 1960), तरिशुनिलम् (बंजर भूमि 1962), एन्टे स्नेहिता अरुणा (मेरी सहेली अरुणा 1963), चुवन्ना पावाटा (लाल घाघरा 1967), पक्षियुटे मणम् (पक्षी का गन्ध 1964),तणुप्प् (ठंडक 1967), राजाविन्टे प्रेमभाजनम् (राजा की मेहबूबा 1969), माधवीकुट्टियुटे कथकल (माधवीकुट्टी की कहानियाँ 1982), एन्टे चेरुकथकल (मेरी कहानियाँ 1985), पलायनम् (पलायन 1990), स्वातनत्य समर सेनानियुटे मकल (स्वतन्त्रता सेनानी की बेटी 1991), नेयपायसम (खीर 1991), नष्टपेट्टा नालांबरी (खोयी नीलांबरी 1994), चेक्केरुन्ना पक्षिकल (घोंसले लौटती चिडियाँ 1996), वीण्डुम् चिला कथकल (कुछ कहानियाँ और), हंसध्वनि आदि उनके कहानी संकलन हैं।

एन्टे कथा (अपनी कहानी 1974), बाल्यकाला स्मरणकल (बचपन की यादें 1987), वर्षड.्ड.लक्कु मुनप् (सालों पहले 1989), डयरिक्कुरिप्पुकल (डायरी की टिप्पणी 1992), नीरमातलम पूत्ता कालम् (नीरमातलम् जब खिला था 1993), ओट्टयटिप्पाता (पगडंडी 1995) उनके

आत्मकथात्मक रचनाएँ हैं। इरुपत्तोन्नाम् नूट्टाण्डिलेक्क् (इक्कीसवीं शती की ओर 1984), भयं एन्टे निशावस्त्रम् (भय, मेरा रात का कपडा 1985), एन्टे पातकल (मेरे रास्ते) आदि निबन्ध संकलन हैं।इसके अलावा उनकी कई अंग्रेज़ी रचनाएँ भी हैं।

केन्द्र साहित्य अकादमी पुरस्कार, केरल साहित्य अकादमी पुरस्कार, आशान पुरस्कार, वयलार पुरस्कार, साहित्य अकादमी विशिष्ट सदस्यता, एषुत्तच्छन पुरस्कार जैसे अनेक पुरस्कार उन्हें प्राप्त हुए हैं। 1984 में नोबल पुरस्कार के लिए भी उन्हें नामांकित किया गया था।

विद्रोही व्यकित्व

सृजनात्मकता और जीवन के बीच कोई सीमा कायम न रखते हुए अपनी भावनाओं के प्रति पूरी ईमानदारी बरतानेवाली लेखिका है माधवीक्कुट्टी। वास्तव में वह क्रांतिकारी है। उनका स्थान उन लेखकों में है जिन्होंने सत्य का सामना करने का अनुपम एवं अपूर्व साहस दिखाया है। फिर भी अपने बारे में उनका वक्तव्य है - " असाधारण भावना एवं संवेदनशीलता से युक्त एक साधारण स्त्री हूँ मैं । प्यार में फूला न समानेवाली ; नारी बनी रहने मे आनंद अनुभव करनेवाली। रेशमी कपडों की कोमलता, पुरुष के चुंबन और आभूषणों के रव में आनंदानुभूति पानेवाली। बच्चों और पोता पोतियों से बेहद प्यार करनेवाली मामूली स्त्री। " 1

माधवीक्कुट्टी के व्यक्तित्व में भी देहाती और शहरी सभ्यता का मिला जुला प्रभाव पडा है। उनके पिता मुंबई , कलकत्ता जैसे बडे शहरों में विदेशी कंपनी के कार्यालयों में काम करते थे। इसलिए गाँधीवादी होते हुए भी विदेशी सभ्यता के शिष्टाचार और तौर तरीकों से प्रभावित थे। नागरिक जीवन की चमक दमक एवं यांत्रिकता से यद्यपि वह खूब परिचित है फिर भी एक पुरानी देहाती

लडकी मन के मेंडों में उछलती रहती है- " ज़िंदगी ने मुझे कई पोशाक पहनाए तो भी अंदर ही अंदर में पहले की वही चुनरीवाली लडकी हूँ। एक बेचारी लडकी जिसने नानी की वात्सल्य में सुरक्षा का एहसास पा लिया था। " 2

घर के खुले लचकीले अनुशासन ने एक ओर कृष्णा जी के व्यक्तित्व को खुलने पनपने का मौका दिया तो दूसरी ओर उसकी कडी व्यवस्था ने उसके स्वभाव , पसंद एवं चुनाव को तय किया। घर के अनुशासन और कडी व्यवस्था के दायरे के अंदर अंदर ही उसका स्वभाव पनप उठा। ' मैं, मेरा समय और मेरा रचना- संसार ' में कृष्णाजी बताती है- " उन दिनों हमारी खरीद नंबर एक थी- किताबें और नंबर दो- स्टेशनरी । दोनों आज भी अपनी पुरानी निशान पर कायम है। एक ही छोटी सी तब्दीली हुई है। अब स्टेशनरी नंबर एक और किताबें नंबर दो पर हैं। " 3 इसप्रकार घर के वातावरण के प्रभाव से ही सही किताबों की दुनिया से उसका अटूट रिश्ता बचपन से ही शुरु हुआ। और उम्र के साथ साथ अपनी पसंद की किताबों के नज़दीक पहूँच गई। किताबों के प्रति, विविध विषयों के प्रति उनकी रुचि को मोड देने में घर में रात के खाने के बाद होनेवाली बैठकें, चर्चा आदि सहायक निकली। वहाँ से साहित्य से उनका पहला परिचय हुआ जो बहुत गहरा एवं खरा था। साहित्य से उनका यह परिचय बाद में कविता, कहानी, उपन्यास, संस्मरण आदि की रचना में सहायक सिद्ध हुआ। उनके घर में हिंदी, उर्दु, अंग्रेज़ी की किताबों की भरमार थी। उपहार के रूप में आर्य समाज के बुक स्टालों से अक्सर उन्हें किताबें ही मिलती थी। इन सबने कृष्णा जी के साहित्यिक व्यक्तित्व के गठन में अहम भूमिका निभायी।

उनके परिवार में पूजा, व्रत, अनुष्ठान, जप आदि के प्रति कोई विश्वास व आस्था नहीं थी। फिर भी न तो मूर्तिपूजा की खिल्ली उडायी जाती थी और देवी देवताओं के नाम पर कोई तवज्जो ही दी जाती थी। रख-रखाव में विदेशी

प्रभाव के बावजूद दिल्ली, शिंला की देशी बिरादरी का आचार और परिष्कार उन पर अपना प्रभाव डाल लिया था। उन्होंने लिखा है- " शाम को बच्चे सुधरे हो माल पर घूमने जातें। हफेते में एक बार डेविको या बैंजरस से चॉकलेट पाते। रात को गर्म पानी से गुसल करते। सुबह बडों को प्रमाण करते और सोने से पहले गुड-नाईट। हर शनीचर को हम सब बहन भाई को ओलिवाईल पीना होता, अपने-अपने मोजे धोने होते और एक दूसरे के जूते पॉलिश करने पडते। " 4 अत : सोबती जी के व्यक्तित्व में देशी विदेशी दोनों की झलक है। विदेशी शासन यंत्र के अंग रहते हुए भी बचपन से ही उनके मन में अपने देश केलिए अजीब गौरव भरी भावना और जोश थी। इसके साथ अंग्रेज़ां के गुलाम होने की विवशता भी मौजूद थी।

शहरी सभ्यता एवं जीवन के शान-शोकत में रहते हुए भी उनमें शहरी जीवन केलिए न विशेष लगाव था और न गाँव के प्रति कोई हीन दृष्टि - " शिमला दिल्ली की साफ शफ्फ़ाक चौडी तारकोल की सडकों के आगे हमें गाँव न छोटा लगता, न बडा। किसी एक को भी लेकर हमें कोई घपला न होता। हमें शिमला के खच्चरों और टट्टुओं की पहचान थी। गुसलखानों में साफ सुधरे तौलियों की, तो खेत हो आने की और खुले में नहाने की भी। सब अपनी-अपनी जगह स्थित था और हमारी निरंतर दौड में था। हम न किसी एक के हक में थे न दूसरे के खिलाफ। किसी एक केलिए भी किसी दूसरे ने हमारा दिल नहीं फलाँगा। सब कुछ हमारी परिधि में था। हमारे हाथों में, हमारी दौड में, एक बडी दुनिया से जुडा हुआ । " 5

घर में जिस व्यावहारिक अनुशासन के तहत उसका पालन पोषण हुआ उसमें बच्चों के प्रति कोई विशेष लाड-प्यार नहीं दिखाए जाते थे, बच्चों को भी उसकी प्रतीक्षा नहीं थी। उसकी इच्छा ही नहीं थी। गलती करने की छूट नहीं थी, सही कर डालने का विशेष इनाम भी नहीं दिया जाता था। फिर भी बच्चों को घर में

खुलकर अपने विचारों को प्रकट करने का पूरा अवसर दिया जाता था। अपने उचित माँग बडों के आगे बेझिझक पेश कर सकते थे। उसकेलिए सही तर्क प्रस्तुत करने पर मनचाहा फैसला भी पा सकते थे। और जब उसके विरुद्ध कुछ होता तो डटकर अपने तर्क प्रस्तुत करने का अवसर भी मिलता था। इसलिए कृष्णा जी ने बताया है कि यह सब उनकी हिम्मत और काबलियत का इम्तहान ही होता। इससे खरा उतरने का सुपरिणाम यह हुआ कि ज़िंदगी की छोटी छोटी बातों से लेकर हर मामले में अपना एक अलग दृष्टिकोण, एक राय रूपायित करे में सोबती जी सफल हुई। उसे खुलकर प्रकट करने में कोई हिचक भी नहीं रहा।

इससे मिलती जुलती एक परिवेश और पारिवारिक वातावरण में माधवीकुट्टी की भी परवरिश हुई। सोबती जी की ही समान किताब एवं साहित्य की दुनिया से माधवीकुट्टी का निरंतर संबंध बचपन से ही था। विदेशी एवं देशी रचनाकारों की रचनाओं को पढ़ने का अवसर भी प्राप्त हुआ था। बचपन में माँ कहानियाँ पढ़कर सुनाया करती थी। माधवीकुट्टी ने बताया भी है कि मलयालम में एस. के. पोट्टेक्काट की कहानियाँ पढ़कर स्वयं लिखने की इच्छा उत्पन्न हुई। 6 उनकी माताजी प्रसिद्ध कवयित्री है और उनके मामा नालप्पाट्टु नारायण मेनोन मलयालम के सुप्रसिद्ध साहित्यकार थे। उन्होंने विक्टर यूगो की कृति ' ले मिसेरबिल्स ' का मलयालम में ' पावङ्ङल '(गरीब) नाम से अनुवाद किया था। माधवीकुट्टी ने बचपन में उसका भी अध्ययन किया था और उस अनुभव का गहरा प्रभाव उसके व्यक्तित्व पर पडा। उस समय नालप्पाट्टु घर में मामाजी से मिलने केलिए अनेक समकालीन साहित्यकार आया करते थे और घर में चर्चाएँ एवं संवाद होते थे । इन सभी बातों से उत्पन्न एक साहित्यिक वातावरण में रहने से माधवीकुट्टी मे साहित्य के प्रति रुचि, लिखने का आग्रह और महत्वाकांक्षा उत्पन्न हुई।

पढ़ाई में विशेषकर गणित में माधवीकुट्टी हमेशा पीछे थी। " गणित परीक्षा में सौ में बीस अंक से ज़्यादा वह कभी हासिल नहीं कर सकी। " 7 इस स्थिति का परिणाम यह हुआ कि उसकी पढ़ाई स्कूल के स्तर तक रह गई और जल्दी उसकी शादी करा दी गई। पढ़ाई में पीछे रहने के कारण घरवालों को विशेषकर पिताजी को प्रभावित करने के तरकीब के तौर पर उन्होंने लिखना शुरु किया था - " वास्तव में पिताजी के प्यार पाने का एकमात्र लक्ष्य से मैं ने लिखना शुरु किया। तब मेरी उम्र दस साल से कम थी। उस वक्त पिताजी को मेरे और भाई के प्रति तनिक भी रोब नहीं था। लाख प्रयास करने के बावजूद भी पिताजी के अरमानों तक पहूँच न सकने का हीनता बोध उस वक्त हमें बेहद सताते थे। " 8

उनके घर में भी माँ-बाप बच्चों के प्रति विशेष लाड प्यार नहीं दिखाते थे। माताजी पूजा पाठ, कविता लेखन आदि में व्यस्त रहती थी। वे सादगी से युक्त सात्विक जीवन जी रही थी। उन्होंने कभी भी बच्चों पर जबरदस्ती भक्ति धोपने की कोशिश नहीं की। पिताजी भी हमेशा अपने पेशे से संबंधित कार्यों में व्यस्त थे। फिर भी बच्चों के कपडे - लत्ते, शिष्टाचार, पढ़ाई आदि पर ध्यान देते थे। वे बच्चों के आचार विचारों को तय करने में नियामक शक्ति रहे। बचपन से ही बहुत संवदनशील और भावुक होने के कारण णाधवीकुट्टी माँ बाप के प्यार से तृप्त नहीं थी। माँ बाप के विशेष लाड प्यार के अभाव की पूर्ति गाँव में नानी से पाती थी और घर में नौकरानियों से। उन्होंने बताया है- " मेरे जीवन में ऐसा एक समय था जिसमें नौकरानियों की चोलियों के पसीने की बू को मैं वात्सल्य का गंध समझती थी। " 9 गाँव पहूँचते ही नानी के वात्सल्य और देहात के वातावरण में सबकुछ को सहज ही स्वीकार करने का भाव उनमें विद्यमान था। केरल के स्कूल में पढ़ाई के वास्ते और छुट्टियों में गाँव पहूँचते पूरी तरह ग्रामीण बन जाने में उन्हें देर नहीं लगती थी। उस ज़िंदगी को अपनाकर आनंद पाती थी। लेकिन देहातीपन के कपडे

उतारकर शहरीपन को ओढ़ लेने केलिए वह मज़बूर हो जाती थी। पर शहर में भी अपने पैर जमाने केलिए उन्हें काफी देर नहीं लगती थी।

गाँधी जी से प्रभावित होकर माधवीकुट्टी के माँ बाप आडंबरहीन यानी अत्यंत सरल जीवन बिताते थे। खद्दर ही पहनते थे। वेश भूषा और घर की सामग्रियों में भी सादगी छलकती थी। लेकिन माधवीकुट्टी के मन में सभी वैभवों से पूर्ण स्वर्गिक ज़िंदगी बिताने की ख्वाहिश थी। उन्हें रंग बिरंगे कपडों के प्रति लगाव था। लेकिन उनसे बता दिया गया कि वे सब भडकीले हैं- " संयम का मार्ग और समवृत्ति में ही हमारी भलाई है यही मेरे माता पिता का विश्वास था। मुझे ऐसा विश्वास वन होने के कारण मेरे पॉव ज़मीन से ऊपर उठे। मैं आकाश में बादलों के साथ घूम-भडक सकी और पाताल के कीचड में थककर गिर भी सकी। "10 ललित जीवन की कर्कशता को डर के मारे स्वीकार करते वक्त भी उन्होंने रेशम और जेरी से भरे दूकानों का ख्वाब देखा। अपने आप को रेशम के नरम कपडों में लिपटे हुए सपना देखा। " मेरे ख्वाबों में इत्र की खुशबू भरी रहती थी। " 11

कृष्णा सोबती और माधवीकुट्टी दोनों का विद्रोही व्यक्तित्व है। अपने घर के अनुशासन, व्यवस्था पूर्ण वातावरण, आर्थिक स्थिति, सामाजिक परिवेश के अनुरूप उससे गहरे रूप से प्रभावित होकर कृष्णाजी का व्यक्तित्व विकसित हुआ। उससे उन्होंने हिम्मत व काबिलियत जुटाई। अपने पारिवारिक परिवेश के अनुकूल ही चमक-दमक,शिष्टाचार एवं ज़मींदारी अदा के साथ ही उनकी परवरिश हुई थी। उनके व्यक्तित्व के विकास में परिवार की तरफ से कोई बाधा उपस्थित नहीं थी। यानी उस ज़माने की तुलना में उसकी परविरश एक उदार वातावरण में हुई। पर माधवीकुट्टी अपने घरवालों की इच्छा एवं प्रतीक्षा के अनुकूल एक खास व्यक्तित्व की मालकिन नहीं बन सकी। अगर ऐसा कहें तो गलत नहीं है कि बचपन से ही माधवीकुट्टी का विद्रोही व्यक्तित्व रहा था। उस ज्वाला को बुझाने

में यद्यपि परिवार व परिवेश सफल निकले तो भी उनका विद्रोही व्यक्तित्व राख तले अंगार के समान अनबुझा रहा। माधवीकुट्टी अपनी सहज भावनाओं को किसी भी कीमत पर रोकने केलिए तैयार नहीं हुई। कुछ भी छिपाने की कोशिश नहीं की। सच्चाई को खुलकर व्यक्त कर ही लिया। इसमें दूसरों के विशेषकर माँ बाप के दिल को टीस पहूंचाने को लेकर पछतावा प्रकट करती हुई भी नज़र आती है - " माता-पिता को टीस पहूँचाने केलिए अब माफी माँगने से क्या फायदा ? एक को गुज़रे अठारह साल हो गए । दूसरा लगभग जाने को तैयार खडा है। प्यार के बोझ से थका हुआ मेरा हृदय ही मुझे माफी माँगने केलिए प्रेरित करता है। यह भी एक सच्चाई है कि अगर मेरा बोझ प्यार न होता तो मैं टीस नहीं पहूंचाती। " 12

कृष्णा जी पर अपने परिवेश का इतना गहरा असर है कि कपडे लत्ते को लेकर खर्च करने, दोस्ती करने आदि छोटी मोटी बातों को लेकर वह अपना एक अलग पूर्व निश्चित धारणा रखती है। उससे किसी भी हालत पर विचलित होना भी वह ज़रूरी नहीं समझती। अपने वेश भूषा के बारे में उन्होंने बताया है- " आम तौर पर मैं ऐसे कपडे पहनना पसंद नहीं करती, जो मेरे शक्ल- सूरत से कहीं ज़्यादा कीमती लगें। कोई रेशम या रंग आँख पर चढ जाता है तो बार बार उसे दोहराती चली जाती हूँ। मैं बार बार वही पहनती हूं जो मुझमें खप जाएं जो हल्का हो और ढीला हो। " 13 अपने लिए बहुत ज़्यादा कपडे वह संभालकर नहीं रखती, क्योंकि वह सब उसे मामूली लगता है और अपने अंदर और बाहर की सफाई पर बाधक भी।

खर्च करने के मामले में उनका बयान है - " कसकर इस्तेमाल होनेवाला ठोस सामान ही मेरी आँखों पर चढता है और कायदे से किया जानेवाला खर्च में शौक बना लेती हूँ और शौक केलिए किया गया महज ज़रूरत। " 14 दोस्ती के संबंध में उनकी राय है - " मैं बराबरी की दोस्ती ढ़ंग से निभाती हूँ।

क्योंकि कभी छोटे थे नहीं, बडे कभी हुए नहीं, इसलिए यह अदा आज तक पाले हुए हैं। " 15

इसप्रकार देखा जाय तो हर मामले में कृष्णा जी अपनेलिए उचित क्या है इस बात को तय करती है तो माधवीकुट्टी उसीप्रकार की एक पूर्व निश्चित धारणा नहीं रखती। लेकिन दोनों में यही समानता है कि दोनों वही करती है जो अपने मन को भाता है। उसमें सामाजिक या सार्वजनिक दृष्टि से जितनी भी अनियमितता है उसे ठुकरा देने की, बेफिक्र रहने की क्षमता दोनों में है। हर बात के बारे में सोबती जी के विचार अटल है तो माधवीकुट्टी की धारणाएँ बदलती रहती है। उस बदलाव पर माधवीकुट्टी चिंतित भी नहीं है। सोबतीजी की विद्रोहात्मकता उस अचंचलता में है तो माधवीकुट्टी के वक्तव्यों की चंचलता के पीछे अपने दिल की सच्चाई के प्रति वफादार होने की ठोस मान्यता है।

कृष्णा सोबती जी सभी साहित्यिक गुटबंदियों से बाहर रहती है। इसलिए उनके सब अदब दोस्तों के साथ रिश्ते में कोई डंवाडोल नहीं है। हमेशा उनके साथ अच्छी दोस्ती निभाने में वह सक्षम रहती है। पर साहित्य के तथाकथित इंटलक्च्वल बिरादरी के किसी से दोस्ती स्थापित करने में वह असफल भी हो गई हैं। उस बिरादरी के किसी को कोई फायदा देने या किसी से नहीं ले सकने के कारण दोस्ती कायम रखने में वह असमर्थ रह गई। राजेंद्र यादव जी ने इसके कारण की ओर संकेत किया है। उनके शब्दों में - " सख्त सरहदों और बीहट पगडंडियों वाली यह महिला एक चट्टानी पहाड की गर्वोन्नत हिमानी शिखर जैसी दिखाई देती है। अतिरिक्त ढीला साटनी ग़रारा, कुर्ता और सिर पर लपेटा, दुपट्टा काला चश्मा सब मिलाकर हमेशा भीड में विशेष। " 16

साधारण विषयों पर भी विशिष्ट वक्तव्यों की वजह माधवीकुट्टी भी भीड में अलग नज़र आती है। साहित्य के नवीन वादों और गहन विषयों से अछूत

रहने के कारण वह भी बहुत समय तक समाज की इंटलक्च्वल बिरादरी में स्थान नहीं पा सकी - " मैं उन सभी बातों का तिरस्कार करती हूँ जो मेरी समझ में नहीं आती। मैं उन लोगों का भी तिरस्कार करती हूँ जो मुझे पसन्द नहीं करते।" 17 इसी बात को उन्होंने मेरे रास्ते में भी व्यक्त किया है- " मैं मरते दम तक उन बातों के बारे मेंपत्र-पत्रिकाओं में हल्के विषयों पर लिखती रहूँगी जो मुझ जैसे लोगों केलिए पढने लायक हों। मैं जानती हूं कि अधिकांश लोग मेरे वर्ग के हैं। यह जानकारी ही मेरी प्रेरणा है। " 18

अपने जीवन में कृष्णा जी को उपहास-व्यंग्य के तीर-तरक्सों से अक्सर टकराना पडा लोकिन दूसरों के साथ मिलकर वे उन्हें हंसी मज़ाक में मिला देती हैं। पुरुषों से ज़्यादा स्त्रीयाँ ही उनकी वेश भूषा एवं तौर तरीके पर व्यंग्य एवं कडी आलोचना करती आयी हैं। फिर भी सोबती जी अपनी पटरी पर निरंतर आगे बढ़ती रही क्योंकि दोस्ती के समान ही किसी अन्य बात से भी कृष्णा जी डरकर मुँह नहीं मोडती । अपने प्रति विशेषकर स्त्रीयों के इस दृष्टकोण का कारण वह समाज की झूठी नैतिक मान्यता समझती है। समाज में तो स्त्री ही दूसरी स्त्री की तीखी आलोचना करती है। और भारतीय समाज की विशेषता ही यह है कि उसमें शादी शुदा औरत को ही मान्यता दी जाती है। कोई औरत ज़िंदगी में अविवाहिता रहने का निश्चय करती है तो उसे शक की निगाह से देखा जाता है । उस पर अनैतिकता का आरोप किया जाता है। गर्दिश के दिन में कृष्णा जी ने अपने प्रति समाज की दृष्टि को व्यक्त करते हुए बताया है- " रंग- ढ़ंग कुछ ऐसा पाया कि देखनेवालों से ठीक ही है कि निगाह और देखनेवालियों से समझ क्या रखा है का आमना सामना होता ही रहा। " 19 मित्रो मरजानी, यारो के यार और सूरजमुखी अंधेरे के की लेखिका पर लोग उनके पात्रों के स्वभाव विशेष का आरोप करते हैं। मित्रों मरजानी के बाद लोग उन्हें ही मित्रो समझने लगे। यारों के यार के बाद बातचीत करते वक्त लोग

इसका इंतज़ार भी करने लगे कि अभी बोलचाल में ही गालियों के नंगीने जडने लगेगी। सूरजमुखी अंधेरे के तक आते आते यह मान लिया गया कि सोबतीजी अक्सर पिए रहती है। अनेक व्यक्तियों से अनैतिक संबंध रखती है। कई सीधी सादी दोस्तियाँ इस हल्ले में रंगीन हो गईं। इन सभी बातों से बेफिक्र कृष्णा जी कहती है - " हमने बुरा नहीं मनाया । मनाएं भी तो क्यों ! नेकनामी का नशा अपने को कभी रहा भी नहीं। वे लाखों जतन, जो इस नेकनामी केलिए आदमी करता ही चला जाता है, अपनी हद के बाहर ही समझिए। " 20

उनकी राय में जिसकी रिहाइश लाल डोरे का बाहर हो, वह तो एक ढीठ बच्चे की तरह लापरवाह हो जाएगा। अर्थात वह आज़ाद हो जाएगा। और कृष्णाजी का तो एक स्वतंत्र व्यक्तित्व है, किसी के बंधे- बंधाए रास्ते पर चलना पसंद नहीं करती है। उस स्वतंत्रता का पूरा उपयोग भी वह करती है। वह खुले में घूमना पसंद करती है। उनकेलिए कोई पूर्व निश्चित, निर्धारित प्रोग्राम नहीं है। रानी खेत जा रही है तो मन हो जाने पर भुवाली में उतरती है और वहाँ समय बिताती है। अपने इस स्वतंत्र व्यक्तित्व के कारण ही शायद वह अविवाहिता रहती है और अपने आपको सभी साहित्यिक गुटबंदियों से दूर रखती है। दोस्तों को भी वह अपनी स्वतंत्रता पर बाधा बनने नहीं देती। कभी दोस्तों से मिलती है, फिर दिनों, हफ्तों, महीनों केलिए चुप हो जाती है। फिर मन हो आने पर उनसे मिलती है।

समय समय पर उठ आती भावनाओं को माधवीकुट्टी बेरोक टोक बोल देती है। कभी पहले बतायी गयी बात से बिलकुल मेल नहीं खाती ।उनकी ये बातें कभी कभी समाज के नैतिक सदाचार के चौखट के बाहर भी कदम रखती है। भावनाओं के ईमानदार अभिव्यक्ति के आगे उन्होंने नेकनामी की परवाह नहीं की। सोबती जी के समान माधवीकुट्टी का भी एक स्वतंत्र व्यक्तित्व है, प्रेम हो, भावनाएँ हो या धर्म हो समाज द्वारा निर्धारित बंधे बंधाएँ रास्ते पर चलना वह पसंद नहीं

करती। अपना रास्ता वह खुद बना लेती है। इसे खुले आम व्यक्त करने में भी नहीं हिचकती। उन्होंने कहा है - " नारत्वि से जुडी सभी बुरी आदतें मुझमें है। सुरक्षा केलिए अदम्य इच्छा, सुन्दर वस्तुओं एवं इत्र से चाहत, मनाने और गर्व करने की शौक, वीर पुरुषों के प्रति मन में आराधना भाव, तालिका आगे बढ़ जाती है। " 21

जैसे सोबती जी के पात्रों के स्वभाव एवं आचरण के आधार पर लोग उनके स्वभाव, नैतिकता को आंकने लगे, ठीक उसीप्रकार माधवीकुट्टी पर भी लोग घोर अनैतिकता का आरोप करते हैं, उनकी रचनाओं खासकर मेरी कहानी को लेकर समाज में खलबली मच गई थी। कुछ लोगों का विचार है कि मेरी कहानी का अनेक संस्करण और पन्द्रह विदेशी भाषाओं में अनुवाद उसके साहित्यिक सौंदर्य के कारण नहीं बल्कि खुली यौनिकता के कारण हुआ। रुक्मिणी केलिए एक गुडिया नामक एक कहानी के खिलाफ नैतिकता के दावेदारों ने आवाज़ उठायी। बाद में वह सिनेमा बनी और जब दूरदर्शन संप्रेषित किया गया तो समाज में नैतिक च्युति होने का आरोप लगाया गया। उसके बारे में उन्होंने बताया है- " सच्चाईयों का सामना करने केलिए कोई तैयार नहीं है। पर उनकी अभिव्यक्ति करनेवालों की कडु आलोचना ही उनका मुख्य विनोद है। कुछ लोगों ने यह संदेह तक प्रकट किया कि अभिसारिका ओं की कथा कहनेवाली यह शायद लाल गली में रह चुकी होगी ? " 22

चित्रकला की बात है तो उनके चित्रों को लेकर भी यही आरोप है कि वह स्त्रीयों के नंगे चित्र भी अधिक खींचती है। चित्र कला के बारे में उन्होंने बताया है - " वहाँ भी यह शिकायत उठी कि मैं नग्न चित्र खींच रही हूँ । इसलिए हाल ही में खींची स्त्रियों को एक एक धोती भी पहना दी। " 23 वैसै माधवीकुट्टी आलोचना की कटुता के आगे नहीं ठिठुरती, लेकिन कभी कभी इससे दुखित होती हुई भी नज़र आती है। शायद इसलिए उन्होंने कभी यों कहा कि मेरी कहानी

आत्मकथा नहीं है। कभी उन्होंने स्वीकार किया है कि मेरी कहानी आत्मकथा है। लेकिन सभी जानते हैं कि यह कथन सफेद झूठ है।

कलाइयों तक ढ़ँके लिबास, काला चश्मा और साटनी पर्दों में अपने आप को छिपा कर रखते हुए भी कृष्णा जी दूसरों के हर पर्दे को भेदकर देखने की निगाह रखती है। ऊँचे तबके की बनावटी, फाशनबिल महिलाओं से लेकर, नए-रईस लोगों की अदाओं और उजड्ड क्लर्क, टैक्सीवालों का जीता जागता वर्णन ये कर सकती है उनको डायलोग और भीतरी भावों को भी बडे सहज अंदाज़ से वे बयान करती है। 24 उनकी चाल - ढाल, बोल-चाल सबमें एक राजसी स्पर्श है। उनके व्यवहार में भी वह झलकता है। मात्र अपने सही मूड में ही वह दोस्तों से मिलती हैं. खुलकर बातें करती हैं। राजेंद्र यादव जी के शब्दों में - " आपको और उन्हें दोनों को फुरसत हो, वे सही मूड में हो उस समय कृष्णा जी व्यक्ति नहीं, सचमुच एक चीज़ या फिनोमिनन होती है। . . . . . और अगर माहौल अनुकूल न हो तो कृष्णाजी लकडी के कुन्दे की तरह बोझिल और चुप ..... " 25 उनके व्यक्तित्व की इस विशेषता के कारण साधारण व्यक्ति अक्सर उनसे मिल नहीं पाएगा। साथ साथ उनके व्यक्तित्व के राजसी स्पर्श भी उसे दूसरों से अलग कर देता है, आम आदमी उनके साथ बहुत खुला नहीं महसूस कर पाते। 26

शिष्टाचार के महीन, रेशम चादरों से वह अपने आपको जितना भी लपेटकर रखें, अंदर की गृहातुरता को वह ढक नहीं पाएँगी। इसके बारे में खुद कृष्णाजी ने लिखा है - " अगर हमें कभी भी अपनी गृहस्थी जुटानी होती तो घर में सबसे पहले लगता तंदूर। मिट्टी के बरतनों की लगतीं कतारें। कनलियों में गूँदती मैं आटा। चंगेरों में रखती घी-सनी रोटियाँ। और सोंधी गंधवाले सालन पकाती मैं हंडिया में। मेरे घर में दूध बिलाने की चाटियाँ होतीं। पानी भरने को घडे। बैठने को होतीं रांगली पीढ़ियाँ और परसने को होतीं सुतली की मंजियाँ। और हमसे पूछिए तो

गेहूँ की तंदूरी रोटी पर घी-मक्खन और धीमी-धीमी आंच पर पकी चांपों की इलाही गंध, इनके आगे दुनिया की सब नियामतें फीकी हैं। " 27 कृष्णाजी की राय में दूसरों की दृष्टि में वह एक मगरूर, घमंडी औरत है जिसका चमक दमकवाला लिबास है और अपने को दूसरों से अलग समझने का अंदाज़ है। लेकिन उनकी अपनी दृष्टि में वह एक सीधी सादी खुद्दार औरत है। वक्त और खुदा दोनों ही जिसपर ज़्यादा मेहरबान न थे, फिर भी अपने जिगरे के ज़ोर से जिंदादिल। 28 कृष्णाजी अविवाहिता है और अकेली रहती है। उनके व्यक्तित्व में शिष्टाचार का बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान है। उनका बेहद करीने से सजाया हुआ घर है। उनके चलने फिरने से लेकर हर बात में एक लापरवाह अंदाज़ है तो भी उनमें एक पेरपैक्शनिस्ट सलीका है। ऐसा लगता है कि अपनी अंतरंग बातों को किसी के सामने व्यक्त करना वह उचित नहीं समझती। दूसरों से हंसी मज़ाक और बातचीत के बावजूद भी कृष्णाजी ऐसी बेतक लत्तुफी नहीं करती जो उन्हें एकदम अंतरंग बना दे। 29

अपने आपको कभी न छोटा और न बहुत बडा समझने का अंदाज़ उनके व्यक्तित्व के सभी पहलुओं में विद्यमान है। इसी खासियत के कारण वह दोस्ती भी बराबरवालों से ही करना चाहती है। अपने आपको अपने ही परिधि के अंदर रखना चाहती है, लगभग एकाकी जीवन व्यतीत कर रही है। इसलिए उन्होंने कहा है - " वे नन्हे-नन्हे, मासूम क्षण, जो हर सुबह, हर सूरज की तरह, हर घर में ज़िंदा होते हैं, वे यहाँ नहीं है। यहाँ तो एक मैं ही हूँ। मैं ही। मैं, एक एहसास।एक पोशाक। एक ही दरवाज़ा, जिससे मेरी ही परछाई अंदर आती है, मेरी ही बाहर निकल जाती है। मुझसे ही सुबह शुरु होती है, मुझसे ही शाम। " 30 उनके अनुसार अपनी सत्ता को, अपनेपन में बरकरार रखने में भी एक हल्का सा नशा है। उन्हें

इसका भी अंदाज़ा है कि अपने इर्द गिर्द संबंधों का जाल बिछा न रखने से आदमी हर मामले में अकेला होता है। अगर किसी मौके पर सिर्फ इमदाद की ही ज़रूरत हो तो वह न मिल सकेगी। उनकी राय में यही वह अहसास है जो हर एक के अपनेपन को तराशता चला जाता है। इसप्रकार अकेलेपन के नशे के साथ उसके कसक को भी कृष्णाजी भली भांति जानती है, अपनी आत्मा में अनुभव करती है।

फिर भी कृष्णाजी के जीवन दर्शन में गम शब्द केलिए कोई खास स्थान नहीं है। उनकी यही ठिठाई ज़िंदगी के पचहत्तर सालों की लेखा जोखा में मौजूद है। अपनी सूखी ज़िंदगी के वीरान रास्तों में मिलनेवाले छोटी सी छोटी हरियाली को वे किसी भी खज़ाने से ज़्यादा कीमती समझती है। इतनी चाव से जीती है कि उसी से ज़िंदगी की भरपूर हरियाली महसूस कर सकें। उन्होंने अपने को किसी के साथ कभी नहीं बाँटा, इसलिए लौट पलटकर अपने ही बिंदु में खुद ही बनी रहती हैं। फिर भी उनका स्त्री सुलभ आकांक्षाओं से युक्त स्वतंत्र व्यक्तित्व है। उन्हें सीधे सादे लोग अच्छे लगते हैं। ऐसे लोग जिनकी आँखों में इन्सान की खुशियों,गमों,उम्मीदों, आस्थाओं का असली रंग रूप स्पष्ट झलकते हैं। उनकी राय में आदमी जितना ही ज्ञान-विज्ञान-मनोविज्ञान से लैस होकर बारीकी से ज़िंदगी को देखने समझने का दावा करता है, उतना ही ज़िंदगी से दूर होता चला जाता है। शायद इसलिए उन्हें ऐसे लोग पसन्द हैं जो अपने मन की भावनाओं को बेपरवाह प्रकट कर देती है।

सोबतीजी कहती है, कि उन्हें ऐसे लोग पसंद नहीं है, जिन्हें हर हिलते कपडे के नीचे कोई जिस्म ही नज़र आता है। उठी हुई बॉह खुजलाने को तत्पर और हर जिंदादिल औरत आदमी उन पर डोरे डालने की तैयारी में खडा दीखता है। एक के साथ एक जुडी छतोंवाले माहौल में शायद हवा और धूप पीता हर आकार भी उन्हें किसी न किसी में फंसा ही नज़र आता है। 31 सोबतीजी की

मान्यता है कि इन सभी परंपराओं के शिंकजे को तोड डालने की ताकत हर एक में होना है। अपनी-अपनी छतों पर ज़िंदगी की धूप सेंक सकने का अधिकार सभी को है।

माधवीकुट्टी की अपनी दुनिया है और उसमें उनकी अपनी सच्चाइयाँ भी हैं। वे हमारी सामाजिक सच्चाइयों व मर्यादाओं से निरंतर टकराती हैं। उनके मतानुसार धर्म सिर्फ एक पोशाक है। उससे भी बढ़कर पवित्र मन की सच्चाई ही प्रमुख है। धर्म परिवर्तन को महज वेष परिवर्तन मानते हुए उनेहोंने अपनी स्वतंत्रता का भी ऐलान किया है। अपनी रचनाओं के ज़रिए ही नहीं वैयक्तिक जीवन के ज़रिए भी वह पाठक को चकमा दे रही है। साहित्यकार की हैसियत से प्रतिष्ठित मूल्यों को धिक्कारते हुए अपने मूल्यों एवं सच्चाइयों की सृष्टि करती है। उनका ऐसा एक अखंड व्यक्तित्व है कि कभी स्वतंत्रता केलिए नाते रिश्तों की सभी बेडियों को काट देना चाहती है, उस घेरे के अंदर की सुरक्षा को ठुकराने केलिए तैयार भी है। लेकिन बाद में यही स्वतंत्रता उनकेलिए कैद बन जाती है। फिर स्वतंत्रता के बदले वे ही सुरक्षा चाहने लगी। वे कहती है- " स्वतंत्रता रूपी मिठाई खा खाकर मैं उलटियाँ करने लगी हूँ। अब मैं गुलाम बनना चाहती हूँ। . . . . . रेलवे प्लाटफॉर्म के लावारिस पारसल के समान मैं कब तक जिऊँगी ? मैं प्यार और संरक्षण पाना चाहती हूँ। " 32

दूसरों के द्वारा उनके विचारों एवं कार्यकलापों में टांग मत अडाने के कारण ही माधवीकुट्टी की सृजन शक्ति का विकास हुआ था। यद्यपि पढाई में पीछे रहने के कारण शादी करनी पडी तो भी उसे वे एक प्रकार से अपना सौभाग्य ही समझती है। जहाँ तक अपनी साहित्यिक ज़िंदगी का मामला है, वे मानती हैं कि शिक्षा त्यागने से ही वे लेखिका बन पायी हैं। उनकी राय में प्रचलित शिक्षा प्रणाली से व्यक्तित्व का मन कचरों से भरा कूडेदान के बराबर बन जाता है। सब कुछ

त्यागकर एक शुद्ध आदमी बननब बहुत मुश्किल है, इसलिए शिक्षा त्यागकर वे इन झंझडों से मुक्त हो गयीं, लेखिका बन पायीं।

घर एवं गॉव के नौकर लोगों के साथ धुलमिलकर रहने से माधवीकुट्टी के स्वभाव में यह खासियत आई कि वह सहजता से दूसरों से व्यवहार करने में सफल हो गई। शिक्षित सफेदपोश वर्ग के बंधे बंधाए व्यवहार से मुक्त होने में वह कामयाबी निकली। उनकी तुलना में उन निम्न वर्ग के लोगों में वे बेडियाँ नहीं होते जो औसत दर्जे की साहित्य कृतियाँ व्यक्ति मन में पैदा करते हैं। रुलाई, हँसी क्रोध एवं दु:ख जैसे मन की भावनाएँ उनके त्वचा के ठीक नीचे रहते हैं। इसलिए वे जैसे के तैसे प्रकट होते हैं। अमीरी पर गर्व करनेवालों के मन की सडी गहराइयों में ये भाव कीडों के समान रहते होंगे। लेकिन दूर की एक माली से हवा के साथ आनेवाली हल्की बदबू के समान ही वे बाहर प्रकट होते हैं।

चित्रकला, कहानी या कविता जो भी हो मौलिकता को ही माधवीकुट्टी प्रमुखता देती है। विदेशी नमूनों या विचारों का अनुकरण करने में उन्हें कोई रुचि नहीं। उन्होंने हमेशा प्यार को ही खोजा है। प्यार पाने की अदम्य इच्छा ही उसे हमेशा आगे बढ़ाती रहती है - " ज़िंदगी से मुझे कोई शिकायत नहीं। क्योंकि मैं ने जितना माँगा, उससे कई गुना ज़्यादा ज़िंदगी ने मुझे दिया। " 33 लेकिन यौवनावस्था में लगी बीमारी, जीवनानुभव और आलोचना के तीखे बाणों से जख्मी दिल से माधवीकुट्टी ने यह भी बताया है कि सभी जन्मों का दुख दर्द और सुख उन्होंने इस जन्म में ही अनुभव किया है। आगे एक और जन्म लेने की ज़रूरत नहीं पडेगी। पति और बच्चों से उन्हें बेहद प्यार प्राप्त हुआ है। लेकिन इन सारे वैभवों के बीच भी कभी कभी वे अकेलेपन से गुज़रती हुई भी दिखाई देती हैं। ये विभिन्न मानसिक मूड मे रहती हैं। उनके व्यक्तित्व की यह विशेषता है कि अपने इस विशेषता का पूरा एहसास उन्हें है। मेरी कहानी में उन्होंने लिखा है- " तीन चार

महीने तक मैं एक खास व्यक्ति बनकर जीती हूँ। उस समय मेरी शक्ल तक पहले से बदल जाती है। ये तो मेरी तस्वीरों से कोई भी समझ सकता है। रंग बदल जाता है। बीमारियाँ भी बदल जाती हैं। "34 इन सारी विडंबनाओं के बावजूद वे जीवन के प्रति आशावादी और स्वस्थ दृष्टिकोण रखती है। इसलिए वह बताती है - " प्यार ही मेरा धर्म है। मैं इस ज़िंदगी को बेहद चाहती हूँ। अगर पुनर्जन्म है तो मैं इस पृथ्वी में ही वापस आना चाहती हूँ। ह्रस्व है तो भी खूबसूरत फूल लगनेवाले उस नीरमातलम् के वसन्त को मैं चाहती हूँ । "35 अपनी महिला सुलभ निरीक्षण शक्ति और असाधारण स्मरण शक्ति से उन्होंने बचपन की यादें, नीरमातलम का वसंत, पगडंडी, वर्षों पहले, मेरी कहानी आदि कृतियों के माध्यम से अतीत के जीवन की जीती जागती दुनिया को हमारे सामने खोल दी है।

कृष्णाजी के स्वभाव की विशेषताओं की ओर ध्यान देने पर यह बात जाहिर होती है कि किसी भी चीज़ के हक में या बिलकुल खिलाफ वे अपनी राय नहीं गढ़तीं। दोनों के बीच का एक भाव या रास्ता वह अपनाती हैं। चाहे अपने वेश भूषा के बारे में हो, दोस्ती के या फिर खर्च करने का ढ़ंग हो, वे दूसरों से अलग अपनी खासियत रखती है। उनके सृजनात्मक व्यक्तित्व के संबंध में भी ये बातें बिलकुल खरी उतरती हैं। अपने लेखन के संबंध में उन्होंने लिखा है - " सस्ता या महंगा कबाड उठाते ही चले जाना एक शब्द की जगह दस इस्तेमाल करना एक इमेज की जगह विपरीत रंगों की भीड लगाकर पाठकों को भुलावे छलावे में डाल देना - न सिर्फ कम अच्छा लेखन है, वह लेखन है ही नहीं। " 36..... बहुत खींचिए तो लेखन का जुगाड भर है, असली लेखन नहीं। अब तक के लेखकीय जीवन के बारे में उन्होंने कहा है- "मैं यह दावा नहीं करती कि मैं ने बहुत कुछ हसिल किये हैं । केवल एक जोडी जूते ही मुझे प्राप्त हैं जो न बडे, न छोटे, सिर्फ सीधे चलने योग्य है।" 37

अपने आपको न बहुत बडी व छोटी समझने की ढिठाई उनके लेखकीय व्यक्तित्व के संबंध में भी बिलकुल सही है। कृष्णाजी के लेखन के बारे में राजेन्द्र यादवजी ने कहा है - " मोती चुनना, पच्चीकारी या ज़रदोज़ी की महीन-नफीज़ कारीगरी. . . . . शब्दों को कोई भी ऐसा नाम दे सके तो हिंदी में वह सिर्फ कृष्णाजी ने किया है। एक-एक शब्द, वाक्य, कॉमा, फुलस्टॉप जैसे हफ्तों के परिश्रम से आया है। वे बडे परफैक्शनिस्ट हैं। अपनी कलम से कभी भी उस चीज़ को बाहर नहीं आने देंगी जिसकी सारी नोक-पलकें उन्होंने दुरुस्त न कर ली हों। . . . . . लिखने को लेकर उनकी निष्ठा या पूजा जैसी आस्था ज़रूर कहीं उनके सारे व्यक्तित्व में ऐसी बात पैदा की है कि सम्मान जगाती है। " 38

कृष्णाजी की पचास सालों की साहित्यिक उपलब्धियाँ संख्या में बहुत अधिक नहीं है। बादलों के घेरे, डार से बिछुडी, मित्रों मरजानी, ज़िंदगीनामा, ए लडकी, दिलो दानिश, समय सरगम आदि उनकी रचनाएँ हिंदी कथा जगतमें जगह पा ली हैं। उनकी रचनाओं के प्रकाशक का विचार है - " बहुत कम लिखती हैं और इसे ही वह अपना साहित्यिक परिचय भी मानती हैं। आज तक जो सफर उनके लेखन ने तय किया है- वह उनके जाने उनके लेखन की गंभीरता और सुथरापन मात्र है। समय को लाँघ जानेवाला महान लेखन ऐसे लेखन से कहीं अधिक बडा होना चाहिए।- साहित्य को जीने और समझनेवाले हर आस्थावान व्यक्ति की तरह एक सत्य उनके निकट हमेशा उजागर रहता है। "39 इसके बारे में खुद कृष्णाजी ने लिखा है - " किताब की जैकट पर जो कहा गया है- वह इतना सच है कि उससे बडा कोई दावा अपनी ओर से नहीं है। . . . . . अपने निज के मामले में कुछ गलतफहमियाँ भले पाल लूँ लेकिन अपने लेखन और उसकी सीमाओं के बारे में मुझे कोई मुगालता नहीं। लिखने की कभी कोई जल्दी नहीं होती, कोई हडबडाहट नहीं होती। "40 लेकिन कृष्णाजी की सफलता इस बात में है

कि उनके लेखकीय प्राप्ति का वज़न भले ही कम हो, उनकी रचनाओं केलिए एक अलग पाठक वर्ग हमेशा कायम है।

कृष्णाजी किसी प्रेरणा या बाहरी दबाव से नहीं लिखतीं। वे उसी वक्त लिखती हैं, जब लिखने के सिवा कोई और चारा न रह जाय। वह बताती है कि एक ज़ालिम-सी तटस्थता उनके दिलो-दिमाग पर कब्जा किए रहती है। उससे छुटकारा मिल पाना बहुत मुश्किल है। इसी वजह से एक बहुत बडा ,वक्त खाद बनकर रह गया। उनके अंदर-बाहर, आगे-पीछे घटित बातें जब किसी एक लम्हे में सिमटकर आँखों के आगे ढिठाई से ठिठक जाता है, तो हारकर कलम के तेवर उठाने केलिए कृष्णाजी तैयार हो जाती है। उनकेलिए लेखन का समय बडी मुश्किल के दिन होते हैं और बडी मुश्किल से गुज़रते हैं। आस पास के परिवेश से जो निगाह में अटक जाता है उसे दिल दिमाग से तोल-परख कुछ गढ़ने बैठ जाती हैं। हाथ की मिट्टी को सम करती हैं., ठोक पीटकर देख लेती हैं और फिर वह सफर शुरू होता है, जिसे लिखना कहा जाता है। फिर कृष्णा की लेखन तो मिट्टी से सुंदर सुंदर मूर्तियाँ बनाने की कला के समान ही है। वह बताती है - " ऐसी कहानियाँ, उपन्यास कभी नहीं लिख पाती जिसका ब्यौरा या कथानक लिखने से पहले ही मुझे मालूम हो जाए। जहाँ कुछ ढूँढ लाने का डुबकी लगाकर पा लेने का आश्चर्य न हो तो उसे कलम से लिखना नितांत बेमानी लगता है। ज्योंही रचना की कडियाँ मेरी आँखों के आगे घूमीं, खोज करने की, संघर्ष करने की मेरी गरमी मर जाती है। "41

कृष्णाजी की लेखक और लेखन संबंधी निश्चित धारणाएँ हैं। वे मानती हैं कि छोटी बडी हदबंदियों के बावजूद साहित्य ही वह व्यापक साझेदारी है जिसमें कोई भी अनुभव व्यक्ति को निजी चिंताओं से उबारकर उसे एक व्यापक संदर्भ से जोडता है। लेखक को अपनी यात्रा कोरे आदर्शों की ढलानों और ऊँचाइयों में ही संपूर्ण नहीं करनी होती। उसका सफर ऐन ज़िंदगी के बीचों बीच गुज़रता है।

उसकी मंज़िल इंसान की जुर्रत और जीवट का लहू है जो निरंतर संघर्षों में बहता है। उसका खुदा इन्सान है। वही सचमुच उसका भगवान है। साहित्य के संदर्भ में लेखक को अपनी आत्मा में उगे स्वर्ग और नरक दोनों को एक दूसरे के करीब लाना है। साक्षात्कार और आमना-सामना करवाना है। ये अपनी अपनी तासीर में एक दूसरे से ज़्यादा अलग नहीं। दोनो ही इन्सान के दिमाग और व्यवस्था की उपज हैं। चारों ओर व्याप्त यथार्थ में ये दोनों हमारे जीवन को घेरे हुए हैं। दोनों के नाम पर दो खेमे गाड़े रखना साहित्यकार के हक में नहीं । साहित्य का स्थान इन सभी के ऊपर हैं। वह विरोधों पर या छोटे बडे समझौतों पर भी नहीं, ज़िंदगी की व्यापक साझेदारी पर खडा है। वे लिखती है- " ऐसा नहीं कि लेखक जो चाहे वही देखे- वही सुने-ऐसा भी नहीं कि जो न चाहे उसे न देखे-न सुने- लेखक के नाम पर तो यह गुनाह होगा। लेखक को तो न स्वर्ग के नाम पर कुछ अंकित करना है न नरक के डर से, उसे खरी नज़र से ज़िंदगी को जीनेवालों को पढ़ना है और कलम से उकेरकर सत्य को चुनते चला जाना है। " 42

कृष्णाजी की सृजनात्मकता की बहुत बडी खूबी यह है कि वे जिस चीज़ को चुनती हैं, उसके संस्कार, मिजाज़ और तमाम रख रखाव से काफी वाकफियत रखती है। फिर अपने हाथों से वह शब्दों के हीरे-मोती ही समेटती है। हर शब्द का एक जिस्म, एक आत्मा और एक गंध होता है। लिखते वक्त यह सब कुछ ऐसी बारीक धार पर चलता है कि अपने आपमें एक जादू सा मालूम देता है। ये कलाकार के सार्थक क्षण होते हैं। उन्हें कहीं से तोडकर या चाहने पर पाए जा सकते हैं। हालांकि ये हमेशा कलाकार के दिल के आसपास जिया करते हैं तो भी उनकेलिए बरसों इंतज़ार करना होता है। उसकी बेखबरी में कभी कभार ये उसके दिल का दरवाज़ा खटखटाते हैं और लिखने की सूरत में प्रकट होते हैं। कृष्णाजी ने कहा भी है- " मेरे सृजन की कुंजी किसी आसक्ति में नहीं। राग प्यार में भी नहीं।

निहायत ठंडे विरण में, गहराई से चीज़ों में डूबकर पूरी तरह उनसे अलग हो जाने में। किसी भी कृति को आंकने-बाँधने की यह लंबी दुरूह प्रक्रिया न कभी आसान हुई न बदली। "43 लिखने के दौरान की अपनी मानसिकता के बारे में उन्होंने कहा है- " लिखनेवाले की हालत यह कि कुछ आसमान पर, कुछ पाताल में। कुछ अपने अंदर, कुछ कहानी के। सच तो यह है कि लेखक और कहानी, दोनों की रूह मेज़ के आसपास भटकती रहती है। "44

अपने लेखन एवं पात्रों के प्रति सोबतीजी पूरी ईमानदारी प्रकट करती है, इसलिए वे महसूस करती हैं कि वे नहीं लिख रही हैं, कोई और लिख रहा है- " आप यह दावा करने चाहते हैं कि लिख रहे हैं, तो कहानी के पात्र आपको खबरदार कर देते हैं कि आप नहीं साहब, हम हैं जो आपसे लिखवा रहे हैं। "45 कृष्णाजी अपने और लेखन के बीच सिर्फ शिष्टाचार का नाता ही रखती हैं। न उसके बारे में ज़्यादा सोचती है, न उसे अपने पर छा जाने देती हैं और न ही उसे अपनी आँखों पर बिठाती हैं। उन्होंने लिखा है - " लिख डालने के बाद मेरा रिश्ता मेरे लेखक से बिलकुक ठंडा हो जाता है। एक दूसरे को जी चुकने के बाद हम साक्षी दिशायें छोड देते हैं। एक दूसरे के रास्ते से हट जाते हैं। कुछ ऐसी आखिरत का भाव कि बीच में जो कुछ भी था-खत्म हो चुका। शेष हो चुका। " 46

लेखक होने के नाते उनकी ठोस मान्यता है कि कामयाब आदमी और कामयाब लेखक के रास्ते यकीनी तौर पर अलग-अलग हैं। कृष्णाजी का ऐसा व्यक्तित्व है कि जहाँ भी जाएँ, अपने आसपास पर वे गहरी निगाह रखती है। इसलिए आम लोगों से मिलकर उन्होंने जीवन के बारे में बहुत कुछ प्राप्त कर लिया जो किसी किताब में उपलब्ध नहीं है। इन साधारण लोगों में ज़िंदगी से जूझने की सामर्थ्य, संघर्ष कर सकने का जीवट, जिंदगी से प्यार, रोने और रुलाने के बहाने, छोटी छोटी खुशियाँ, मज़बूरियों और विवशताओं के गहरे कटाव जैसी विशेषताएँ हैं

जो उनके दिल के सामने उगती है, पकती है और कट जाती है। ऐसे लोग ही अपने आसपास की दुनिया से अपने होने को पहचानते हैं। एक लेखक की हैसियत से कृष्णाजी एक दूसरे सिरे से बाहरवाली दुनिया को परखती है, पहचानती है । फिर इसी जिंदगी को दुबारा साहित्य केलिए बाँध लेती है।

कृष्णाजी के विचारानुसार साहित्य और कला के क्षेत्र में नैतिकता की समस्या को तूल देना मुनासिब नहीं है। तथाकथित नैतिकता और धर्म की चौखटों के बाहर मानव जीवन का एक बहुत बडा हिस्सा फैला पडा है। उसकी उम्मीदें, आस्थाएँ, उसकी कमज़ोरियाँ, प्यार और आर्थिक संघर्ष भी प्रमुख हैं। इन सबको साहित्य में स्थान देना ही है। उन्हें धर्म या नैतिकता के नाम पर छोड देना, या किसी दायरे से बाहर कर उस पर फैसले देना मुनासिब नहीं। साहित्य और कानून की निगाह एक जैसी नहीं हो सकती । साहित्य जीवन का दर्पण है, जिंदगी की बन्दिश नहीं । यह अलग बात है कि कला का एक आंतरिक संयम होता है, बंदिश होती है, जो कला के बहाव चढाव को खुद ही सहजती समेटती है। सत्य को अपने में संजोती है और उसे खुलेपन में पनपने देती है। कृष्णाजी ने लिखा है- " सच पूछिए तो जिंदगी और जिंदगी जीनेवालों की बेशुमार तहें ऐसी हैं, जिन्हें कानी आँख नहीं देख सकती। अपने को अपने ही तंग,छोटे दिल से आज़ाद करना बेहद ज़रूरी है। साहित्यकार के निकट यह पहली शर्त है। सिर्फ वही न देखे जो सतह के ऊपर दीखता है। वह भी जाँचे, जो दीखता नहीं है और तह के नीचे है। अंधी आँख का साहित्य साहित्य नहीं, खिडकीबाजी है। "47

अपनी रचनाओं में कृष्णाजी ने आर्थिक असुविधाओं और नैतिक अनैतिक रूढियों को नहीं माना। अपनी ही जिंदगी को सुलझाते, उलझाते, बढ़ते-लौटते अपने में तल्लीन उनके पात्रों केलिए सामाजिक मान्यताएँ, श्लील-अश्लील, नैतिक-अनैतिक कहीं कुछ है ही नहीं। शायद ही उनके किसी पात्र ने किसी संस्कार,

रूढि या मूल्य की आलोचना की हो या उसे लेकर चिंतित हुए हो। वे अपनी जिंदगी जीने में तल्लीन हैं। उसीप्रकार उनके पात्रों की सामाजिक, आर्थिक स्थिति कभी भी उनकी सोच का विषय नहीं रहा। इसलिए काफी आसानी से कृष्णाजी को अनुत्पादक वर्ग या केवल उपभोक्ता समाज की भावनात्मक समस्याओं का कहानीकार कहा जा सकता है। उनके पात्रों को न जीविका की चिंता है, न समय की और समाज की। लेकिन इसे जिंदगी के प्रति ज़नानी, एकनिष्ठ, इकहरी और एकांत या सब मिलकर रूमानी एप्रोच कहना उचित है। 48

ऊँचे, तगडे, रौबदार मर्दाने व्यक्तित्व केलिए कृष्णाजी के मन में एक मोहमिश्रित सम्मान है। इसलिए छः फुट सरदारों या मिलिटरी के अफसरों का जब वे वर्णन करती हैं तो वह महज वर्णन नहीं होता, उसमें अभिवादन जैसी भावना भी जुड जाती हैं। उन्होंने शायद ही अपने किसी लेखन में आदमी को अपराधी या गलत ठहराकर औरत की स्थिति का वर्णन किया हो या उसके व्यक्तित्व और नियति केलिए पुरुष को जिम्मेदार माना हो। अर्थात पुरुष के प्रति असम्मान-जनक दृष्टिकोण उनमें नहीं है, और उनके पात्रों में न कहीं विद्रोही होने का अहंकार है, न किसी को छोटा करने का दंभ। पुरुष पात्रों के प्रति जो सम्मान-भरा प्यार उनके पात्रों में है, वह वास्तव में मानवीय लगाव के प्रति गहरी आस्था को ही प्रकट करता है।

इसप्रकार जिंदगी के प्रति रूमानी एप्रोच, हर तरह का और बहुत कुछ पढ़ने का नशा, बीच बीच में घूमना भटकना, अपने सिवा हर एक की रचनाओं पर बोलने का उत्साह, हल्के और छिछोरेपन का मज़ाक, इन सबका मिला जुला रूप है कृष्णाजी। इतने दिनों की साहित्यिक जिंदगी या दुनिया भर की जिम्मेदार, गैर-जिम्मेदार आलोचनाओं, टिप्पणियों पर ' अक्ल पर तरस खाने ' का भाव, लोगों की समझ का मज़ाक उड़ाना, हिंदी की पंडिताऊ गंभीरता और दुमंहेपन की खिंचाई

करना आदि के बावजूद अपनी रचनाओं के प्रति उनका रवैया ठीक वही है जो एक मां को अपने बच्चों के प्रति है। लेकिन उनकी हर पंक्ति में उनके खून की गरमाहट और रंगत है। राजेंद्र यादवजी ने कहा है- " कृष्णाजी जितना ही अपने को कपडों, शिष्टाचार और ' सॉरी थैक्यू ' के जाल जंजाल में छिपाती जाती हैं, उनकी रचनाओं की नारी उतनी ही निर्विरोध अपना कद उभारती जाती हैं- उनका रचनात्मक व्यक्तित्व उतना ही उजागर होता जाता है। " 49

माधवीकुट्टी तो साहित्य सृजन को जीवनचर्या मानती है। उनका साहित्य आत्मानुभूतियों का दस्तावेज़ है। उनकी कहानियाँ प्यार की विभिन्न राहें खोजती हैं, स्वतंत्रता के अनुभव क्षणों का अंकन करती है। उनका सृजनात्मक व्यक्तित्व पूरी तरह स्वतंत्र है। यह दर असल सामाजिक जीवन नियमों से पलायन नहीं है, उल्टे साहित्य के प्रति वफादारी बरतना है। अपनी रचनाओं के दौरान उन्होंने अपने आसपास के जीवन की नब्ज को पकडा है। उनमे जीवन के समग्र भाव पूरी जीवंतता और पवित्रता के साथ छलकती है। साहित्य की परंपरागत रीति, आचार संहिताएँ और विचार धाराओं से अलग हटकर उन सबसे लडते हुए उनकी रचनाएँ सच्चाई की निडर घोषणा है। तद्वारा उन्होंने साहित्य को एक नया सौंदर्यबोध प्रदान किया। अपनी इस मौलिकता ने उन्हें अंतर्राष्ट्रीय साहित्य में अपनी एक अलग अहमियत प्रदान की है।

माधवीकुट्टी चुनिंदा शब्दों से पाठकों के मन में चित्र खडा कर देने में माहिर है। अत्यंत सरल शब्दों से मर्मस्पर्शी भावों के उन्मीलन में भी वे सक्षम हैं। माधवीकुट्टी और उनकी रचनाएँ हमेशा कडु आलोचना के विषय रहे हैं तो भी उनकी रचनाओं का एक विशाल पाठक गण हैं। ये साहित्य के विभिन्न वाद, विभिन्न सामाजिक मान्यताएँ एवं बौद्धिकता से अलग मन की सहज अभिव्यक्ति पर मोहित होनेवाले हैं। माधवीकुट्टी के विचार में जब पौधा बडा होकर पेड बन जाता है, फल

देता है, ठीक उसी प्रकार जब हमारे मन परिपक्व हो जाते हैं तभी कविता जन्म लेती है। अपनी कविता का संदेश एवं विचार धारा को लेकर भी उनकी राय है कि कविता नन्हे बच्चे की भाँति है और वह क्या संदेश दे सकता है? वह कौन सी विचारधारा दुनिया के आगे घोषित कर सकता है? बच्चे अपने खून के हिस्से हैं।

उनके समान कविता को भी हम दुनिया को समर्पित करते हैं। क्या वह समय का अतिक्रमण कर सकेगा ?, यह भविष्य का फैसला है। जब कविता पूरी हो जाती है तब वह कवि की अपनी नहीं रह जाती है। हर व्यक्ति उसे अपनी अपनी रीति से पढता है, आस्वादन करता है। कुछ तो ठुकरा देते हैं, कुछ लोग नया अर्थ खोज लेते हैं, उसप्रकार वह दुनिया की अमानत बन जाती है। 50 मात्र कविता पर ही नहीं कथा साहित्य पर भी यह विचार सही निकलता है। कविता हो या कहानी अपनी भावनाओं को ही वे शब्दबद्ध करती हैं। उसमें कोई सन्देश या विचारधारा को प्रस्रय देना उनका इरादा नहीं है। उन्होंने लिखा भी है - " लेखक का प्रथम कर्तव्य अपने आप को ही एक बलिपशु बनाना है। ज़िन्दगी के अनुभवों से बचने का प्रयत्न उसे कभी नहीं करना चाहिए। बर्फ की ठण्डक और आग की गरमाहट का अनुभव उसे होना चाहिए। वह आपसे नहीं आपकी आगामी पीढी से बात करता है। यह बात हमेशा अपने मन में रहने के कारण ही आपके पत्थरबाज़ी से दर्दीले होने पर भी वह खामोश नहीं रहता। "51

यद्यपि माधवीकुट्टी ने स्वीकार किया है कि कहानी लेखन उनका पेशा है और कविता आत्माविष्कार तो भी उनकी हर एक रचना उनके खून से जन्मी है। उनके अपने अनुभव ही रचना के विषय रहे हैं। बहुमुखी प्रतिभा संपन्न होने के कारण एक ही अनुभव के आधार पर वे कविता और कहानी लिखने में सक्षम हैं। इसलिए उनकी रचनाओं में विषय की दृष्टि से एक प्रकार की एकता हम

देख सकते हैं। लेकिन उसे एकता से अधिक सच्चाई की निकटतम अभिव्यक्ति मानना ही उचित है। उनकी रचनाओं में उनका व्यक्तित्व ही झलकता है।

माधवीकुट्टी ने बताया है कि जीते समय वह लिख नहीं पाती और लिखते समय जी नहीं पाती। जीना या लिखना । दोनों एक साथ संभव नहीं। 52 उनकी राय में साहित्यकार यथार्थ जगत और एक छाया जगत-जो उसका प्रतिबिंब है- में एक साथ जीता है। इन दोनों में एक साथ जीते हुए भी वह आगे बढ़ सकता है। काल्पनिक जगत से मिलनेवाली शक्ति यथार्थ जगत केलिए उपयोगी हो जाती है। यथार्थ जगत के अनुभवों के साथ उन्हें जोड सकते हैं। साहित्यकार का व्यक्तित्व द्वंद्वात्मक होता है। उनकी प्रतिभा असाधारण होती है। साधारण मापदंड से प्रतिभावानों को आँक नहीं सकते। कतिपय संदर्भों में जब उसे अपना जीवन अपूर्ण लगता है तब वह उसे कल्पना द्वारा पूर्ण बनाता है। ऐसी बातें जोडकर पूर्णता लाता है जो वास्तव में घटित नहीं होती है। इसी अंदाज़ में वह खून खराबे एवं कोठियों पर भी लिखने में सक्षम हो जाता है।

उनकी राय में कला और साहित्य का आत्यंतिक लक्ष्य संसार में शांति की स्थापना करना है। शांति ही सर्वप्रमुख है। इसलिए वह मानती है कि अपने चारों ओर की घटनाओं के बारे में भी लेखक को लिखना चाहिए। लेखक जो कुछ लिखता है वह इतिहास भी है। वह मात्र कवि या साहित्यकार ही नहीं बल्कि इतिहासकार भी है।

माधवीकुट्टी की कहानियों को कालक्रमानुसार तौल परख सकते हैं तो भी मूलतः उनकी कहानियों की अंतर्वस्तु प्यार की खोज है। उनकेलिए साहित्य जीवन के प्रति अदम्य अभीप्सा है। शरीर के क्रिया कलापों के आधार पर जीवन या दांपत्य जीवन को अभिहित करना उचित नहीं है। नैतिकता तो शरीर की अपेक्षा मन में होनी चाहिए। पवित्रता की बात भी ऐसी ही है। मानसिक व्यापार तो कुछ भी हो

सकते हैं, आचरण वाजिब नहीं है, यह नज़रिया कपट है। जीवन तो तभी नैतिक बनता है जब मन नैतिक होता है। व्यक्ति जीवन और समाज को घेरे इस कापट्य के खिलाफ उन्होंने अपनी रचनाओं के ज़रिए आवाज़ उठायी है- " समाज की नैतिकता की नींव मानव शरीर है जो नश्वर है। मेरा विश्वास है कि अनश्वर आत्मा में, अगर उसे खोजने की हिम्मत नहीं है तो कम से कम मानव मन के आधार पर बनाई गई नैतिकता ही उत्तम एवं पूजनीय है। समाज रूपी झूठी नानी द्वारा बनाया गया कसाईबाड़ा है सचमुच सदाचार। " 53 ..... इस झूठी नैतिकता को धिक्कारती हुई वे ज़िंदगी और सृजन के रास्ते में आगे बढ़ी थीं। यद्यपि आलोचना की पैनी धार से जख्मी हुई है तो भी कभी भी पछतावा करती हुई वे नज़र नहीं आती - " झूठ बोलकर, अभिनय, विश्वासघात और दूसरों की घृणा करके मैं भी इस नैतिकता के कम्बल के नीचे गरमाहट और चैन पा सकती थी। लेकिन, मैं कभी एक लेखिका नहीं बन पाती। मेरे गले में अटके सत्य कभी रोशनी में नहीं आता। "54

परिवार के रूढीवादी सदस्यों को वे परेशान नहीं करना चाहती थीं। इसलिए उन्होंने उपनाम माधवीकुट्टी स्वीकार कर लिया था। श्री. पी.पी. रवीन्द्रन के साथ बातचीत के दर्मियान माधवीकुट्टी ने बताया है - " मेरे परिवार में, मैं एक मिसफिट थी। साहित्य सृजन मेरेलिए निगूढ़ एवं बुरी आदत के बराबर था। जैसे लडके चोरी छुपके गुसलखाने में धूम्रपान करते हैं; वैसे ही। नानी को दुःख पहूँचाना मैं नहीं चाहती थी जिसे मैं बेहद प्यार करती थी। लगता है मरते वक्त तक उन्होंने पहचान नहीं ली कि मैं ही माधवीकुट्टी हूँ। "55 उनकी कलम तो बिना लगाम के घोडे के समान है। कभी कभी विश्राम करते वक्त भी अगर कोई विषय या विचार मन में आ जाए तो विश्राम एकाएक खतम हो जाता है और झट उठकर लिखने लगती है। माधवीकुट्टी ने बचपन से ही बाहरी दुनिया को निहारा-परखा और

पहचाना भी है। फिर अपने और पराए दोनों की ज़िंदगी को आत्मसात कर लेती है। " लिखते वक्त मैं पात्रों के मानस की तह तक घुसकर पात्र बन जाती हूँ। उनकी अंधकारमय दुनिया की ओर मैं तीर्थयात्रा करती हूँ। . . . . मेरी दृष्टि में सब अच्छे हैं। वैसे क्या अच्छा है, क्या बुरा है, यह इस बुढ़ापे में भी मुझे नहीं मालूम। चोर एवं खूनी के मन से गुज़रना मैं ने पसंद किया था। मैं ने अपने सभी पात्रों के साथ इन्साफ किया है। "56

कृष्णा सोबती और माधवीकुट्टी के व्यक्तित्व में काफी समानताएँ दृष्टिगत होती हैं। समानता के परिप्रेक्ष्य में तत्कालीन परिवेश की प्रमुख भूमिका रही है। शहरी एवं ग्रामीण सभ्यता का प्रभाव दोनों में है। किताबों की दुनिया से नाता जोडने का अवसर दोनों को बचपन से ही प्राप्त हुआ था। साहित्यिक वातावरण का अनुभव यद्यपि दोनों ने प्राप्त किया है तो भी उसका अंधानुकरण किए बिना अपना एक विशेष भावजगत कायम रखने में दोनों सफल हुईं। दोनों ने पहले कविता का सृजन किया था तो भी बाद में कृष्णा सोबती कथा साहित्य की ओर मुडी और वहाँ अपना विशेष अधिकार जमा लिया। माधवीकुट्टी अंग्रेज़ी और मलयालम दोनों भाषाओं में क्रमशः कविता और कथा साहित्य में कलम चलाई। दोनों की परवरिश स्वस्थ आर्थिक परिवेश में हुई। सोबतीजी ने बताया है कि उनका पालन पोषण तत्कालीन नारी की स्थिति से भिन्न एक उदार वातावरण में हुआ था। इसलिए उन्हें जीवन के प्रति गमगीन दृष्टिकोण नहीं है। इसप्रकार एक कुलीन परिवार में माधवीकुट्टी का भी जन्म हुआ था। उनका परवरिश भी उदार वातावरण में हुई। लेकिन ज़्यादा भावुक होने के कारण और पश्चिमी पंजाब यानी कि उत्तर भारत की तुलना में केरल की सामाजिक स्थिति और पारिवारिक सभ्यता में कुछ भिन्नता होने के कारण माधवीकुट्टी को कुछ नियंत्रण का अनुभव यद्यपि हुआ है तो भी उनकी तत्कालीन केरल की नारियों की स्थिति से

काफी बेहतर थी। फिर भी केरल की सामाजिक सभ्यता के अनुकूल अपने परिवार के सदस्यों की नैतिक मान्यता को चोट न पहूँचाने केलिए माधवीकुट्टी ने उपनाम स्वीकार कर लिया। तो कृष्णा सोबती केलिए हश्मत सिर्फ एक कलमी नाम नहीं है, बल्कि एक आध्यात्मिक जोड है, अर्धनारीश्वर संकल्पना है।

कृष्णा सोबती और माधवीकुट्टी दोनों में समाज में व्याप्त किसी अत्याचार या रूढी के विरोध की प्रवृत्ति दृष्टिगत नहीं होती। या नारी की स्थिति का सुधार करने की भावना भी लक्षित- नहीं है। फिर भी दोनो की रचनाओं में तत्कालीन सामाजिक परिवेश का जीवंत चित्र मिलते हैं। उस सामाजिक परिवेश के अनुकूल बदले व्यक्ति मन की अनुभूतियों का चित्रण ही माधवीकुट्टी ज़्यादातर करती भी है। कृष्णा सोबती को लेकर भी यह बात लागू होती है फिर भी उन्होंने भारत विभाजन और सामाजिक परिस्थिति की पृष्ठभूमि में रचनाएँ की हैं। सामाजिक स्थिति से ज़्यादा उसकी विडंबनाओं और तनावों में पिसनेवाले मानव मन और स्त्री-पुरुष संबंधों का यथार्थ एवं नंगा चित्रण प्रस्तुत करने में दोनों की रुचि रही हैं। नारीवाद में भी दोनों पाश्चात्य नारीवाद का अंधानुकरण नहीं करती हैं। नारी को अपना नारीत्व बनाए रखना चाहिए, इस पर दोनों विश्वास करती हैं। स्त्री सुधार या पुरुष विरोध के बदले अपने नारीत्व का ऐलान करने में ही कृष्णा सोबती और माधवीकुट्टी का नारीवाद ज़ोर देता है।

टिप्पणियाँ

1. मलयाला मनोरमा, वार्षिक विशेषांक 1998, पृ 159
2. मलयाला मनोरमा, वार्षिक विशेषांक 1998, पृ 159
3. कृष्णा सोबती - सोबती एक सोहबत, पृ 406
4. कृष्णा सोबती - सोबती एक सोहबत, प 407
5. कृष्णा सोबती - सोबती एक सोहबत, प 408
6. टी. एन. ज़यचन्द्रन, कथयुटे पिन्निले कथा, पृ 136
7. स्त्री, स्वत्वम्, समत्वम्, माधवीकुट्टी पठनड.ड.्ल, माधवीकुट्टी से बात चीत- पी.पी.रवीन्द्रन
8. मलयाला मनोरमा, वार्षिक विशेषांक 1998, पृ 147
9. माधवीकुट्टी- एन्टे कथा, पृ 19
10. माधवीकुट्टी- एन्टे कथा, पृ 16
11. माधवीकुट्टी- वर्षड्.ड.लक्कु मुन्प, पृ 77
12. माधवीकुट्टी- एन्टे पातकल्, पृ 16
13. सं. कमलेश्वर- गर्दिश के दिन, पृ 89
14. सं. कमलेश्वर- गर्दिश के दिन, पृ 89
15. सं. कमलेश्वर- गर्दिश के दिन, पृ 89
16. राजेन्द्र यादव- औरों के बहाने, पृ 34
17. वनिता जनवरी 1-14 , 1999
18. माधवीकुट्टी - एन्टे पातकल्, पृ 43
19. सं. कमलेश्वर - गर्दिश के दिन,पृ 97
20. सं. कमलेश्वर - गर्दिश के दिन,पृ 97
21. माधवीकुट्टी - एन्टे कथा, पृ 54
22. मलयाला मनोरमा वार्षिक विशेषांक 1998 पृ 154

23. मलयाला मनोरमा वार्षिक विशेषांक 1998 पृ 157

24. राजेन्द्र यादव- औरों के बहाने, पृ 35

25. राजेन्द्र यादव- औरों के बहाने, पृ 34

26. राजेन्द्र यादव- औरों के बहाने, पृ 36

27. सं. कमलेश्वर- गर्दिश के दिन, पृ 88

28. सं. कमलेश्वर- गर्दिश के दिन, पृ 86

29. राजेन्द्र यादव- औरों के बहाने, पृ 36

30. सं. कमलेश्वर- गर्दिश के दिन, पृ 87

31. सं. कमलेश्वर- गर्दिश के दिन, पृ 102

32. कलाकौमुदी, पृ 6-7

33. मलयाला मनोरमा- वार्षिक विशेषांक 1998, पृ 159

34. माधवीकुट्टी-एन्टे कथा, पृ 107

35. मलयाला मनोरमा वार्षिक विशेषांक 1998, पृ 159

36. सं. कमलेश्वर-गर्दिश के दिन, पृ 89

37. I am not a great achiever, all I have acquired is a pair of shoes , not bigger, not smaller, just good enough to walk erect : कृष्णा सोबती, छवि संग्रह, पृ 16

38. राजेन्द्र यादव- औरों के बहाने, पृ 37

39. कृष्णा सोबती- सोबती एक सोहबत, पृ 399

40. कृष्णा सोबती- सोबती एक सोहबत, पृ 399

41. कृष्णा सोबती- सोबती एक सोहबत, पृ 399

42. कृष्णा सोबती- सोबती एक सोहबत, पृ 398-399

43. कृष्णा सोबती- सोबती एक सोहबत, पृ 400

44. सं. कमलेश्वर - गर्दिश के दिनस, पृ 90

45. सं. कमलेश्वर - गर्दिश के दिनस, पृ 90

46. कृष्णा सोबती- सोबती एक सोहबत, पृ 399

47. सं. कमलेश्वर- गर्दिश के दिन,पृ 105

48. राजेन्द्र यादव- औरों के बहाने, पृ 45

49. राजेन्द्र यादव- औरों के बहाने, पृ 46

50. मलयाला मनोरमा वार्षिक विशेषांक 1998, पृ 147

51. माधवीकुट्टी- एन्टे कथा, पृ 86-87

52. स्त्री, स्वत्वम् समत्वम् माधवीकुट्टी पठनड्.डंल्- माधवीकुट्टी से बात चीत, पी.पी . रवीन्द्रन

53. माधवीकुट्टी- एन्टे कथा, पृ 86,107

54. माधवीकुट्टी- एन्टे कथा, पृ 86

55. स्त्री, स्वत्वाम् समत्वम् माधवीकुट्टी पठनड्.डंल्- माधवीकुट्टी से बात चीत, पी.पी . रवीन्द्रन

56. मातृभूमि दैनिक,1998 अगस्त 9

अध्याय दो

कृष्णा सोबती और माधवीकुट्टी के रचनाकालीन परिवेश का अध्ययन

साहित्यकार की सृजन क्षमता के रूपायन में उनके परिवेश की महत्वपूर्ण भूमिका है। " समाज तथा परिवेश के सहचरत्व के बिना किसी भी प्रकार का सृजन संभव नहीं है। .....प्रामाणिक तथा ईमानदार रचना के मूल में रचनाकार का उसके परिवेश के साथ गहरे तथा आत्मीय संबन्धों की सघनता होती है। "1 रचनाकार के व्यक्तित्व में परिवेश बचपन से ही अमिट छाप छोड देता है और उनकी रचनाओं में वह एक मुहरबन्द सा रह भी जाता है। चाहे पात्र, घटना और जगह बदले रचना के पीछे कार्यरत लेखकीय परिप्रेक्ष्य समान रहता है। रचना के मूल में रचनाकार की अनुभूति कार्य करती है लेकिन जब रचनाकार की अनुभूति उसके परिवेश के साथ गहरे और आत्मीय स्तर पर संबन्धित रहती है तब रचना प्रामाणिक और ईमानदार बनती है। वह परिवेश से रचना का विषय स्वीकारता है और फिर रचना में उसकी पुनर्रचना करता है। दर असल तत्कालीन सामाजिक, राजनीतिक तथा आर्थिक परिस्थितियों का मिला जुला रूप ही परिवेश है। यानी " रचनाकार अपने युग की उपज होता है। अपने युग की राजनैतिक, आर्थिक, धार्मिक तथा सांस्कृतिक परिस्थितियाँ उसके मानस को निर्मित करती हैं। समाज का

वह काल खण्ड रचना में अछूता रह ही नहीं सकता। लेखक किस प्रकार उसे अपनी रचनाओं में उभारता है, यह उसकी दृष्टि और अनुभव पर निर्भर करता है।"2 अतः कृष्णा सोबती और माधवीकुट्टी की रचनाओं का सही मूल्यांकन के लिए उनके सृजन काल की परिस्थितियों का आकलन करना ज़रूरी है।

सामाजिक परिस्थिति-

सदियों की गुलामी के बाद यद्यपि अंग्रेज़ों से हमें स्वतंत्रता तो मिली मगर भारत का बंटवारा हुआ। भारत विभाजन समस्त देश के लिए भीषणतम त्रासदी रहा था। उसकी वजह हमारी संस्कृति, प्रकृति, अखण्डता तथा मानवीय संबंध झकझोर हो गये थे। लाखों निर्दोष, साधारण नागरिकों का जीवन सांप्रदायिकता की आग में झुलस गया। उनके अरमान, संपत्ति, सभ्यता-संस्कृति, वर्तमान-भविष्य सब कुछ सांप्रदायिकता की शोले में राख हो गए। एक ही भू भाग में मिल जुलकर निवास करती जनता दो खण्डों में बंट गयीं और आपस में बैर रखने लगीं। एक ही संस्कृति में पली-ढली, समान भाषाएँ बोलनेवाली जातियों का देशान्तरण व सांप्रदायिकता की लू में झुलसते हुए हिन्दुओं मुसलमानों और सिक्खों का स्वदेश त्याग, विश्व इतिहास की भीषण एवं अभूतपूर्व घटना है। विभाजन सचमुच स्थूल और भौतिक रूप में एक दुर्घटना नहीं थी, बल्कि लाखों करोडों को मानसिक, आत्मिक, विचारात्मक और भावात्मक स्तर पर गहरी चोट पहुँचाए मानवीय ट्रेजडी रहा था, और वह घाव बरसों के बाद भी भरा

नहीं है। हाल की गुजरात की वंशहत्या इसका सबूत है।

कहा जाता है गांधीजी की अहिंसा और असहयोग आन्दोलन से भारत स्वतन्त्र हुआ था, लेकिन विभाजन के दिनों और उसके बाद भी भीषण एवं नृशंस सामूहिक नरहत्या हुई। अहिंसा कहीं भी नज़र नहीं आई। सांप्रदायिकता की खौफनाक स्थितियों से बचने के लिए भारत को विभाजित किया गया था, लेकिन विभाजन के बाद भयानक सांप्रदायिक दंगे हुए और अमानवीय घटनायें घटीं। 1947 अगस्त से नवंबर तक के दौरान घटित सांप्रदायिक लडाई से फैले आतंक और भय हिन्दुओं, मुसलमानों और सिक्खों को दिनों तक सताते रहे। लाहौर, अमृतसर, जालन्धर, लुधियाना, दिल्ली, रावलपिण्डी, सिन्ध और गुडगाँव में भयंकर दंगे हुए। दिन दहाडे विभिन्न धर्म के लोग आपस में कत्ल करते रहे। पंजाब के मुसलमानों के घरों तथा मुसलमानों ने पाकिस्तान के लाहौर में हिन्दुओं पर आक्रमण किया। घरों में आगजनी हुई, स्त्रियों का अपहरण हुआ, बलात्कार की घटनाएँ घटीं। इन शैतानी हरकतों से संप्रदाय संस्कृति पर हावी हो गया। आम जनता को बंटवारे से कुछ लेना देना नहीं था, पर वे ही सांप्रदायिक राजनीति की शिकार बन गईं।

दंगोत्तर भीषण परिस्थिति एवं आर्थिक स्तर पर भारतीय समाज की नीच स्थिति के कारण चोरी, डकैती, आदि बढ गयी और यों पूरे समाज में अराजकता फैल गयी। बेकारी, निवास-स्थान, जनसंख्या में वृद्धि आदि से जुडी अनेक समस्याओं ने भी देश की प्रगति को

अवरुद्ध कर दिया। इन सभी समस्याओं को सुधारने में पंच वर्षीय योजनाएँ भी असफल रही गांव एवं नगर का अंतर बढता रहा। महंगाई, शिक्षा एवं आवश्यक वस्तुओं के अभाव से ग्रामीण जनता परेशान थी। ग्रामीण नौजवान नौकरी की तलाश में शहर की ओर प्रस्थान करने लगे। फलतः शहरों की आबादी बढने लगी। नगरों में रोज़गार के अवसर तो प्राप्त थे, पर शहरी जीवन समस्यओं का आगार रहा; जिनमें आवास की समस्या प्रमुख रही। शरणार्थियों के आने के बाद यह समस्या और भी विकराल हो गई। शहरों में चोरबाज़ारी, रिश्वतखोरी, भ्रषटाचार घोटाला आदि से सामाजिक जीवन पूर्णतः दूषित हो गया। मतलब परस्ती, स्वार्थता व पक्षधरता की वजह व्यक्ति का मन संकुचित हो गया और वह अपने पडोसी को दुश्मन ही नहीं, अपने अस्तित्व तक के लिए खतरा मानने लगा।

राजनीतिक परिस्थिति

भारत में अंग्रेज़ों के आने के पहले ही विदेशी आकर बस भी गए थे। सदियों तक मुसलमानों का शासन यहाँ चलता रहा, पर हिन्दुओं और मुसलमानों का आपसी संबन्ध वैमनस्यपूर्ण नहीं था। जैसे नेहरूजी ने उल्लेख किया है- ' गांव के सीमित घेरे में भी हिन्दू मुसलमानों के गहरा संबन्ध था। वर्ण व्यवस्था कोई रुकावट नहीं डालती थी और हिन्दुओं ने इस्लाम को एक जाति की हैसियत दी थी। हिन्दुस्तान के ज्यादातर मुसलमान हिन्दू धर्म से आए थे। वे मिल-जुलकर शांति के

साथ एक कौम के लोगों की तरह रहा करते थे, एक दूसरे के जलसों और त्योहारों में सम्मिलित होते थे, एक बोली बोलते थे, और बहुत कुछ एक ही ढंग से रहते थे, और जिन आर्थिक समस्याओं का उन्हें सामना करना पडता, वे भी एक से थे। " 3

यह निस्तर्क बात है कि भारत का प्रमुख धर्म हिन्दू धर्म है। मुस्लीम शासन के बावजूद इसमें अंतर नहीं आया है।-उनके शासनकाल में कोई पक्षधरता नहीं थी। 4 लेकिन अंग्रेज़ों के आगमन के बाद इसमें बदलाव आया। उनकी कूटनीति के फलस्वरूप मुस्लीम शासकों के बारे में यह प्रचार किया गया कि मुसलमान शासक हिन्दुओं पर अत्याचार कर रहे हैं। स्वतंत्रता संग्राम के दौरान यह बात और भी तीव्र हो गयीं। इससे हिनदुओं में धार्मिक राजनीति की भावना जाग उठी। इसके फलस्वरूप मुस्लीम शासकों के आपसी युद्ध को सिर्फ उनके बीच का मामला माना गया जबकि हिन्दू और मुस्लीम शासकों के बीच के युद्ध को हिन्दू राज्य की स्थापना का मुहिम माना गया।

इसके अलावा 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम में हिन्दू मुसलमान एक साथ अंग्रेज़ों के विरुद्ध लडे थे जिसके कारण अंग्रेज़ों को वांछित विजय प्राप्त नहीं हुई थी।ब्रिटिश सरकार के 1935 के स्वायत्त शासन कानून को विभाजन की राजनीतिक कारण मान सकते हैं। इसके अन्तर्गत 1937 के आम चुनाव में कांग्रेस को भारी विजय प्राप्त हुई थी और मुस्लीम लीग बुरी तरह से पराजित हुई थी। शासन के दौरान

कांग्रेस ने मिली जुली सरकार बनाने या मुस्लीम लीग को मुसलमानों की प्रतिनिधि मानने से इनकार किया था, जिससे मुसलमानों में गहरा असन्तोष फैला और विभाजन की भूमिका तैयार हुई। इसलिए अपनी सत्ता कायम रखने के लिए उन्होंने हिन्दू और मुसलमानों के बीच विरोध बढाने की कोशिश की। इन सभी का परिणाम 1947 अगस्त 15 को भारत विभाजन के रूप में सामने आया।

स्वतंत्रता के बाद भी हमारे नेता लोग राजनीतिक क्षेत्र में, मानसिक एवं व्यावहारिक दृष्टि से अंग्रेज़ों के विचारों के गुलाम बनकर रहे। भारत में अंग्रेज़ों की भाषा,आचार - विचार, जीवन - व्यवहार एवं राजनीतिक संस्थाएँ उसी प्रकार बनी रहीं। आज़ादी के बाद की यह लोकतांत्रिक राजनीति, चुनाव, गुटबंदी, दल परिवर्तन, भ्रष्टाचार तथा चरित्रहीनता के दलदल में बुरी तरह से फंस गई। भारतीय राजनीति ने समाज को आतंकित कर दिया। स्वातंत्र्योत्तर भारतीय राजनीति की अस्थिर नीतियाँ राष्ट्र विकास में रुकावट बनकर खडी हो गयीं। इसके कारण अराजक तत्वों को बढावा मिला। सन् 1962 में देश की उत्तरी सीमा पर चीन द्वारा हुए आक्रमण से भारतीय जनजीवन बुरी तरह आहत हो गई जिससे जनता में डर, अस्थिरता, अनिश्चितता का बोध हुआ। चीनी आक्रमण के पश्चात सन् 1965 में पाकिस्तान ने तीन बार भारत पर हमला किया जिससे अपार धन और जन की हानि हुई। ' ताशकन्द समझौते के बाद प्रधान मंत्री लाल बहादुर शास्त्री की मृत्यु

हुई थी। पाँच वर्ष के अंतराल में घटित युद्ध और दो प्रधान मंत्रियों की मृत्यु से तमाम भारतीय जनता में मोहभंग की स्थिति उत्पन्न हुई।

सातवें दशक तक आते आते राजनीति इतनी विकराल हो गई कि लोकतंत्रवाद की दुहाई देते हुए तानाशाही चलाने की कोशिश हुई। उस समय तक कांग्रेस पार्टी का बोलबाला था। पर सन् 1969 में कांग्रेस पार्टी दो भागों में बंट गई। फलतः कांग्रेस की ताकत थोडी घटी तथा अनेक विरोधी दलों की ताकत बढ गई। सन् 1974 में जयप्रकाश नारायणजी ने ' संपूर्ण क्रांति ' का बीडा उठाया।इसकी यही परिणति हुई कि 26 जून 1975 को 'आपात काल' की घोषणा हुई। आपात काल की घोषणा भारतीय राजनीतिक इतिहास की त्रासद एवं अवसादपूर्ण घटना थी। इसके दौरान साठ करोड लोग काठ की पुतली बन गए थे। एक ओर देश में एक झूठा अनुशासन बरकरार रहा तो दूसरी ओर भयावह आतंक भी छा गया था। आम आदमी अपने निजी रिश्तों से भी आतंकित होने लगे थे। एक ओर जनता सबकुछ सह रही थी और दूसरी ओर कतिपय क्रांतिकारी वर्ग इसके खिलाफ लड भी रहे थे।

सन् 1977 मार्च के आम चुनाव में, आपातकाल की यंत्रणा और अत्याचार में चुप्पी साधी जनता ने व्यापक और तीव्र रोष प्रकट किया। इस चुनाव में कांग्रेस की बुरी तरह हार हुई और जनता पार्टी की जीत हुई। श्री. मोरारजी देशायी के नेतृत्व में 1977 से लेकर 1979 तक शासन चला। पर इसके पश्चात जनता पार्टी के सभी सदस्य पद के

लालच में आ गये और कतिपयों ने अलग-अलग पार्टी बना ली। अतः जनता सरकार भी विफल हो गई। फलतः मध्यावधि चुनाव हुआ और फिर एक बार कांग्रेस पार्टी की जीत हुई। आम जनता का पार्टी पर विश्वास उठ गया था। फिर पंजाब की सांप्रदायिकत की शिकार हो इन्दिरा गांधी शहीद बन गई। उसके बाद राजीव गांधी के हाथों सत्ता की बागडोर आ गई और लोगों के मन में एक बार-फिर आशाएँ बांधने लगीं। लेकिन वे भी शहीद हो गए। इस अस्थिरता के समय, फिर एक बार जनता पार्टी को सरकार बनाने का अवसर प्राप्त हुआ। लेकिन यह सरकार ज़्यादा दिन नहीं चली। फिर नरसिंह रावू के नेतृत्व में कांग्रेस ने सत्ता हासिल की। लेकिन नई आर्थिक नीति की वजह चुनाव में पार्टी की हार हुई। फलतः भाजपा सत्ता में आई। यों नवें दशक से भारतीय राजनीतिक परिवेश में अस्थिरता कायम रही।

कृष्णा सोबती और माधवीकुट्टी की रचनाओं में इस राजनैतिक परिवेश का सीधा प्रभाव पडा नहीं है। लेकिन इन राजनैतिक परिवेश के प्रभाव से परिवर्तित सामाजिक गतिविधियों का असर इनकी रचनाओं पर अवश्य पडा है। पर विभाजन के तुरन्त बाद घटित भीषण दंगे फसाद का कृष्णा सोबती पर तथा श्रीलंका के एल.टी.टी.ई के सशस्त्र का सीधा प्रभाव माधवीकुट्टी पर भी पड़ा है।

आर्थिक परिस्थिति

जिस समय अंग्रेज़ों ने भारत पर अपना आधिपत्य जमा

लिया था तब भारत की अधिकांश आबादी गाँवों में बसी हुई थी। नेहरूजी के अनुसार उस समय के भारतीय समाज के मुख्य लक्षण थे, स्वावलंबी ग्रामीण वर्ग, जातियाँ और संयुक्त कुटुम्ब व्यवस्था। समाज की .ये तीनों संस्थाएँ परस्पर पूरक थीं। औद्योगिक क्षेत्र में थोडा विकास हुआ था, इसके बावजूत स्वतंत्रतापूर्व भारत के नब्बे प्रतिशत लोग गाँवों में ही रहते थे। ये गाँव हमेशा प्रगति की दृष्टि से पिछडे ही रहे थे। हिन्दू समाज में संयुक्त परिवार प्रणाली चलती थी। यह तत्कालीन कृषिप्रधान समाज के अनुकूल ही था। भारतीय समाज की इस सुदृढ संस्था के कारण ही अंग्रेज़ों के आगमन के पूर्व और उसके पश्चात भी उसकी आर्थिक स्वरूप पर कोई प्रभाव नहीं पडा। यह सही है कि औद्योगिक क्रान्ति के फलस्वरूप औद्योगीकरण तथा यातायात की सुविधाएँ बढीं। पूँजीवादी शक्तियों की इच्छानुसार अनेक परिवर्तन आए जिनसे व्यक्तिवाद को प्रधानता मिली। छोटे परिवारों के अनुकूल सामाजिक व आर्थिक वातावरण में बदलावा आ गया। कृषिप्रधान अर्थ व्यवस्था में परिवर्तन होने के कारण उस पर आधृत संयुक्त पारिवारिक व्यवस्था भी विघटित होने लगी। संयुक्त परिवार विघटन का कारण पूँजीवादी व्यवस्था भी रही है जिसमें अधिकार व शक्ति को पैसे के अनुसार तौलता परखा जाता है और परिवार का मुखिया परिवार का सबसे बुज़ुर्ग सदस्य न होकर वह होता है जिसकी कमाई पर पूरे परिवार का संचालन होता है। परंपरागत ग्रामीण उद्योग धंधों एवं खेती बारी के ह्रास हो जाने के कारण गाँवों से

लोग नौकरी की तलाश में नगर की ओर प्रस्थान करने लगे। गाँवों के ज़मीन्दार वर्ग ही पठ लिखकर शहरों के पूँजीपति वर्गों में परिणत हो गए थे। खेतीहर वर्ग जो शहरों में आकर मज़दूर बन गए थे। पूँजीपति अधिक धनवान होते गए और मज़दूर अधिक कंगले । इन स्थितियों से नई आर्थिक समस्यायें उत्पन्न हुईं।

कृष्णा सोबती का जन्म पाकिस्तान के पश्चिमी पंजाब में हुआ था। विभाजन से उत्पन्न भीषण स्थिति के कारण ही उनके परिवार को पंजाब छोडकर दिल्ली आना पडा था। विभाजन की त्रासदी को उन्होंने तह तक भोगा है ओर उस डरावनी सच्चाई उनके दिल को कुरेदती रही है। सांप्रदायिकता की नृशंसता व उसकी आड में हुए लूट मार का दर्दनाक वर्णन सोबतीजी ने ' सिक्का बदल गया ' और ' मेरी माँ कहाँ ' नामक कहानियों में किया है। विभाजन के दौरान हुई भीषण नरसंहार और उससे उद्‌भूत आतंक का वर्णन भी ' मेरी माँ कहाँ ' में है। उस दौरान मानव अपनी सहज मानवीय भावनाओं को छोड सांप्रदायिकता की गिरफ्त में आ गए थे। फिर भी उसके अतल में बहती मानवीयता को सोबतीजी ने समझा है और अभि व्यक्त भी किया है। विभाजन राजनीतिक नफा का परिणाम था, सांप्रदायिकता की आग को बुझाने के लिए किया गया था। लेकिन वह बुझी नहीं, बल्कि भडक उठी थी। भौतिक रूप से धरती के दो टुकडे कर दिए गये। मिल जुलकर अमन चैन से रहते अवाम के दिलों को भी टुकडों में बाँटा गया। अपने

घर, ज़मीन जायदाद, खेत-खलिहान, सम्बन्ध रिस्ते और परिवेश छोडकर जिसप्रकार सोबतीजी के परिवार पश्चिमी पंजाब से दिल्ली आये थे, वैसे हज़ारों लोग आए थे। उनके दर्द को गहराई से आत्मसात करते हुए सोबतीजी ने ' सिक्का बदल गया ' कहानी लिखी है।

यह सर्वविदित बात है कि प्रत्येक व्यक्ति अपने परिवेश को आत्सात करते हुए ही जीता है। उसके व्यक्तित्व का निर्माण एवं विकास उसी परिवेश के मुताबिक होता है। दर असल लेखक की सोच, समझ, जिन्दगी व सर्जनात्मकता ये सब उसकी निजी कमाई नहीं होतीं। अनजाने ही परंपरा और जीवन शैली उसे घेरे रहती है। कृष्णाजी ने लिखा है-" हर किसी का देश उसके अन्दर और बाहर फैला रहता है। यही अपनी गंध, गरिमा, गुण से अपने निवासियों में , नागरिकों में मुखरित होता रहता है, उजागर होता चला जाता है। हम नहीं भी रहते-नहीं भी होते-तब भी। देश ही आपकी आत्मा में कविता, दर्शन, चिंतन, संगीत बनकर प्रवाहित होता है। "5 कृष्णाजी की हर रचना में उत्तर पश्चिमी भारत का परिवेश उजागर रहता है, उससे अलग होकर उनकी रचनाओं का कोई अस्तित्व नहीं है। रचनाकार समय की लीक को अंकित करता है और अंजाने ही उसे व्यापक संदर्भों से जोडता भी चला जाता है। हर लेखक का अपना निजि चिंतन है जो उनके परिवेश और परिवेशगत मूल्यो से जुडा रहता है। कृष्णाजी की रचनाओं में जाने या अनजाने अपने परिवेश की सारी विशेषताएँ मौजूद हैं। ' जिन्दगीनामा

तो उनकी जीवन शैली, परंपरा एवं परिवेश का दस्तावेज़ है। साथ ही साथ वह विभाजनपूर्व के एक गाँव की महागाथा भी बन गयी है। जैसे जगदीश नारायण श्रीवास्तव ने सूचित किया है -" यदि कोई पंजाबी औरत के विविध जीवन स्तरों को चीन्हना चाहें तो ' जिन्दगीनामा ' उसके लिए एक विश्वकोश साबित होगा। "6 देवराज उपाध्याय के अनुसार तो -" यदि किसी को पंजाब प्रदेश की संस्कृति, रहन-सहन, चाल-ढाल, रीति-रिवाज़ की जानकारी प्राप्त करनी हो, इतिहास की बात जाननी हो, वहाँ की दन्त-कथाओं, प्रचलित लोकोक्तियों तथा 18-वीं, 19-वीं शताब्दी की प्रवृत्तियों से अवगत होने की इच्छा हो तो ' जिन्दगीनामा ' से अन्यत्र जाने की आवश्यकता नहीं। "7 सचमुच ' जिन्दगीनामा ' में पंजाब के संयुक्त परिवार की खासियतें, कृषक जीवन की स्थिति, पंजाबी औरतों के हालात आदि का ब्योरा है और कुल मिलाकर सामंती जीवन शैली का भी दस्तावेज। कृष्णाजी जिस परिवेश का अभिन्न अंग था, उसमें जान फूँककर ' जिन्दगीनामा ' की रचना की गई है। एक हद तक इसमें सोबतीजी की नॉस्टालजिया भी गुंफित है।

कृष्णाजी ने इलाहाबाद की एक कथा गोष्ठी में गुस्से से कहा था -" आप यू.पी.वाले क्या जानें, पंजाब की जिन्दगी क्या थी और पंजाब का यरित्र क्या होता है। आपके यहाँ तो पंजाबी चरित्र आया ही नहीं। लुटे-पिटे, सकुचाये, हारे शरणार्थी आए और उन्हें देखकर आपने तय कर लिया कि शायद यही पंजाब है। अपनी कुंठाओं और 'फ्रस्ट्रेशन'

में आपने उन पर कुछ कहानियाँ लिख डालीं। मेहनत और स्वतंत्रता के बीच पली पंजाबी औरत जब छाती तानकर खडी होती है तो आप जैसे के तो पसीने छूट जाएँ। "8 स्वतंत्र एवं उदार वातावरण में कृष्णाजी की परवरिश हुई थी। उससे उनके व्यक्तित्व में निडरता आ गई थी और इसीलिए जीवंत एवं निडर पात्राओं के सृजन में वे काबिल हुई थी।

दिल्ली, शिमला जैसे शहरों में शिक्षा पाने और घुमक्कड स्वभाव की वजह सोबतीजी शिमला, दार्जिलिंग, भुवाली, रानीखेत जैसे पहाडी प्रदेशों के रोमानी वातावरण से खूब परिचित रही हैं। उन सुनसान पहाडी प्रदेशों से उनका आत्मीय संबन्ध रहा है। उस परिवेश को ही उन्होंने ' तिन पहाड बादलों के घेरे पहाडों के साये तले ' जैसी कहानियों में उभारा है।

रचनाकार रचना की विषयवस्तु और भाषा ही नहीं, रूप भी अपने परिवेश से ही प्राप्त करता है। उनका परिवेश और रचना में आपसी संबन्ध है जो अनेक सरल और जटिल स्तरों पर एक दूसरे से जुडे हैं। रचना में अनुभूति और ईमानदारी का महत्व असन्दिग्ध है। लेकिन रचनाकार के परिवेश के साथ उसका अटूट संबन्ध ही रचना को प्रामाणिक बनाता है। उसे मानवीय समस्याओं, भावनाओं,जजबातों का इतिहास बना देता है। वैसे रचना का लेखकीय परिवेश के साथ संबन्ध कभी परोक्ष एवं कभी रहस्य मण्डित हो जाता है, लेकिन हर हालत में सम्बन्ध बना रहता है।

बर्फ, धुन्ध और पहाडों के रोमानी वातावरण में कृष्णा सोबती ने मानव के अस्तित्व की अनिवार्य नियति से उपजती पीडा और अकेलेपन का वर्णन किया है। उनके पात्र पुरुषत्व और नारीत्व की परिभाषाओं और भूमिकाओं से परे, सचेत स्वत्व से संपन्न हैं। उन्होंने अपने सामाजिक एवं पारिवारिक परिवेश के मुताबिक अपनी निजता को हमेशा कायम रखा है। उनकी कहानियाँ व्यक्ति की ज़िन्दगी के निर्णायक क्षणों की अभिव्यक्ति है। बाहरी परिवेश एवं दबावों की प्रतिक्रिय में उनके पात्र स्वयं अपने निर्णयों में अडित रहे हैं और उनके निर्णयों की वरीयता अपनी निजता को बनाए रखने की हैं। ज़िन्दगीनामा में पात्रों के चेहरों के बजाय ज़िन्दगी को एक विशिष्ट ऐतिहासिक और भौगोलिक संदर्भ में तथा स्थानीय एवं कालिक परिप्रेक्ष्य में पकडने की कोशिश की गयी है। सचमुच ज़िन्दगीनामा बीसवीं शताब्दी के आरंभिक पन्द्रह बीस वर्षों के पंजाबी जीवन का चित्रण है तो ' दिलो दानिश' कृपानारायण साहिब के कुनबे की कथा है ; ज़िन्दगी के बहाव का एक और दस्तावेज़। दिल्ली शहर के जिस परिवेश में सोबतीजी पली थी वही परिवेश और जीवन 'दिलो दानिश' के ज़रिए पुनः जाहिर होते हैं। अगर जिन्दगीनामा में विभाजन के रूप में धरती के दरकने की आहट है तो दिल्ली शहर के परिप्रेक्ष्य में साझा परिवार के दरकने की आहट के साथ उसकी एक आखिरी भभक भी दिलो दानिश में दृश्यमान है। खुद कृष्णाजी ने लिखा भी है-" संयुक्त परिवार, जो हमारे सामाजिक ढाँचे की रीढ़ रही है, टूटने

की चपेट में है। बडे परिवार छोटी इकइयों में, विभाजित हो चुके हैं और इनके साथ ही चमक खो चुकी हैं भारतीय संबन्धों की सघनता और घनत्व। इन दबावों के सामने इस पुरानी प्रथा को दुबारा ताज़ा-दम करना मुश्किल ही होगा। इसने जहाँ भारतीय जीवन शैली को सुरक्षा की चौखट दी थी, वहाँ व्यक्ति से उसकी फैसला करने की - अपने निर्णय लेने की क्षमता छीन ली थी। "9 दिल्ली के गली कूचों से उभरी दिलो-दानिश की कहानी उन्नीस्वीं और बीस्वीं सदी में धडकती-फडकती है; दिल्लीवालों के मिज़ाज, रूआब और रंगो बू में, किसी न किसी तरह आज भी हमारे अहसासों में मौजूद है।

अन्य साधारण व्यक्तियों की भांति लेखक के भी नागरिक की हैसियत से कतिपय दायित्व हैं, इनसे अवगत होकर वह रचनाएँ करता है। अपने ज़माने में चारों ओर घटित घटनाओं को ही वह रचना का विषय बनाता है और मानवीय जज़बातों की नब्ज पकडने की कोशिश भी करता है। अगर कृष्णा सोबती ने विभाजन और सामंती व्यवस्था में पलते पंजाबी जीवन और संयुक्त परिवार के माहौल का वर्णन किया है तो माधवीकुट्टी ने स्वतंत्रतापूर्व केरल के संयुक्त परिवार के परिप्रेक्ष्य में नारी-मन एवं स्त्री पुरुष संबन्धों के बदलते आयामों का चित्रण किया है।

केरल का खास परिवेश

केरल के विशेषकर नायर जाति के संयुक्त पारिवारिक व्यवस्था में अधिकांश स्त्रियों का, विवाह के बदले नंपूतिरी समुदाय या

ब्राह्मण समुदाय के पुरुषों के साथ ' शारीरिक ' संबन्ध ही होता था जो ' संबन्धम्' नाम से अभिहित था। इस रिश्ते में स्त्री की इच्छा की परवाह नहीं की जाती थी। यद्यपि चाहने पर संबन्ध तोडने का अधिकार हासिल था, तो भी घर में उसे कोई विशेष स्थान नहीं था। सचमुच " मातृसत्तात्मक संयुक्त पारिवारिक व्यवस्था में, माँ या परिवार के अन्य स्त्रियों का कोई विशेष स्थान नहीं था।"10 फिर भी इस व्यवस्था के तहत स्त्रियाँ अपने खानदान की वारिस रहीं। खानदानी संपत्ति का मालिक किसी एक प्रत्येक व्यक्ति नहीं था। हालांकि स्त्री का संपत्ति पर अधिकार है तो भी उसका संचालन करने का अधिकार पुरुष को ही प्राप्त था। खानदानी जायदाद को संभालने और उपयोग करने का संपूर्ण अधिकार परिवार के सबसे वरिष्ठ पुरुष को प्राप्त था। परिवार की सभी स्त्रियाँ उससे डरकर रहती थीं। उनका अपना कोई अलग व्यक्तित्व ही नहीं था। स्त्रियाँ पुरुष की इच्छा व आज्ञा के अनुसार सब कुछ चुपचाप सहनेवाली थीं। पूँजीवाद के पनपने तथा व्यक्तिवाद की प्रधानता की वजह संयुक्त परिवार प्रणाली धीरे धीरे टूटने लगी। सामंती व्यवस्था के विघटन से परंपरागत धंधों का आकर्षण नहीं रहा। पढे लिखे नौजवान नौकरी की तलाश में शहरों की ओर निकलने लगे। संपत्ति पर अधिकार व्यक्ति का हो गया। फलस्वरूप मातृसत्तात्मक पारिवारिक वातावरण धीरे धीरे पितृसत्ता में परिवर्तित होने लगा।

ऐसे एक वातावरण में माधवीकुट्टी का जन्म हुआ था और

उस समय देश में स्वतंत्रता संग्राम चल रहा था। उसके परिवारवाले गांधीजी से, विशेषकर उनके अहिंसावाद व स्वदेशी आन्दोलन से बहुत प्रभावित थे। पिता की नौकरी की खातिर कलकत्ता, बंबई जैसे शहरों में रहने के कारण उस परिवेश का प्रभाव भी उनके व्यक्तित्व पर पडा है जिसका प्रभाव उनकी रचनाओं में भी स्पष्ट जाहिर है। लेकिन भारत की दक्षिणी छोर में होने के कारण केरल में विभाजन की भीषणता का असर कम पडा था। इसलिए उन स्थितियों से ओतप्रोत रचनाएँ माधवीकुट्टी में नहीं के बराबर है।

गांव की सामंती व्यवस्था के अधिष्ठान पर रूपायित संयुक्त परिवार के परिप्रेक्ष्य में उन्होंने बहुत सारी रचनाएँ की है। उस माहौल का इतना असर उन पर पडा है कि वह ' नॉस्टालजिया ' की तरह उनकी रचनाओं में हावी है। 'नीर मातलम् के फूल ' नामक कहानी इसका मूर्त उदाहरण है। मामा - मामी, नानी, मौसी और नौकरों से युक्त पारिवारिक परिवेश, गांधिजी का व्यक्तित्व, चावल के खेत, तालाब पानी से युक्त केरल के गाँव की हरियाली उनकी कहानियों में जीवंत हो उठी है।' मीनाक्षियम्मा की मृत्यु', ' गांधीजी की उपादेयता', ' प्रभात ' आदि कहानियाँ इसके ताज़ा उदाहरण हैं। उस परिवेश के अणु अणु को उन्होंने अपनी रचनाओं में स्वीकारा है। गाँव के परिवार और शहर के अपने घर के एक एक सदस्य यहाँ तक नौकरों को भी उन्होंने समूचे परिवेश के साथ अपनी रचना का विषय बनाया है। उसीप्रकार शहरी

परिवेश में लिखी गयी 'मराइन ड्राइव ',' संसार एक कवयित्री का निर्माण करता है ' आदि कहानियों में शहरी जीवन की विसंगति और बदलते स्त्री पुरुष संबन्धों का आकलन है।

माधवीकुट्टी की यह विशिष्टता है कि वे कभी अपने बचपन के परिवेश से मुक्त नहीं हो पाती हैं। वहाँ के प्रत्येक चीज़ के प्रति उन्हें अंतरंगता है। अपनी इस गृहातुरता को उन्होंने अपनी आत्मकथात्मक रचनाओं के ज़रिए प्रकट किया है। वहाँ के एक पेड के प्रति अपनी अंतरंगता को वह इसतरह प्रकट करती है -" नीरमातलम् के फूलों की खुशबू माँ की लोरी थी।..... मेरे बंद पलकों के पीछे मक्खन रंग के फूलों से लदे सिर उठाकर खडे रहता वह पेड वैकारिक सुरक्षा का प्रतीक बनकर स्थित है। उसकी गंध यादों के राजपथ में जमा हुई है ।" 11

कृष्णा सोबती और माधवीकुट्टी के रचनापरिवेश में काफी समानताएँ हैं। स्वतंत्रतापूर्व भारत में दोनों का जन्म हुआ था। विभाजन की त्रासदी और अन्य सांप्रदायिक गदिविधियों से सोबतीजी खूब परिचित है। स्वतंत्रता संग्राम से माधवीकुट्टी का रचना परिवेश जुडा है तो भी विभाजन की भीषणता को उन्हें भोगना नहीं पडा था। यद्यपि संयुक्त पारिवारिक प्रथा से दोनों प्रभावित है तो भी उत्तर भारत और केरल की प्रथाओं में काफी अन्तर है। इस लिए दोनों की रचनाओं के पात्रों की भूमिका और विचारों में भी काफी भिन्नता दृष्टव्य है।

टिप्पणियाँ

1 हेतु भरद्वाज- परिवेश की चुनौतियाँ और साहित्य - पृ: 10,11

2 डॉ शोभा पालीवाल- अमृतलाल नागर के उपन्यासों में सामाजिक चेतना - पृ: 19

3 प्रमीला अग्रवाल- भारत विभाजन और हिन्दी कथा साहित्य - पृ: 7

4 वही – पृ: 8

5 कृष्णा सोबती- सोबती एक सोहबत - पृ: 402

6 जगदीश नारायण श्रीवास्तव- उपन्यास की शर्त - पृ: 144

7 समीक्षा- जनवरी - मार्च : 1980

8 राजेन्द्र यादव- औरों के बहाने - पृ: 42

9 कृष्णा सोबती- सोबती एक सोहबत - पृ: 403

10 पी के बालकृष्णन- जाति व्यवस्थयुम केरल चरित्रवुम - पृ: 305

11 माधवीकुट्टी- नीरमातलम पूत्ता कालम - पृ: 39,91

अध्याय तीन

कृष्णा सोबती और माधवीकुट्टी की सर्जना और दर्शन

दर्शन शब्द का प्रयोग सामान्य और विशिष्ट अर्थ में किया जाता है। उसका सामान्य अर्थ है स्थूल दृष्टि से स्थूल वस्तुओं को देखना और विशिष्ट अर्थ है सूक्ष्म नेत्र से सूक्ष्म तत्वों को देखना । दर्शन मूलतः मानव की मननशील वृत्ति से संबन्धित है। जीवन और जगत की विविध स्थितियों के बारे में मनन करते हुए तत्संबन्धी रहस्यों का साक्षात्कार और तदनुसार आत्मानुभव के बलबूते पर उनका उद्‌घाटन करना ही दर्शन का कार्य हैं। 1 वह मानव जीवन को रह - रहकर परेशान करनेवाले प्रश्नों को उत्तर देने का प्रयत्न करता हैं। अतः दर्शन अनुभव और अनुभूति की व्याख्या है जिसमें आलोचना और विवेचन विश्लेषण को विशेष महत्व दिया जाता है। मानव, अनुभव की परिधि में आनेवाले सभी प्रकार के तत्वों के आधार पर उनमें निहित सत्य का उत्घाटन करता है। विषय के व्यवस्थित प्रतिपादन के लिए दर्शन में तर्क पद्धति की सहायता ली जाती है, जिससे अनुभूत और चिंतन सिद्ध वैचारिक तत्वों की युक्तियुक्त स्थापना होती है। इस वैशिष्टय के कारण दर्शन में राग तत्व से ज्यादा बुद्धि तत्व की प्रधानता होती है। साहित्य और दर्शन दोनों में विश्व के साथ मानव संबन्ध की समीक्षा की जाती है। इसलिए जब साहित्य और दर्शन का संगम होता है तो उसका स्वरूप सरस और सहृदय संवेध बन जाता है। संवेदनशील साहित्यकार अपनी सर्जना को वैचारिक दृष्टि से सक्षम बनाने के लिए दार्शनिक दृष्टि अपनाता है और उसको कुशलता से अभिव्यक्त भी करता है।

वर्तमान युग में प्रतिबध्द कार्य करताओं के प्रयत्न और लेखनी से नारीवाद ने दार्शनिक आयाम हासिल किया है। साहित्य के द्वारा उसकी सक्षम अभिव्यक्ति भी हो रही है। कृष्णा सोबती और माधविकुट्टी की रचनाओं के वैचारिक धरातल के रूपायन में नारीवाद का भी योगदान रहा है। नारीमन के अन्तर्जगत की ओर गोता लगानेवाले इन दोनों लेखिकाओं की सर्जना को प्रत्यक्ष एवं कनिपय संदर्भों में अप्रत्यक्ष रूप में नारीवादी दर्शन ने प्रभावित किया है।

नारीवाद सामान्य परिचय

नारीवाद दर असल मानव अस्तित्व के एक हिस्से के रूप में हमेशा मौजूद एक समस्या का सैध्दांतिक संक्षेप है। अपनी अंदरूनी संवेदना, वर्चस्व और स्वतंत्रता पर डाली गयी अदृश्य बेडियों के खिलाफ उठी स्त्रियों की आवाज ही स्त्री आन्दोलन के रूप में विकसित हुई थी। 'फेमिनिसम' का शाब्दिक अर्थ उन्नीसवीं शती के मध्य से शुरु हुई ''स्त्रियों के अधिकारों के लिए की गई वकालत '' बनाया गया है। 2 ''अपनी स्वतंत्रता लडकर हासिल कर सकनेवाले'' 3 अर्थ में भी फेमिनिस्ट शब्द का प्रयोग हुआ है।

सचमुच फेमिनिसम के लिए सर्वस्वीकृत परिभाषा उपलब्ध नहीं हैं। स्त्री के अनुभव जगत की संकीर्णता ही इसका प्रमुख कारण है। हालांकि स्त्री की समस्याओं में एकरूपता है तो भी काल और स्थल के अनुसार उनमें भिन्नता आ जाती है। स्त्री के अपने अधिकारों के प्रति सजग होना, सबको उसके संबन्ध में अवगत करना, उनके खिलाफ खडे हर चीज़ के खिलाफ व्यक्तिगत व संगठित रूप से लड़ाई, पीडित स्त्री का पुरुष के प्रति विव्देष, पुरुष का निराकरण, लैंगिक स्वतंत्रता,

पुरुष मेधा समाज में शारीरिक और सामाजिक स्तर पर खुद अपने स्थान निर्धारित करने का अधिकार, लेसबियनिसम आदि फेमिनिसम के अन्दरगत अनेक बातें शरीक है। 4 इनमें कई बातों का आपस में संबन्ध है। उसका प्रयोग प्रत्येक समाज के संस्कार, मूल्य व अवश्यकताएँ आदी के अनुसार ही संभव है। इसलिए समानताओं के बावजूद फेमिनिसम के प्रायोगिक़ स्तर पर एकता संभव नहीं है।

नारीवादी सिध्दांत

नारीवादी सिध्दांत के पोषण में अनेक पुस्तकें निकलीं जिनमें मेरी बुलस्टण क्राफ्ट की 'ए विनडिकेषन ऑफ दि राइटस ऑफ विमण' नारियों के अधिकारों और प्रतिष्ठा के लिए लिखा गया पहला सैध्दान्तिक ग्रन्थ है। वेर्जीनिया वुल्फ की 'अपने लिए एक कमरा' नामक ग्रन्थ फेमिनिस्ट बाईबिल नाम से मशहूर है। स्त्रियों के अधिकारों के लिए अपने चिंतन और सर्जनात्मकता को सही दंग से उपयोग करनेवाली स्वतंत्र चेता चिंतक थी वेर्जीनिया वुल्फ । 1949 में फ्रेच लेखिका एवं दार्शनिक 'सीमोन द बुआ' ने अपने 'द सेकन्ड सेक्स' का प्रकाशन किया। इसमें स्त्री जीवन के ऐतिहासिक, मनोवैज्ञानिक, जीववैज्ञानिक आदि सभी पहलुओं पर गहरा अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। इस ग्रन्थ में स्त्री को दूसरे दर्ज के लिंग मानने के पुरुष दृष्टिकोण की कडु आलोचना की गई है। पुरुष मेधा समाज से लडकर अपना अस्तित्व बनाऐ रखने और पुरुषों के आश्रय से मुक्त होने का उनका आह्वान नारीवादी आन्दोलन के इतिहास की सचमुच नींवाधार घटना रही थी। अमेरिका में नारीवादी आन्दोलन की शुरुआत, 1963 में निकले बेट्टी फ्रीडन के ग्रन्थ ' द फेमिनिन मिस्टिक ' से माना जा सकता है।

उस पुस्तक के ज़रिए अमरीकी समाज के स्त्री - पुरुष समता के खोटे मुखौटे को उसने छील दिया था। घर की स्त्रियों को उन्होंने नौकरीपेशा ज़िन्दगी की धन्यता को स्वीकारने का आह्वान दिया। केट मिल्लट के 'सेक्सुअल, पोलिटिक्स' में 'वैयक्तिक' का मतलब राजनीतिक विचार बताया गया है। 5 नारी के हर वैयक्तिक मुक्ति प्रयास के पीछे कार्यरत राजनीति को उन्होंने उन्मीलित किया है। 'फेमिनिसम' के अनेक रूप है जिन्हें मोटे तौर पर निम्न लिखित शीर्षकों में बांट सकते है।

लिबरल फेमिनिसम

सामन्तवाद के पतन और आधुनिक युग के सन्धिकाल में लॉक, रूस्सों, बेन्दाँ, जॉन स्टुअर्ट मिल आदि दार्शनिकों व्दारा उद्घोषित समान अधिकार, वैयक्तिक स्वतंत्रता, मुक्ति, न्यायबोध आदि मूल्यों का नारीवादी रूपांतर है लिबरल फेमिनिसम। इसकी मूल प्रपत्तियाँ जॉन स्टुअर्ट मिल की 'द सब्जेक्शन ऑफ विमन' में मौजूद है। इसमें बताया गया है कि स्त्री और पुरुष के बीच जैविक विषमताएँ भले ही हो, मगर बौध्दिक और नैतिक क्षमताएँ दोनों में बराबर है। स्त्री और पुरुष का व्यक्तित्व तब आदर्श रूप हासिल करता है जब उनमें क्रमशः पुरुषोचित और स्त्रीयोचित गुणों का समावेश होता है। ऐसा न हो, तो भी स्त्रियों को विकास के अवसर बराबर देना निद्यायत ज़रूरी है। इस लिबरल फेमिनिसम के पदछापों पर चलते हुए 1966 में बेट्टी फ्रीडन के नेतृत्व में अमेरिका में नाशनल ओर्गनाइसेशन फॉर विमन' नामक संगठन की स्थापना हुई। 'NOW' के अधिकांश सदस्य, सफेदपेश, मध्यवर्गीय, कामकाजी महिलाएँ थीं। उन्होंने शिक्षा और नौकरी के क्षेत्र में समान अधिकारों की मांग की। 'NOW' जैसे संगठन का आत्यंतिक लक्ष्य

सामाजिक और आर्थिक क्षेत्र में स्त्री और पुरुष में समानता कायम रखना था। फ्रॉस के ऑलिंबे डोगोष, इंगलैंड के मेरी वुलस्टन क्राफ्ट और हारियट टेलर, लिबरल फेमिनिसम के आरंभिक प्रवक्ता थे। स्त्री शिक्षा, वैयक्तिक स्वतंत्रता, सामाजिक स्वतंत्रता, संपत्ति पर बराबरी का अधिकार, विवाह संबन्धी नियमों का सुधार, मतदान का अधिकार आदि के लिए संकर्ष करने के वास्ते अनेक स्त्रियों नेतृत्व में आईं। मौजूदा व्यवस्ता में परिवर्तन व पुरुष मेधा के प्रति विरोध जैसी ठोस बातें लिबरल फेमिनिसम के अजंडा में नहीं थीं। 6 शायद इसलिए ही इसके मूल्यों से आकर्षित होकर उनकी सफलता के लिए प्रयत्न करने अनेक पुरुष भी सामने आए। भारत में राजाराम मोहनराय, महर्षि कार्वे , ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, महात्मा गाँधी आदि महान हैसियतों ने इस दिशा में सराहनीय कार्य किए। 7 लिबरल फेमिनिस्टों ने संघर्ष का रास्ता नहीं अपनाया था। एक हद तक मौजूदा व्यवस्था के कानूनों के तहत जिस हद तक की स्वतंत्रता और आधिकार स्त्री हासिल कर सकती है, उन्हें अपनाने के प्रयत्न ही वे कर रही थीं। 8 लिंग पर अधिष्ठित नौकरी, लिंग की वजह होती असमानता, घरेलू कामकाज की गिरफ्त में पिस जाते स्त्री शरीर और मन, इन सबकी ओर लिबरल फेमिनिस्टों ने ध्यान नहीं दिया। पूँजीवादी व्यवस्था के पुरुष अधीशत्व से टकराने की हिम्मत भी लिबरल फेमिनिस्टों में नहीं थीं। संक्षेप में उन्होंने नारीवाद के नाम पर मार्क्सवाद का एक नया रूप प्रस्तुत करने की कोशिश की जिसमें नारी को आपेक्षित स्थान दिलाने की मांग शरीक थी।

राडिकल फेमिनिसम

मतभेद की वजह लिबरल फेमिनिस्ट ग्रूप से बिछुडकर जो अलग हो गये थे वेही बाद में राडिकल फेमिनिस्ट नाम से अभिहित हो गये। सन 1968 में टाइ- ग्रेस ऐटकिन्सन के नेतृत्व में कतिपय लिबरल ग्रूप से यह शिकायत करते हुए अलग हो गए कि छिटपुट सुधारों से कुछ होनेवाला नहीं है। उनका यही अभिमत रहा कि लडाई पुरुष से नहीं बल्कि पितृसत्तात्मक समाज से होनी चाहिए। पुरुष मेधा के जिन क्षेत्रों को छूने में लिबरल फेमिनिसम डरता और हिचकता था, वहाँ साहस के साथ राडिकल फेमिनिसम घुस गया। स्त्री पुरुष के बीच की जैविक भिन्नता को औज़ार बनानेवाले पुरुष अधीशत्व की नज़रिया को पहचानते हुए, राडिकल फेमिनिस्ट उसे पुरुष मेधा समाज की कूटनीति साबित करने में काबिल हो गए। विवाह, परिवार, व्यक्ति की मान्यता आदि के पीछे, पितृसत्तात्मक समाज में अधिकार जमाने या बनाए रखने की राजनीतिक चालाकी की अन्तर्धाराएँ ही कार्यरत हैं। राडिकल फेमिनिसम की इस विचार धारा के कारण वह मूर्ति भंजक सिद्धांत अभिहित हो गया। प्रसिद्ध राडिकल फेमिनिस्ट, षूलामित फयरस्टोण की राय में परिवार नामक संस्था एक आर्थिक योजना मात्र है। 9 विवाह और पारिवारिक व्यवस्था को गरीबी का प्रत्यक्ष कारण माननेवाले षूलामित फयरस्टोण, इन दोनों का विरोध करता है। पुरुष की शक्ती और सुन्दरता को महिमा मण्डित करती पुरुष मेधा संस्कृति के मिथकों और कल्पनाओं को राडिकल फेमिनिसम ने तोड दिया। राडिकल फेमिनिसम की मान्यता है कि स्त्रियों को ही स्त्रीत्व की महनीयता का प्रचार करना चाहिए। इसके अवरोध करते सबको, चाहे

वह सामाजिक संबन्ध हो, धार्मिक अनुष्ठान या रिवाज़ हो या वस्त्र हो, यह निराकरण करता है। राडिकल फेमिनिसम का यह रुख पुरुष विरोध की ओर बढ़ गया । स्त्री पुरुष संबन्ध को जैविक के बदले सामाजिक सृष्टि मानने तथा समलैंगिकता को स्वाभाविक सिध्द करने की लैंगिक क्रान्ति तक की ओर इनका रवैया बढ गया। स्त्री समाज की अवधारणा में विश्वास रखनेवाले राडिकल फेमिनिस्ट संसार् भर में स्त्री मुक्ति की आवश्यकता को अवगत कराने में सफल निकले। सिध्दांत एवं प्रवृत्ति के तालमेल को बनाये रखने में राडिकल फेमिनिस्ट कामयाब हुए। इन के अनुसार स्त्री पुरुष संबन्ध की विषमताओं के नींवाधार कारण जीववैज्ञानिक और मनोवैज्ञानिक हैं। 10 राडिकल फेमिनिसम ऐतिहासिक और सांस्कृतिक भूमिका को नगण्य मानता है। पश्चिम में राडिकल फेमिनिस्टों के स्त्री पुरुष संबन्धी विशेष दृष्टिकोण से पारिवारिक व्यवस्था का विघटन हुआ और सेक्स के क्षेत्र में अनैतिकता का बोलबाला रहा यों स्त्री समुदाय की मुक्ति नहीं हुई बल्कि और जकडनों में जगड गया।

मार्क्सवादी फेमिनिसम

'मार्क्सवादी नारीवाद' का अधिष्ठान मार्क्सवादी सिध्दान्त है । प्रारंभ में स्त्री- पुरुष की जैविक भिन्नता, लिंगाधिष्ठित यातनाएँ , स्त्री के दोहरे शोषण आदी मुद्दे मार्क्सवादी सैध्दान्तिक चर्चाओं में या उसके कार्यक्रमों में शामिल नहीं थे। यानी शुरुआत में लिंगपरक अनीतियों की बात यद्यपि एंगेल्स ने उठाई थी लेकिन मार्क्सवादी विचारधारा में ये बातें सधन नहीं थीं। वेतन के बिना हर वक्त घरेलू कामकाज में व्यस्त रहती स्त्रियों की समस्याओं को मार्क्सवाद ने अनदेखा किया था।

मार्क्सवादी फेमिनिस्टों ने ही मार्क्सवादी विचारधारा को लिंगाधिष्ठित समस्याओं को भी सुलझाने लायक बना दिया था। 11 अलक्सांड्रा कॉलॉण्टायी, क्लारा सेटकीन, एम्मा गोल्डमान आदि आरंभिक मार्क्सवादी फेमिनिस्टों के वक्तव्यों और कर्यक्रमों से ये बातें स्पष्टता जाहिर होती हैं। मार्क्सवादी फेमिनिसम के सिध्दान्तों में फ्रेडरिक एंगेल्स की कृति 'परिवार, निजी संपत्ति और राज्य का आविर्भाव ' का जबरदस्त प्रभाव पडा है । स्त्री की गुलामी और शोषण के दायित्व पूँजीवादी व्यवस्था पर करते हुए मार्क्सवादी फेमिनिसम, मार्क्सवादी सिध्दान्तों का ही पीछा करता है। लेकिन परिवार में स्त्री के शोषण के समाधान के संन्दर्भ में स्वतंत्र रूख अपनाया गया है। एंगेल्स ने परिवार तथा समाज में नारी की शोषित स्थिति का मुख्य कारण निजी संपत्ति का विकास माना था। श्रम विभाजन के अनुसार जीविकोपार्जन के साधन जुटाने का दायित्व पुरुष का था और नारी घर संभालती थी। ''इस स्थिति में संपत्ति का अधिकारी पुरुष था और स्वाभाविक तौर पर परिवार में पुरुष का नारी से ऊँचा स्थान हासिल हो गया। संपत्ति के सार्वाधिकारी पिता को अपने पुत्र को अधिकार देने के लिए परंपरागत मातृसत्ता का उल्लंघन करना आवश्यक हो गया था। यों मातृसत्ता का अन्त हुआ और पितृसत्ता का विकास होने लगा। 12 मातृसत्ता के इस पतन को उन्होंने नारी वर्ग की ही ऐतिहासिक पराजय मानी है। इसके फलस्वरूप उत्पन्न एकनिष्ट परिवार में पुरुष की तानाशाही चली और नारी पुरुष की कामपूर्ती और वर्ग संचालन की मशीन मात्र रह गई। इस पारिवारिक व्यवस्था में पुरुष बूर्ज्वा और नारी मज़दूर की प्रतीक है। ''इतिहास साक्षी है कि पहले वर्ग परिवार में पुरुष और नारी

के बीच का संघर्ष मौजूद था। और पहला वर्ग शोषण नारी पर पुरुष द्वारा ही किया गया था। 13 इस प्रकार मार्क्सवादी फेमिनिसम में नारी की निचली स्थिति को भौतिक संपत्ति और वर्ग शोषण से जोड दिया गया। उनके विचार में इस निचली स्थिति से मुक्ति के लिए स्त्रियों को घर के अवैतनिक काम छोडकर सामाजिक उत्पादन प्रक्रिया में भाग लेना चाहिए। यही सामाजिक हैसियत प्राप्त करने का एकमात्र रास्ता है। मार्क्सवादियों का लक्ष्य पूँजीवादी व्यवस्था का आमूल चूल परिवर्तन है। इसलिए मार्क्सवादी फेमिनिस्टों ने स्त्री की मुक्ति की संकल्पना भी सामाजिक बदलाव के साथ जोडकर ही देखा परखा है।14

सोष्यलिस्ट फेमिनिसम

सोष्यलिस्ट फेमिनिसम नारी मुक्ति को वर्ग संकर्ष की अनिवार्य परिणति नहीं मानता। उसकी यही मान्यता है कि स्त्री का शोषण, उसकी अस्मिता, लैंगिक भिन्नता, पुरुष अधीशत्व की राजनीती आदि सभी बातों को ध्यान में रखकर जो मुक्ति आन्दोलन होगा उससे ही फेमिनिसम का लक्ष्य संभव है। इसप्रकार अपनी समग्र विचारधारा के कारण मार्क्सवादी फेमिनिसम की अपेक्षा समाजवादी फेमिनिसम अधिक आकर्षक सिद्ध हूआ । स्त्री की समस्याओं को उत्पादन संबन्धों से जोडकर देखने के बजाय पारिवारिक व्यवस्था, व्यक्ति - व्यक्ति के आपसी संबन्ध और सत्री के निजी अनुभव जगत से संबन्धित करके ही मूल्यांकित करता है । यह नारीवादी सिद्धांत घर के कामकाज और पारिवारिक जीवन को उत्पादन संरचना के पोषक मानते हैं । तथा

सत्री की स्थिति, अधिकार की सफलता के लिए उचित कर्मक्षेत्र का आह्वान भी करते हैं ।

राडिकल लेसबियनिसम

यह सिद्धांत नारी की गुलामी को उसके शरीर से ही जोडता है । फ्रांस के मोणिक विटिटग, टेरीस डेलारिट्टिस आदि लस्बियन फेमिनिसम के प्रवर्तक हैं । स्त्री के शरीर से जुडे फेमिनिस्ट सिद्धांत की सर्वकालीन उपादेयता है , क्योंकि ये सिद्धान्त स्त्री की रोज़ाना जिन्दगी के बहुत करीब हैं । पुरुष के आधिपत्य और शोषण के शिकार बनती स्त्री शरीर की वर्तुलता को तोडने का काम इनका प्रमुख कार्यक्रम हो गया । स्त्री की लैंगिकता , सर्जनक्षमता, मातृत्व आदि अनुभवों को पुरुष आधिपत्य के चंगुल से मुक्त कराने का परिश्रम इस शरीर केन्द्रित फेमिनिस्ट संहिता में निहित है । स्त्री पुरुष सेक्स संबन्धों के सन्दर्भ में होती जबरदस्ती और उसकी आड में होनेवाले बलात्कार के खिलाफ लेस्बियन फेमिनिस्टों ने आक्रोश जाहिर किया है । उनका यही नारा है कि 'हमारा शरीर हमारा अपना है' । लेस्बियन के लिए उनकी परिभाषा है - ''सभी स्त्रियों के विद्वेष की विस्फोटक स्थिति का मूर्तरूप ही लेस्बियन स्त्री है ।'15 शरीर और लिंग पर आधारित शोषण का सही जवाब देने के लिए यह फेमिनिस्ट सिद्धान्त सक्षम है और इसलिए ही बूर्ज्वा समाज की मूल्य व्यवस्था को खतरे में भी डालता है ।

अस्तित्वतवादी व मनोवैज्ञानिक फेमिनिसम

सीमोन द बुआ, एड्रियन रिच्च तथा लूसी इरिगारे के चिंतन में भी सामाजिक व्यवस्था और स्त्री शरीर के आपसी सम्बन्ध

की व्याख्या मयस्सर है । स्त्री शारीर और उसके अस्तित्व की व्याख्या करने वाले सीमोन द बुआ के दर्शन से अस्तित्ववादि फेमिनिसम का आविर्भाव हुआ । अस्तित्ववादी फेमिनिसम ने इस बात को व्यक्त किया है कि अपने स्वत्व के द्वारा ही व्यक्ति दुनिया को समझ सकता है । उस दृष्टि से स्त्री का साहित्य भी,उसके अपने स्वत्व का आविष्कार है ।

जूलियट मिच्चल के मनोविश्लेषण और फेमिनिसम के प्रकाशन से मनोविश्लेषणात्मक स्त्रीवाद की संकल्पना उभर आयी । जो सत्री संबन्धी फ्रोयड_और सीमोन द बुआ के दृष्टिकोण की पुनर्व्याख्या है। इसमें फ्रोयड के विचारों को फेमिनिसम और मार्क्सिसम के साथ जोडा गया है । सित्रयों के दबाये गये मन के अन्दर जो प्रक्रियायें हैं उन्हें फ्रोयड के मनोविश्लेषणात्मक तथ्यों के आधार पर ही समझा जा सकता है । यह आधार भौतिकवाद के मौलिक तत्वों से भी मेल खाते हैं । फ्रोयड के सिद्धांत के अनुसार अपने शिश्न संबन्धी बोध होते ही पुरुषों में मातृमोह से सायास मुक्त होने की कठिन प्रक्रिया शुरू हो जाती है जिसके फलस्वरूप उनमें सामाजिकता , अनुशासनप्रियता और निर्णय लेने की क्षमता आ जाती है । 16 स्त्रियों को इस प्रक्रिया से गुज़रना नहीं पडता, इसलिए वे कम अनुशासित , कम सामाजिक और कम कठोर रह जाती है । लेकिन मनोविश्लेषणात्मक नारीवाद के अनुसार स्त्रियों के मातृत्व से जुडी संवेदनाओं में उन्हें मातृमोह से अलग होने की ज़रूरत नहीं पडती। इसका प्रभाव स्त्रियों के व्यक्तित्व पर पडता है । वे जल्दी किसी तरह के भावनात्मक स्खलन का शिकार नहीं होतीं । उनकी समर्पित और विलीन होने की क्षमता उनके

स्वतन्त्र अस्तित्व के विकास में बाधक हो जाती है । इस प्रकार स्त्री और पुरुष में कुछ स्वभावगत अन्तर रूपायित हो जाते हैं ।

सांस्कृतिक फेमिनिसम

सांस्कृतिक फेमिनिसम राडिकल फेमिनिसम से विकसित स्त्रीवादी विचारधारा है । यह सांस्कृतिक दृष्टिकोण है जो स्त्री संस्कृति को वरीयता देता है । स्त्री - पुरुष समता से भिन्न होकर स्त्री के अधिकार , सामाजिक एवं वैयक्तिक आचरण आदि के आधार पर सांस्कृतिक फेमिनिसम स्त्री - संस्कृति को प्रस्तुत करता है । मातृत्व, अत्मीयता , समलैंगिकता , स्त्रियों के आपसी संबन्ध आदि स्त्री संबन्धी सारी बातें स्त्री संस्कृति के अन्दर आ जाती हैं । इन्होंने स्त्री - पुरुष भिन्नता को , सत्री की विशेषताओं को उभारने के एक मार्ग के तौर पर अपनाया है । साथ - साथ पुरुष वर्ग की बुराइयों एवं कमियों को भी उभारा गया है । स्त्री - पुरुष समता के लिए लडने के साथ - साथ, असमत्व के नाम पर ये आरक्षण की मांग भी करते हैं । इस नारीवादी दृष्टिकोण पर सांप्रदायिकता का आरोप भी लगाया गया है ।

नारीवादी स्वर : माधवीकुट्टी में

कृष्णा सोबती और माधवीकुट्टी की रचनाओं में नारीवादी स्वर मुखर है। फेमनिस्ट दार्शनिकों की प्रमुख कृतियों से दोनों ने प्रभाव ग्रहण कर लिया है।

वर्जीनिया वुल्फ की रचना ' अपने लिए एक कमरा ' एक महिला लेखिका की सीमाओं की ओर गहराई से संकेत करती है। घर में सभी के अपने कमरे हैं। लेकिन नारी का अपना कोई कमरा नहीं, वह घर के भिन्न भिन्न कमरों में अलग अलग भूमिकाएँ निभाती जाती हैं।

मतलब लेखक के लिए जितनी सुविधाएँ उपलब्ध हैं, वे लेखिका के लिए नहीं हैं। घर में काम की भरमार की की वजह उसे साहित्य सृजन के लिए समय नहीं मिलता। पुस्तकें पढने व चर्चा में भाग लेने का अवसर नहीं मिलता।यहां तक कि घर में चैन से लिखने के लिए उसे अपना एक अलग कमरा तक नहीं। माधवीकुट्टी की ' मेरी कहानी ' में महिला साहित्यकार के इस दोयम् दर्जे की हैसियत और मुसीबतों को जिक्र किया गया है।- उन्होंने लिखा है कि घर के सारे कामकाज निपटाने और सबके सोने के बाद लिखने के लिए 'डाइनिंग डेबिल' ही वह इस्तेमाल करती थी। अतः रसोई और घर से संबन्धित पहचान से इतर अस्तित्व के लिए उसे दिन रात मेहनत करनी पडती थी। उनकी कहानी ' संसार एक कवियत्री का निर्माण करता है ', भी साहित्यकार के रूप में नारी के अन्तरद्वन्दों और समस्याओं को व्यक्त करती है। कहानी की नायिका कवि है, पति के स्नेहविहीन व्यवहारों से उसकी आर्द्रता भी सूख जाती है। पत्नी के व्यक्तित्व को न स्वीकारते हुए उसे मात्र एक भोगवस्तु माननेवाला पति उससे कहता है, ' मुझे स्त्रीयों की तरह व्यवहार करनेवाली स्त्रियाँ ही पसंद है। '17

बेट्टी फ्रीडन राडिकल फेमिनिसम की सशक्त वक्ता है। स्त्री परुष भिन्नता तथा नारी शोषण को उन्होंने हर प्रकार की गुलामी का मूल कारण माना है। केट मिल्लट की मान्यता है कि पहले से बेहतर मूल्यों को बदलने में लैंगिक आन्दोलन सक्षम है। स्त्री - स्वतंत्रता की ही नहीं, हर शोषण को नष्ट करने में यह कदम सफल होगा। समूचे नारी वर्ग को युगों से चली आई पुरुष की गुलामी से मुक्त करना ही केट मिल्लट का लक्ष्य रहा है। अपने शरीर पर निर्णय लेने

का अधिकार, स्त्री की लैंगिकता को पुरुष की परिभाषा से मुक्त करने की बात, लैंगिकता में जबरदस्ती और बलात्कार की समस्या आदि अनेक मुद्दों को उन्होंने फेमिनिज़म के अन्तर्गत लाने की कोशिश की। इन्हीं मुद्दों पर माधवीकुट्टी ने जबरदस्त कलम चलाई है। स्त्री की लैंगिकता को पुरुष से भिन्न मानते हुए उसकी खुली अभिव्यक्ति करने की कोशिश उन्होंने की है। गुलामी का अनावृत हो जाने के मनोवैज्ञानिक कारणों पर भी केट मिल्लट ने इशारा किया है। उनका विचार है कि अन्दर जमी हुई गुलामी को अनावृत करने पर ही स्त्री अपनी हालत के बारे में अवगत हो सकती है। फेमिनिस्ट साहित्य के संदर्भ में हर लेखिका अपने अन्दर की गुलामी का अनावरण करने के ज़रिए अपने स्वत्व को पहचान लेती है।

षूलामित फयरस्टोण की ' लैंगिकता की द्वन्दात्मकता '

नामक कृति में लैंगिकता की भिन्नता पर ही नहीं, परिवार, प्रेम आदि संस्थाओं की भी व्याख्या मिलती है। लिंग भेद संबन्धी उनका विचार है-

प्रजनन क्षमता से जुडी स्त्री - पुरुष की जैविक भिन्नता, लिंग पर आधारित स्रम के विभाजन की कारण बनी, जो बाद में आर्थिक सांस्कृतिक वर्ग विभाजन का उद्‌गम रहा, यहां तक की वह जीववैज्ञानिक विशेषताओं से जनित जातीय और वेशीय भेदभाव का भी मूल रहा।'18 जैविक - स्तर की स्त्री - पुरुष भिन्नता के संस्था का रूप धारण करने का परिणाम ही परिवार-व्यवस्था है। इस परिवार-व्यवस्था के कारण ही पुरुष ने सबसे ऊँचा स्थान हासिल किया और सब कुछ अपने अधीन कर लिया। इसलिए वह परिवार व्यवस्था के उन्मूलन की पक्षपाती हैं 19 और सभी प्रकार के शोषण का अंत लैंगिक क्रांति में

मानती है। 20 काल्पनिक प्रेम की भी फयरस्टोण आलोचना करती है। स्त्री और पुरुष के बीच की असमानता जब तक जारी रहेगी तब तक प्रेम विकल और स्वार्थ से कलंकित भी होगा। ' प्रेम आज स्त्री की गुलामी को सहारा देनेवाली धुरी बन गया है। ' 21 जब पुरुष एक स्त्री से प्रेम करता है तब वह उसे अन्य स्त्रियों से अलग करके उसका आदर्शीकरण करता है। अपने से निचले स्तर की स्त्री जाति की एक के साथ झूठा समत्व स्थापित-करना ही लक्ष्य है। अपनी प्रेमिका का जातिपरक पिछडापन दूर करने केलिए पुरुष उसे दूसरों से अलग करके उसके महत्व और आदर्श को घोषित करता है। प्रेम के प्रति फयरस्टोण की इस नज़रिये ने संसार भर के फेमिनिस्टों को बहुत अधिक प्रभावित किया। स्त्री रचनाओं में अब काल्पनिक प्रेम के लिए कोई स्थान नहीं रहा।

माधवीकुट्टी की रचनाओं का प्रमुख स्वर स्वतंत्रता का है। पिता के सख्त नियंत्रणों में पली माधवीकुट्टी के लिए आज़ादी एक ख्वाब थी। इसलिए उनके पात्रों ने विभिन्न किस्म की स्वतंत्रता की घोषणा की। नियमों का उल्लंघन करने में माधवीकुट्टी की व्यक्तित्व आनन्द का अनुभव करताहै। परिवार, समाज, परंपरा, व्यावहारिक जीवन नियम, सब कुछ का ध्वंस उनके पात्रों को विद्रोही बना देता है। उनका मन किसी से समझौता नहीं करता। इतना ही नहीं उसमें विद्रोह हमेशा दबा रहता है। मन के ये निःशब्द विद्रोह कभी कभी आत्महत्या में परिणत होता है। कभी कभी असंतृप्ति की गहराइयों में डूब जाता है। माधवीकुट्टी की हर पात्रा ज़्यादातर अपने आपसे झगडा करती हैं। लेखिका के अनुसार समाज और उसके परिवेश से झगडा करने के

लिए उनका मन और शरीर काबिल नहीं है। चार दीवारी के अन्दर - क्लब में, घर में, पार्टी में उनकी पात्राएँ अपने आपसे झगडा करती हैं। दूसरों से उनका व्यवहार भी कलुषित बनता जाता है। वे अपने मन को क्षुब्ध सागर बना देती हैं।

सीमोन द बुआ ने नारी को अपने अस्तित्व के बारे में सूचित करते हुए लिखा है कि पुरुषप्रधान समाज में स्त्री का स्वतंत्र अस्तित्व नहीं है। उसे ' अन्या ' ही समझा जाता है। 22

माधवीकुट्टी की 'पागलपन', 'कवि की पत्नी ',' मेरी सहेली अरुणा ', ' धोखा ', ' अरुणाचलम की कहानी ', ' पातिव्रत्य ', शतरंज ', ' सूरज ' आदि कहानियाँ स्त्री की इस हालत को मूर्त करती हैं। ' मेरी सहेली अरुणा ' में नायिका अरुणा, कॉलेज की प्रवक्ता है, पति से तिरस्कृत है। पति सुन्दर नेपाली नौकरानी फूलमती की ओर आकृष्ट है। यह जानेते हुए भी अरुणा कोई विरोध प्रकट नहीं करती। सब कुछ अन्दर ही अन्दर चुप चाप सहकर खिन्न रहती है। उसकी ज़िन्दगी घर, बच्ची और कॉलेज के दायेर में सिकुड जाती है। इस कहानी की परिणति के रूप में ' विभ्रान्ति ' शीर्षक कहानी लिखी गयी है। इस कहानी की नायिका भी अरुणा है जो पति के घोर तिरस्कार और उसके फूलमति नामक नौकरानी से अनैतिक संबन्ध के कारण पागलपन की शिकार हो जाती है। ऐसे कटु अनुभव के बावजूत वह पति को बेहद प्यार करती है। इसलिए अरुणा अपनी इस हालत के लिए उत्तरदायी पति को छोडकर जा नहीं सकती। वह बताती है - ' रात को जब मैं बत्ती जलाकर देखती हूँ तो उन्हें एक ओर मुडकर सोते हुए पाती हूँ। पैरों को टेढा करके हथेली पर मुख थामे एक छोटे लडके

के समान। विमला, वे कितने सुन्दर हैं। उन्हें सोते हुए देखती हूं तो सारे दुःख भूल जाती हूँ। नहीं, मैं उन्हें कभी छोडकर नहीं जाऊँगी। विमला, तुम समझती हो न? ' 23 स्त्री का पागलपन या उसका असंतुलित दिमाग भी स्त्रीवादी सैद्धान्तिक चर्चाओं का हिस्सा बन गया है। ' विभ्रान्ति ' एक तरह से नारित्व की उद्घोषण ही है। वह स्त्री के स्वत्वमें बाहरी शक्तियों की प्रेरणा से आनेवाले बदलाव की दर्दभरी सूचना है। यह भ्रान्ति की स्थिति-स्त्री और समाज के बीच की प्रतिकूल एवं विनाशकारी शक्तियों के संघर्ष के परिणाम के तौर पर ही संभव होती है। सीमोन द बुआ का यह कथन ' स्त्री पैदा नहीं होती, उसे बना दिया जाता है ', इस विचारधारा का स्रोत है। अपने मन की गहराई में सुप्त पडे पितृसत्ता के प्रति विरोध, स्त्री के दिमाग को बिगाड देता है। ' विभ्रान्ति ' और ' मेरी सहेली अरुणा ' कहानियों में यही बात जाहिर हो गई है। मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त द्वारा प्रदत्त स्त्री विरुद्ध मान्यताओं के उत्तर के रूप में असन्तुलित नायिकाओं का चित्रण किया गया है। पागलपन सब कुछ खोल देने व करने का लाइसन्स बन गया है। ' विभ्रान्ति ' में अपने पति के घोर तिरस्कार से उत्पन्न दुःख एवं घुटन का विस्फोट ही पागलपन में तब्दील होता है। उस अवस्था में मन के सारे दुःख, पति के प्रति विरोध आदि आक्रामकता के रूप में व्यक्त होते हैं। अरुणा कहती है - 'मुझे आजकल समय का कोई अता पता नहीं। कहा जाता है कि एक दिन मैं ने उन्हें मारने की कोशिश की। चाकू लेकर पीछे भागी। बताओ विमला, क्या मैं ये सब करूँगी ? '24

' कवि की पत्नी ' नामक कहानी का नायक विदेशी कवि है जो केरल आकर यहाँ की एक लडकी से शादी करता है। वह अपनी पत्नी से समभाव नहीं रखता, पत्नी के व्यक्तित्व व उसकी भावनाओं को नहीं मानता, बल्कि अपनी सृजनात्मकता की प्रेरक शक्ति के रूप में ही देखता है।

' सूरज ' नामक कहानी पुरुष के झूठे मुखौटे को खोल देती है। कहानी की नायिका अमृता है। उसके पति का दोस्त है उण्णिकृष्णन जो रात को पति की गैरहाज़िरी में उसकी ही चाबी से घर में घुस आता है और अमृता से शारीरिक सम्बन्ध साबित करता है। अमृता उसे प्यार करने लगती है, लेकिन वह उससे कहता है कि, ' अमृता, तू एक ऐसी स्त्री हो, यह मैं ने पहले सोचा नहीं था। ' 25 उसकी गोद में सिर रखते हुए वह अपनी देवदूत की तरह पवित्र प्रेमिका के बारे में सोचता है। उस लडकी, उसकी माँ, घर आदि सबके लिए अमृता अछूत थी। अन्त में अमृता जैसी ' ऐसी स्त्री ' को ठुकराकर वह उस पवित्र लडकी से शादी करके सुखी जीवन बिताता है। अमृता उसके प्रति दीवाना बनी रहती है। वह सोचती है, ' मैं तुम्हारी कौन थी ? एक स्त्री जिसने तुम्हारी पाशविक कामनाओं को हमेशा पूरा किया था। बस उतना ही। '26

शतरंज नामक कहानी जीवन रूपी शतरंज में अक्ष बनने के लिए मज़बूर मानव की कथा है। कहानी की नायिका अचला शादीशुदा है और पिता बराबर सौम्यमूर्ती से प्रेम करने लगती है। लेकिन वह उसके प्यार को स्वीकारता ही नहीं बल्कि उसे छोडकर चला भी जाता है। लेकिन आचला अपने तन मन के कण कण से

सौम्यमूर्ती को प्यार करती है। ' प्यार की गिरफ्त में पडी स्त्री के लिए प्रेमी के शरीर के एक हिस्से का प्यार काफी नहीं है। वह उसमें नासूर की तरह पल्लवित होना चाहती है। अन्दर दर्द एवं विचार भरने के लिए ..... यही प्यार की विशेष क्रूरता है।'27 और वह यहाँ तक सोचती है , ' मैं उनके अन्तर्मन में सुन्दरता के साथ जीना चाहती हूँ, एक मुस्कुराहट के समान ; धूप की ज्वाला की भान्ति ... '28 इस कहानी में मनोवैज्ञानिक नारीवाद का भी प्रभाव हम देख सकते हैं। सौम्यमूर्ती के प्रति आचला का प्यार एवं भावनाएँ इतना समर्पित एवं पूर्ण है कि वह किसी सामाजिक मान्यता या अनुशासन की परवाह नहीं करती और पने व्यक्तित्व को भी भूलकर प्यार में विलीन रहती है। जबकि सौम्यमूर्ती अपने पुरुष सहज सामाजिकता, अनुशासन से अचला से दूर रहने का निश्चय करता है, यह फरमाकर कि ' मैं उम्र में तेरे पिता के समान हूँ। आचला ! यह तो तू जानती है न ।'29

' धोखा ' कहानी की नायिका अधेड उम्र की एक डॉक्टर है। अपने पचासवें जन्मदिन पर व्यस्तता के बावजूद आधीरात को पति से मिलने वह बेताबी से घर पहूँचती है तो देखती है कि उनके शयनकक्ष में पति एक दूसरे स्त्री के साथ सो रहा है। वह जान लेती है कि वह धोखा खा गयी है। वह चुपचप घर से चली जाती है। पचास साल की वह औरत अपने बुढापे से डरती नहीं थी। लेकिन अचानक उसे लगता है कि वह बूढी हो गयी है। अपने पति के प्यार पर उसे पूरा भरोसा था, मगर पति उसे सिर्फ एक भोग की चीज़ समझता है, इसलिए उसके अभाव में वासना तृप्ति के लिए दूसरी जवान ओरत का उपयोग करता है।

' अरुणाचलम की कहानी ' ऐसे एक व्यक्ति की कहानी है जो ज़िन्दगी भर अनुशासन एवं सदाचार का पालन करते हुए नियमित ज़िन्दगी बिताने के बावजूद अंत में कुछ भी हासिल न करने के एहसास से पीडित है। अरुणाचलम बुद्धि एवं सामर्थ्य से युक्त है, इंगलैंड में शिक्षा प्राप्त करता है। लेकिन अपनी बुद्धि एवं सामर्थ्य को प्रकट करने में वह सकुचाता है। अपने आपको आम से विशिष्ट स्थिति की ओर बढाना उसे अच्छा नहीं लगता । उससे उत्पन्न अकेलापन हो या मैत्री सम्बन्धों में निहित ज़िम्मेदारियां हो वह उन सबसे बचना चाहता है । इससे भिन्न उसका भाई रामन, वकील और कवि बन जाता है । स्वच्छ मन एवं प्यार के साथ सुखी पारिवारिक जीवन बिताता है । अरुणाचलम को लगता है- ' आदमी को अपनी पत्नी से प्यार है तो उसे कविता और कहानी के माध्यम से जाहिर करना तुच्छ एवं गौरवहीन प्रवृत्ति है । '30 उनके यही दृष्टिकोण के कारण वह कभी अपनी पत्नी को संतोष देने में कामयाब नहीं होता। सदाचारी होने के कारण अपनी प्राइवेट सेक्रटरी अपर्णा रोय के प्यार को भी वह ठुकरा देता है। वह स्त्री को समभावना से देखने के बजाय निचले स्तर की मानता है। उसका विचार है कि स्त्री, पुरुष के प्यार एवं मान्यता की हकदार नहीं है। अंत में अपने शांत एवं विनय से युक्त ऊपरी छिलके को तोडकर तन मन का सच्चा आदमी बनने की तमन्ना से वह मर जाता है। अपने यह विचार कि स्त्री के प्रति समभाव अवांछनीय है, वह अन्या है आदि के कारण ही वह दोनों स्त्रियों से यह रवैया अपनाता है।

' पातिव्रत्य ' नामक कहानी का नायक दिलीप है जो अपनी उन्नति एवं शान को कायम रखने के लिए, पति और रखैल दोनों के प्रति अन्याय करता है। वह गॉव के एक ज़मीन्दार की बेटी, जो असुन्दर और थोडा पागल है, से शादी करता है और ज़मीन्दार के दौलत से उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए विदेश जाता है। आठ साल बाद लौटते हुए वह 'जिल' नामक विदेशी लडकी को भी साथ लाता है । उससे अत्यंत प्यार रखने के कारण ही जिल उसके मना करने के बावजूद रखैल बनने के लिए तैयार हो जाती है। लेकिन दिलीप उसे सामाजिक शान की खातिर माँ बनने नहीं देता। उसके अकेलेपन को बाँटने एक तोता और पिल्ले को लाकर देता है। एक तरह वह पिंजडे में बंद जीवन बिताती है और भीतर से बुरी तरह टूट जाती भी है। दूसरी ओर पत्नी के प्रति भी दिलीप तिरस्कारपूर्ण व्यवहार करता है। पत्नी फटी पुरानी सफेद साडी में, दूसरों से झगडा करते हुए, एक तरह पागल सी रहती है। इसप्रकार पत्नी और रखैल दोनों पातिव्रत्य का पालन करती हैं, एकनिष्ठ रहती हैं मगर पति दोनों का तिरस्कार करता है। यहाँ नारी के दूसरे दर्जे की दीन स्थिति की ही त्रासद अभिव्यक्ति हुई है।

बेट्टी फ्रीडन की नारीवादी विचारधारा से प्रभाव ग्रहण करते हुए भी माधवीकुट्टी ने अनेक कहानियाँ लिखी हैं। ये कहानियाँ पुरुष के अधीशत्व के प्रति विरोध प्रकट करती हैं। यह विरोध कभी पागलपन,कभी बीमारी और कभी मृत्यु के रूप में जाहिर होता है। ' पक्षी की गंध ' नामक कहानी इन तीनों का समुच्चय है। कलकत्ता के एक टेकस्टाइल कंपनी का विज्ञापन पढने के बाद नौकरी के वास्ते

नायिका सात मंजिल के मकान में पहुँच जाती है। मकान की दूसरी मंजिल में ' क़त्र्दढ़ ' बार्ड लगाये एक कमरे में एक शराबी नौजवान से उसकी मुलाकात होती है। उसके माखन के रंग की कमीज़ और काले रोएँ से युक्त बलिष्ट हाथ देखकर वह बुरी तरह डर जाती है। युवक उससे बता देता है कि यहाँ कपडों में रंग भरने का काम नहीं होता, बल्कि मृत्यु का इन्तज़ाम कर दिया जाता है। वह उससे मृत्यु की विशेषता एवं सुन्दरता की बात करने लगता है - ' सिर्फ मैं ही तुझे स्नेह की परिपूर्णता दिखा सकता हूँ, तू मुझे एक एक करके सब कुछ सौंप देगी.....लाल लाल होंठ, चंचल निगाहें। अंग लावण्य से युक्त तन .... सब कुछ... एक एक रोम भी तू सौंपेगी। कुछ भी तेरा नहीं रहेगा, फिर इस बलि के बदले मैं तुम्हें आज़दी दूँगा। तू हवा बनेगी, बारिश की बूँदें बन जाएगी, तू मिट्टी के कण कण में समा जाएगी.... तू इस धरती की सुन्दरता बनेगी....'31 अन्त में वह यह सोचते हुए वहाँ से बाहर निकलती है कि अपनी मृत्यु का समय नहीं आया है। नीचे जाने के लिए वह लिफ्ट में चढती है, लेकिन वह लिफ्ट खराब था। फिर लिफ्ट के गर्जन और अंधेरे की गिरफ्त से वह कभी बाहर नहीं आई।

कहानी की नायिका मानसिक रूप से विह्वल और आतुर है। यहां युवक को मृत्यु एवं पुरुषमेधा समाज, दोनों का प्रतीक बनाया गया है। अन्चाहे यौन संबन्ध उसके लिए मृत्यु के बराबर है। एक बीमार समाज के संत्रस्त नारीमन का शक्तिशाली आविष्कार है यह कहानी- ' पुरुष की ताकत के आगे वह एक बेबस चिडिया है। उसके जूतोंतली कुचल जाती चिडिया। बच जाने में असमर्थ, कहीं भी जाने के लिए नाकाबिल, कांच की दीवारों के तहत मरी पडी चिडिया।'32 पुरुष

के अत्याचार और यंत्रणाएँ उसे विह्वल और भयभीत बना देती है। तब भी वह बचाव व, आस्रय के लिए उसके ही पैरों पडती है, उसके सिवाय वह कुछ भी नहीं कर सकती।

' रात में ' नामक कहानी में पुरुष अधीशत्व के खिलाफ विरोध प्रकट है- ' शादी के तीन साल बाद वह बिलकुल बदल जाता है। सुमति के लिए आवश्यक सभी चीज़ें वह खरीद तो देता है। लेकिन, उससे लाड-प्यार भी नहीं करता। उससे गुस्सा भी नहीं करता।.....सुमति उस घर के एक खंभा या पलंग के समान रह जाती है। वह चाहे कैसी भी साडी पहने, पति ध्यान नहीं देता। वह नौकरी के बाद घर लौटकर किताबें पढता रहेगा। लेकिन..... रात हो जाती तो यह अरसिक और किताबी कीडा अपनी यौन हविश प्रकट करता है। फलतः अपने पति और इस शादीशुदा जिन्दगी से उसे घृणा होने लगी। रात हो जाने पर उसके मन में गुलामी का एहसास फन उठायेगा। सिर टेढा करके उसके संतृप्त हो सोते देखकर उसे लगेगा, जानवर ! असली जानवर ! मैं खुद उसकी गुलाम।'33 यहाँ स्त्री को नीच दृष्टि से देखते व लैंगिकता के मामले में स्त्री को दूसरे दर्जे की हैसियत ही नहीं सिर्फ भोग वस्तु मानते पुरुष अधीशत्व के खिलाफ लेखिका ने ऊँगली उठाई है।

केट मिल्लट का विचार है कि स्त्रियों की चेतना में गुलामी का एहसास अन्तरनिहित है और उसका स्वाभाविक आविष्कार ही नारीवादी साहित्य है।34 यह कथ्य माधवीकुट्टी की रचनाओं के सन्दर्भ में बेहद सार्थक है। उनकी अधिकांश कहानियों की नारी प्रतिशोध का स्वर बुलन्द करती है लेकिन अंत में सबकुछ सहते हुए

हार मानती है। पति से असंतुष्ट हो दूसरे पुरुषों का साथ खोजती उनकी नायिकाएँ अंत में परिवार की ओर वापस आती है। यों निसहाय नारी के मन में दबी पडी गुलामी ही आविष्कृत होती है। पुरुष सत्ता के खिलाफ प्रतिशोध करते हुए भी उनकी पात्राएँ यह साबित करती हैं कि यह प्रतिशोध सिर्फ एक ऊपरी चिलका या मुलम्मा है। अन्दर ही अन्दर वे सब पुरुष की गुलाम ही हैं। युगों से जिस गुलामी को सहती आ रही है उससे जल्दी मुक्ति सम्भव नहीं है। इसलिए ही आज भी कई स्त्रियों पुरुष के सामने हार मानना एक प्रकार की उपलब्धि समझती हैं।

नारी मन की ऐसी आंदरिक गुलामी की ओर इशारा करनेवाली माधवीकुट्टी की और एक कहानी है ' प्रेम का विलाप काव्य '। आत्मकथात्मक शैली में लिखी गई इस कहानी के नायक की रखैल है कथावाचिका। रात के अन्धेरे में वह उससे मिलने आती है, सुबह होते ही चली जाती है। उसकी शारीरिक विशेषताओं का वर्णन करते हुए वह कहती है कि वह पुरुष है। प्रतापशाली है। दोनों के आपसी संबन्ध के बारे में वह कहती है - ' मेरे अन्दर के खून की नदियों के किनारे, शिकार में थक गए राजा के समान तू आराम करता है। तुझे शंका होती है कि कहीं वे पुराने जंगली पेडों की जडे नहीं हैं? तू मेरा खून पीता है। मेरा मांस खाकर ही तू मोटा बनता है।'35 फिर भी वह उससे सच्चे दिल से प्यार करती है। बदले में उससे प्यार और सम्मान चाहती है। उसके सपनों की नीली झीलों में पुरुष का चेहरा एक नील कमल के समान प्रफुल्लित है। लेकिन स्त्री को सिर्फ वासनापूर्ति का उपकरण मानते हुए वह उससे कहता है कि माँ की तरह पेश नहीं आना ; पत्नी की तरह रहो। फिर भी पुरुष के प्यार और अधीशत्व के

सामने नारी सहज ही झुक जाती है। इसलिए ही वह सोचती है,' मैं आशा करती हूँ, कम से कम एक बार ही सही तू मुझसे कहेगा कि लौटना नहीं। और यह भी कि कभी दूसरों के चेहरों में से मेरा अपना चेहरा भी तू पहचानेगा।'36

पुरुष मेधा समाज में पुरुष की बागडोर के अनुसार चलती नारी का रूप ' कठपुतली ' नामक कहानी में दृषटव्य है। कहानी की नायिका है मोणा। जिसकी वह रखैल है, उसे वह राजा कहती है। उसे योगा सिखाने आते पंजाबी युवक के प्यार को पहचानने की हिम्मत उसमें नहीं है। तन मन से वह राजा की गुलाम है। गुलामी का एहसास उसमें इस हद तक व्याप्त है कि अपनी स्थिति की पूरी जानकारी होने पर भी वह उसमें बदलाव लाना नहीं चाहती। वह सोचती है, ' राजा के काले शरीररूपी ग्रीष्म के पीछे क्या कभी मेरी जिन्दगी की बहार संभव थी? पता नहीं, उनके कामरूपी सन्ध्या के पीछे क्या कभी मेरी जिन्दगी में एक दोपहर था या नहीं। मुझे याद नहीं। बिलकुल याद नहीं। ...मेरी इस नयी दुनिया में समय ठिठुरकर पडा है। जिन्दगी मेरे लिए एक मधुर स्वप्नाचार बन गयी है। '37 राजा उससे प्रेम करते श्याम नायक पंजाबी युवक की हत्या करता है। यह जानकर भी वह निस्संग रहती है। वह सोचती है- ' मुझे याद आयी कि उन्होंने कभी कहा था कि मेरे शरीर में पुराने मंदिरों के पत्थर की मूर्तियोंकी ठंडक और दृढता है। दर्पण में अनेक प्रतिबिंबों में मेरा नंगा शरीर खिल गया- भूरे रंग की एक कठपुतली '38 कहानी यही दुर्निवार सत्य को उन्मीलन करती है कि पुरुषमेधा समाज की गिरफ्त में नारी की चेतना ठंडी पडी है।

' मेरीन ड्राईव ' कहानी में नायक को जंगली भैंसा अभिहित किया गया है जो राजनीतिज्ञ है और अपनी कूटनीति और कुतंत्रों से समाज को अपने शिकंजे में कस लिया है। नायिका अनसूया उसकी उसकी अनेक रखैलों में एक है। नारी को सिर्फ भोग की वस्तु समझते उस जंगली भैंसे से तंग आकर वह उससे अपना सम्बन्ध तोडती है। पुरुषवेश्या की हैसियत के तौर पर उसे मोटी रकम वह भेज देती है।अंत में वह नीच आदमी अनसूया को मार डालता है। यद्यपि उससे नाता तोडने का साहस तो अनसूया ने दिखाया तो भी अन्दर ही अन्दर वह उससे तब भी प्यार करती थी। पुरुष का प्यार चाहती नारी कभी प्रेम से मुक्त होना भी नहीं चाहती। जैसे, कहानी में बतायी गयी है - ' वह समझ गई कि यद्यपि जीवन का अंत होता है पर प्यार का अंत ज़रूरी नहीं है।'39

'स्वतंत्र जीवी ', 'गलियारों के आइने' जैसी कहानियों में भी लोक लाज के भय के कारण प्रेमिकाओं को ठुकरानेवाले पात्र नज़र आते हैं। 'स्वतंत्र जीवी ' का नायक के लिए, नायिका बेबी ' बेबी वुमन ' के समान है। वह उसे अबोध बालिका मानता है और वैसा ही व्यवहार भी करता है। उसके मन की अरमानों और भावनाओं पर भी अंकुश लगाता है। जैसे, ' तू जब इतनी सीरियस हो जाती है तो मुझे तुझसे डर लगने लगता है।.....तू बच्ची बनी रह। हँसती रह। हमेशा बच्चों जैसी हरकतें करती रह। '40 बच्ची की अचेत स्थिति से उबरकर नारी जब अपने अस्तित्व व वास्तविक स्तिति से अवगत हो जाती है तो पुरुष उससे डरने लगता है कि कहीं अपने हाथ से उसकी बागडोर न छूट जाए। नारी से कोई खतरा न हो, इसलिए पुरुष उससे क्षमा, त्याग

और विवेक जैसे गुणों की अपेक्षा करता है। इन सबसे आत्यंतिक मुक्ति सम्भव नहीं है, यह जानती हुई भी वह प्रेमसम्बन्ध को तोडने का प्रयास नहीं करती। हार मानकर उसके पैरों में पडी रहती है। जैसे, ' उसने रोना चाहा। ज़ोर से, बच्चों की तरह ; किसी नियंत्रण के बिना फूटफूटकर रोना चाहा। लेकिन, अपनेआप को विवेकशील मानती उस युवति को उस प्रकार रोने की भी हिम्मत नहीं हुई। इसलिए नींद की दो गोलियाँ खाकर वह पलंग में जाकर लेटी।'41

'गोलियारों के आइने ' में पति के होते हुए भी प्यार के अभाव में मानसिक असुरक्षा अनुभव करती माधवी सौम्यमूर्ती से प्यार करती है जो उसके पति के बैंक के महाप्रबंधक है। वैवाहिक जीवन की और पत्नी के प्यार के अभाव में सौम्यमूर्ती भी माधवी से प्यार करने लगता है। लेकिन अधेड उम्र के सौम्यमूर्ती में जवान माधवी के प्रति अपने प्यार को खुलकर प्रकट करने की हिम्मत नहीं है। इसलिए माधवी के प्यार से छुटकारा पाने के लिए सौम्यमूर्ती अपने अधीन काम करते माधवी के पति प्रेमचन्द्रन का तबादला कर देता है। लेकिन पति के साथ जाने के लिए माधवी तयार नहीं होती और वह तलाक की माँग करती है। बाद में सौम्यमूर्ती को यही खबर मिलती है कि माधवी पानी में डूबकर मर गई है। कृष्ण के सनातन प्यार के लिए तरसने वाली राधा की आत्मा ही माधवी में भी स्पन्दित है। स्त्री की आत्मा में सनातन प्यार की चाहत बनी रहती है, इसलिए विद्रोह करने के बावजूद वह हार मानती है।

चिरप्रतिष्ठित मिथकों की पुनर्व्याख्या करने की प्रवृत्ति नारीवादी विचारधारा में भी है। केटमिल्लट के इस विचार से प्रभाव

ग्रहण करती हुई माधवीकुट्टी ने कहानियाँ लिखी हैं। ऐतिहासिक दृष्टि से स्त्री को एक पूरक या माध्म के रूप में स्वीकारा गया है, लेकिन उसे वह स्वतंत्र सत्ता नहीं प्राप्त हुई जो उसकी अस्मिता को सही अर्थ दे सके। एक ओर उसे देवी या शक्ति के रूप में पूजते गए तो दूसरी ओर उसका शोषम भी होता गया। ये दोनों प्रक्रियायें सदा से चलती रही हैं, कहीं कम तो कहीं ज़्यादा।

'राधा की चिट्ठी' नामक कहानी में श्रीकृष्ण और राधा के मिथक के आधार पर, स्त्री पुरुष के सनातन संबन्ध, एवं स्त्री मानस में निहित अनश्वर प्रेम की चाहत को व्यक्त किया गया है। श्रीकृष्ण को संबोधित राधा की चिट्ठी के रूप में कहानी लिखी गई। प्रस्तुत कहानी में राधा को अमानवीय के बदले आम औरत का दर्जा देने की कोशिश हुई है। यानी साधारण औरत के समान पुरुष-प्रेम के लिए अभीप्सित एवं उसे अपना बनाये रखने की इच्छा से युक्त स्त्रीत्व के रूप में राधा के मिथक को पुनःसृजित किया गया है। पुरुष की वासना के आगे अपने को एक अपभोग्य चीज़ मतलब एक आत्माविहीन शरीर समझती हुई राधा जी रही है। पुरुषमेधा के सामने नारी मन का झुकाव उसकी आंतरिक गुलामी के कारण ही होता है। पुरुष के बिना वह अपने आपको नगण्य समझती है। जैसे माधवीकुट्टी ने लिखा है, 'प्यार करनेवाली स्त्री का दर्शन कितना सीमित रहता है। तेरे शरीर की सीमाओं के पार, उन ठंडे पैर की उँगलियों के पार, खोखले और अनन्त पडे रहनेवाले एक संसार को मैं देखना नहीं चाहती थी। मैं ने यही चाहा कि मेरी दुनिया हमेशा तेरे छः फुट के अन्दर समेटी रहनी चाहिए।'42

'राजा की मेहबूबा' में राजा परोक्षतः श्रीकृष्ण का ही प्रतिरूप है। राजा को आदर्श की गरिमा से नीचे उतारकर मानवीय दुर्बलता और चपलता से युक्त मानव के रूप में चित्रित किया गया है। अधेड उम्र का वह पुरुष, राजा, राजनीतिक नेता है। नायिका उसकी रखैल है। वह कवयित्री भी है। राजा से संबंन्ध रखते उसकी सर्जनात्मकता कुन्द हो जाती है। उसे जिस आत्मीय व आदर्श स्नेह की तलाश अपनी कविताओं द्वारा खोजती थी, वह राजा में प्राप्त हो जता है। पुरुष सत्ता के आगे हार माननेवाले, सबकुछ न्योछावर करनेवाले स्त्रीत्व की संकल्पना को पुरुष-मेधा समाज की सृष्टि प्रणयिनी राधा के मिथक को झकझोर कर दिया गया है। प्रेमिका से मोहमुग्ध प्रेमी के बारे में वह सोचती है, 'तेरे गर्व को, नये लाल रेशम जैसे तेरे गर्व को मैं टुकडा टुकडा करके फाड देती हूँ न।'43 पुरुष के प्यार के प्रति अदम्य चाहत और उसके आकर्षण-जाल में रहते हुए भी अपने अस्तित्व की पहचान से लैस नारी का दूसरा रूप ही यहाँ प्रकट होता है। जैसे, 'मैं ने इस आदमी को झकझोर दिया। उनकी गंभीरता को नष्ट कर दिया। उनके स्वाभिमान को बुझा दिया। प्रशासन कार्यों से उन्हें विमुख बना दिया। मैं ने उनको एक कठपुतली बना दी।'44 फिर उसे पहले जैसे वीरपुरुष एवं सफल नेता बनाने के लिए, उसका साथ छोड़कर जाने का निश्चय भी वह करती है। यों स्वार्थ से ऊपर उठकर उदात्त मानसिकता की हकदार नारी का चित्र कहानी में उभर आया है।

कृष्ण के मिथक पर लिखी गयी है और एक कहानी है 'धनश्याम'। नारी मन में पौरुष की जो संकल्पना मौजूद है उसका

मूर्तरूप है श्रीकृष्ण। माधवीकुट्टी की अनेक कहानियों के राजा भी वही है। कृष्ण, समाज के विराट स्वप्न का प्रतीक है। कृष्ण के प्रति अनुराग के माध्यम से सचमुच दबायी गयी सहज कामनाओं की उछाल ही होती है। गोपिकाओं के साथ रमनेवाला, कुब्जा को सुन्दरी बनानेवाला, दृष्ट मामा का वध करनेवाला कृष्ण का संबन्ध यथार्थ जीवन से अधिक एक़ सपनीले अयथार्थ दुनिया से है। अगर राम आदर्श जीवन का नमूना है, तो कृष्ण प्रेमी है, आत्मा की सहज भावनाओं का साक्षात्कार है। लेकिन इस कहानी का कृष्ण अलग है। उन्होंने लिखा है - 'अन्धे को सौ रुपए दान देने के समान ही मैं ने उनके प्यार किया। क्योंकि, उन्होंने मेरे प्यार में विश्वास नहीं किया।..... उनके अन्दर सदैव अन्धेरा था।'45 कृष्ण के अन्दर के भोगवादी पुरुष को उजागर करते हुए उनके प्यार केलिए तरसनेवाली राधा जो पुरुषमेधा समाज के चंगुल में फंसी अपनी स्थिति के बारे में कहती है - 'ओ श्याम, मेरे धनश्याम, एक मछुवारे के समान तू मेरे मन की खाड़ी में जाल फेंका है। मोहमुग्ध मछलियाँ के समान आज शब्द तेरी ओर दौड़ आ रहे हैं।'46

समाज में हर पुरुष का अपना अलग अस्तित्व है। यह सर्वमान्य भी है। लेकिन स्त्री का सिर्फ एक सामान्य अस्तित्व ही नहीं उसकी एक पूर्वनियोजित भूमिका भी है। उस भूमिका के दायरे में उसे नियंत्रित रखने की कोशिश समाज हमेशा करता है। 'गिद्ध' कहानी की नायिका इन्दिरा में समाज के इस पूर्वनियोजित विचार से विद्रोह करने की मानसिकता है। वह अपनी बेटी से कहती है, 'उस गिद्ध को देखो। हमें उसे पकडना है। उसे बरामदे में बेडियों में डालना है।

फिर उसे भूख से तड़पा तड़पाकर मारना है।'47 इन्दिरा पतिव्रता नारी की आदर्श संकप्लना को किनारा करके दुसरे पुरुष के साथ प्रेम सम्बन्ध स्थापित करती है। इन्दिरा गिद्ध को पुरुषमेधा समाज का प्रतीक मानती है। उसे बेडियों में डालने की कल्पना करती हुई इन्दिरा अपने पति से कहती है, 'तुम स्वतंत्रता के बारे में क्या जानते हो? तुम्हारा मन दूसरों द्वारा सजाए एक कमरे में, अपने सारे व्यक्तित्व को भूलकर एक कोने में सिकुड पड़े तुच्छ प्राणी है। मगर, मेरा मन गिद्ध के समान आकाश में उडान भरता है। झीलों के ऊपर, जंगलों के ऊपर।'48..... यहाँ पति और प्रेमी को स्त्री के प्यार के लिए तड़पते पुरुष के रूप में चित्रित किया गया है। 'स्वतन्त्र जीवियाँ', 'सूरज' जैसी कहानियों से भिन्न यहाँ नारी प्रेमी से प्यार करते हुए भी उसके साथ घर बसाने तथा उससे सम्मान पाने के लिए उसके पैरों पडती नहीं है। यहाँ भी पुरुषमेधा सामाजिक परिवेश से संत्रस्त नारीमन उन्माद की अवस्था में पहुँच जाता है। जिसके साथ इन्दिरा की शादी हुई, उससे वह कभी प्यार नहीं करती थी। मन की गहरी असुरक्षा की भावना उसमें विद्रोह भरा उन्माद पैदा करती है। इस उन्माद में वह सचमुच एक गिद्ध को बेडियों में डालती है। लेकिन नायिका की स्थिति खुद उस गिद्ध के समान हो जाती है जो बेडियों की गिरफ्त में पडकर मर जाता है। अपने प्रेमी का अपनी बेटी के साथ अनैतिक संबंध की जानकारी से वह भीतर ही भीतर टूटकर मर जाती है। बेटी की हरकतों के माध्यम से नारी मन की स्वार्थता को भी कहानीकार ने उजागरित किया है।

अस्वतंत्रता के बावजूद पत्नी की अवश्य गरिमा होती है। प्रेमिका की भी अलग हैसियत है। एक व्यक्ति जब प्रेमी या प्रेमिका बनता है तो वह देवता के समान अलौकिक दुनिया में विचरण करने लगता है। 'बंजर ज़मीन' का नायक शादी के बाद भी प्रेमिका से प्रेम सम्बन्ध ज़ारी रखने के लिए विवश है। यद्यपि दोनों का वैवाहिक जीवन संतुष्ट नहीं है तो भी बाद में प्रेमिका के प्यार को ठुकराने के लिए वह मजबूर हो जाता है। प्रेमिका की भलाई केलिए वह अपने प्रेम को मन में ही छिपा रखता है और उसे अपने से अलग होने के लिए प्रेरित करता है। अपने से बिछुड जाती प्रेमिका उसके अन्दर गहरी कसक बनकर रह जाती है - 'दर्शन देने के बाद अप्रत्यक्ष होनेवाले देवता के समान वह ओझल हो रही है। अपने एकाकी, एकांत और विदूर जगह की ओर। दुख की बूवाले पत्थर के मंदिर की ओर।'49

माधवीकुट्टी की अधिकांश कहानियाँ, समाज द्वारा स्वीकृत, स्त्री संकल्पना के खिलाफ विद्रोह प्रकट करती हैं। पुरुषमेधा समाज द्वारा बनायी गयी स्त्री संकल्पनाओं की सीमाओं को उलाँघने का विद्रोहात्मक प्रयास उन्होंने किया है। इसलिए समाज की झूठी नैतिक मान्यताओं को नकारते हुए नैतिकता की नई व्याख्या भी उन्होंने प्रस्तुत की है। 'शतरंज' नामक कहानी में पति, पुरुषमेधा समाज का प्रतीक है। उस समाज द्वारा स्त्री पर लगाये जाते सख्त नियंत्रणों का मूर्त रूप है।

जूलियट मिच्चल ने फेमिनिसम और मनोविज्ञान के आपसी संबन्ध पर लिखा है। उन्होंने फ्रोयड के मनोविज्ञान के लिए स्त्रीवादी नज़रिए की एक अलग व्याख्या भी प्रस्तुत की है। मिच्चल ने अबोध

मन के अस्तित्व को स्थापित करने तथा लैंगिकता की नई व्याख्या देने की कोशिश की थी। उनका यह दृष्टिकोण माधवीकुट्टी की कहानियों में उतर आया हैं। अपने ऊपर थोपे जानेवाले बाझ के स्थान पर स्त्री को पुरुष के समान ही अपनी नियति को खुद निर्णय करने की स्वतंत्रता तथा व्यक्तित्व को हासिल करना चाहिए। यह तभी संभव है जब वह पुरुष की गुलाम की हैसियत के खिलाफ़ विद्रोह करने के लिए सक्षम बनेगी - जरमेयिन ग्रियर की इस विचारधारा को माधवीकुट्टी ने स्वीकारा है कि स्त्री की अपनी लैंगिकता का आविष्कार पुरुष की लैंगिक अभिलाषाओं के तहत नहीं, बल्कि स्वतंत्र रूप से होना चाहिए। नारीत्व संबन्धी पुरानी संकल्पनाएँ पुरुष द्वारा निर्मित हैं। ग्रिगर की मान्यता है कि पुरुष से इतर अपनी इच्छा को निर्णित न कर सकने की नपुंसक स्थिति से नारी को मुक्त होना चाहिए। पुरुष की लैंगिक इच्छाओं के खिलाफ विद्रोह करती अनेक पात्राएँ माधवीकुट्टी की कहानियों में हैं। 'रात में' कहानी की सुमति की शादी हो के तीन साल हो गए हैं। वह पति के प्रेमविहीन यांत्रिक सम्बन्धों से संतुष्ट नहीं है। उसे अपने प्रेमी राजन के काल्पनिक प्रेम में भी विश्वास नहीं है। प्रेम और वैवाहिक संबन्ध को अलग अलग माननेवाली सुमति का मन स्नेह और सान्त्वना पाना चाहता है। 'कोहरा' की युवा नायिका अपने वृद्ध पति से संतुष्ट नहीं है। यद्यपि पति के वात्सल्य से वह अवगत है लेकिन उसका यौवन पति के बुढापे से नफरत करने लगता है। एक बच्चे के पति की आशा भी उसमें नफरत ही पैदा करती है। उसका मन और शरीर एक युवा पुरुष के प्यार केलिए तरसते हैं। वास्तव में यह हविश ही पति के प्रति द्वेष और नफरत के रूप में प्रकट

होती है। इसलिए वह अपने शरीर को चूमते पति को मारने की धमकी देती है।

परिवार, प्रेम, विवाह, मातृत्व आदि को संस्थाकृत करने की कोशिश के खिलाफ आधुनिक नारीवादियों ने आवाज़ बुलन्द की है। वे इन संस्थाकृत रूपों के तहत नारी के व्यक्तित्व एवं अस्मिता ही नहीं उसकी सहज इच्छाओं व भावनाओं को भी कैद करने के खिलाफ है। षूलामित फयरस्टोण के इस विचार को माधवीकुट्टी की 'माहम का घर', 'कोहरा', 'स्थगित हणिमूण', 'रात में', 'नदी फिर से बही', 'गलियारों के आइने', 'पातिव्रत्य की समस्या' आदि कहानियाँ गहराती हैं। इन कहानियों में वैवाहिक एवं पारिवारिक संस्था से बाहर जाने केलिए इच्छुक पात्राएँ हैं। इसकी स्पष्ट झलक 'कोहरा' में है। नायिका में इसकी प्रबल इच्छा है कि अनमेल विवाह और उससे बनते परिवार से किसी न किसी प्रकार बच जाए - 'उसे लगता है कि अपना दुबला शरीर गुस्से में जल रहा है। वह चाहती है, कि हे भगवान, एक मशाल के समान जल सकूँ तो, ... अपनी ज्वाला से इस घर और बूढे को जलाकर राख कर सकूँ तो.....'50 फिर उसका मन नीचे मुहल्ले में गाते गायक की ओर मुड जाता है। 'माहम का घर' कहानी की नायिका नवपरिणीता होने के बावजूद प्रवासी पति से प्यार नहीं करती। वह विवाह के कटघरे से बाहर आना चाहती है। वह अपने पडोसी, शराब का अवैध धंधा करते शादी शुदा पुरुष के प्रति आकृष्ट हो जाती है।'रात में 'और 'नदी फिर से बही 'कहानीयों में नायिकाएँ विवाह के पहले और बाद में पति से ऊबकर पर-संबंधों को स्वीकारती हैं। लेकिन अंत में परिवार और पति के प्यार की ओर वापस आती है।

यहाँ लेखिका की परिवार संबंधी भारतीय संकल्पना ही उभर आई है जिसमें परिवार समाज की इकाई है। विवाह, मातृत्व तथा परिवार के संस्थाकृत रूपों के टूटने से समाज में अराजकता आ सकती है। माधविकुट्टी ने इस कहानी के माध्यम से इसकी ओर संकेत करने की पुरजोर कोशिश ही की है।

'स्थगित हणिमूण' में पति और पत्नी विवाह के पन्द्रह साल बाद हणिमूण मनाने जा रहे हैं - 'उसे बेहद गुस्सा आ रही थी। अपने और पति के साथ सफर करनेवाले उस अजनबी से ही नहीं, सब चीज़ों से, सब लोगों से। अपने अरमानों को चकनाचूर कर ज़िन्दगी को चिथडे से विकृत बनानेवाले पति से, स्नेहविहीन रातों से, सब से उसे गुस्सा आ रही थी।'51 प्रेमविहीन वैवाहिक जीवन से ऊबकर दोनों विवाहेतर संबंध भी रखते हैं। एक ओर पत्नी से छुटकारा पाने केलिए पति एक खूनी युवक जो उन दोनों के साथ सफर करता है - को पत्नी को मारने केलिए पैसा देता है, तो दूसरी ओर पत्नी का प्रेमी भी उसी युवक को पति को मारने केलिए पैसा देता है। ये कहानियाँ पारिवारिक प्रेम की गिरफ्त को तोड़कर अपने मनपसंद संबंध को मान्यता देनेवाली फयरस्टोण की विचारधारा की तरफदारी करती हैं।

'रोहिणी' लघु उपन्यास की नायिका रोहिणी को विवाह, परिवार और बच्चों से नफरत है। वह अपने पति से प्यार नहीं करती थी। उन्हें शादी के वर्षों बाद भी बच्च नहीं हुआ था। सास के निर्देशानुसार दोनों पति पत्नी देवी से मनौती करके कन्याकुमारी मन्दिर जाते हैं। वहीं पति राहिणी की हत्या करवाता है। वास्तव में पति और सास से नफरत करती रोहिणी मां बनना नहीं चाहती थी। यानि वह

अपनी सुन्दरता को नष्ट करना नहीं चाहती थी। अपनी हत्या करने आए खूनी के प्रति रोहिणी के मन में वासना जाग उठती है। वह सोचती है - 'नालायक कितना सुन्दर है।' विजयन रोहिणी के साथ शारीरिक संबन्ध स्थापित करता है और फिर उसे गला घोंटकर मार डालता है। अपने ड्राईवर के प्रति भी रोहिणी के मन में काम भाव था। वास्तव में रोहिणी के माध्यम से पुरुष मेधा समाज द्वारा निर्णीत पुरुष सापेक्ष नैतिक मूल्यों के खिलाफ़ कहानीकार विद्रोह ही प्रकट कर रही हैं।

माधवीकुट्टी को जिन प्रतिकूल एवं कटु अनुभवों से गुज़रना पडा, वे भी उनकी कहानियों का विषय रहे हैं। इस के लिए वेर्जीनिया वुल्फ की 'अपने लिए एक कमरा' जैसी कृति माधवीकुट्टी के लिए प्रेरणा रही है। उनकी अपनी कहानी पर उन्हें कटु परिहास, सामाजिक तिरस्कार और अपमान का सामना करना पडा था। स्त्री साहित्य का सर्वांगीण विरोध करती पुरुष अधीशत्व वृत्ति के खिलाफ, उन्होंने प्रतिक्रिया प्रकट की है। 'संसार एक कवयित्री का निर्माण करता है', 'अरुणा की दावत' आदि कहानियों में यह विरोध स्पष्टतः प्रकट है। यह कोई अतिरंजित बात नहीं है कि लेखिकाओं को पुरुषमेधा समाज की ओर से बराबर यंत्रणाओं का सामना करना पडा है। नारी जो कुछ भी लिखती है, उसमें आत्मांश का आरोप लगाया जाता है। 'अपनी कहानी' पर उन्हें सिर्फ समाज से ही नहीं, अपने परिवारवालों से भी विरोध का सामना करना पडा था।

'प्रेमित स्त्री' (वह स्त्री जिससे किसीने प्रेम किया है।) कहानी काल्पनिक प्रेम के सतहीपन और उसमें अंतरनिहित धोखे को

उजागरित करती है। साथ साथ प्रेम की कीमत और महत्व को भी घोषित करती है। अम्मिणिकुट्टी को प्रेम के जाल में उलझाकर गाँव का 'पेट्टी अफसर' उससे शादी करता है। उसके बारे में कोई खास जानकारी अम्मिणिकुट्टी और उसके घरवालों को नहीं थी। अम्मिणिकुट्टी की सुन्दरता की तारीफ करते करते वह उसे अपने घर की गरीबी तथा चारों ओर की त्रासद सच्चाइयों से विमुख कराके अपने मोह जाल में फंसाए रखना चाहता है। वह कहता है - 'अम्मिणिकुट्टी वे सब कुछ भूल जाओ, मेरे साथ बैठते इस तरह की बातें क्यों करती हो? वह सीधी सादी ग्रामीण नारी न होती तो उसके प्यार की कमियों को तुरन्त समझ लेती। उसे आकाश तक ले जाकर वह बता रहा है, सब कुछ भूल जाओ। सिर्फ मेरे प्यार की ही याद करो।'52 लेखिका इसकी सूचना देती है - 'अपनी परिस्थितियों को भूलने की प्रेरणा देते वक्त उसे आगामी बुराई की प्रतीक्षा करना चाहिए थी। लेकिन उसने बादलों के साथ खडे रहना चाहा। उस आदमी के असाधारण प्रेम को भी पसन्द किया।'53 फिर गर्भवती पत्नी को छोडकर वह चला जाता है। उसने अपने घर का झूठा पता दिया था। अम्मिणिकुट्टी जीने और बच्चे को पालने के लिए नौकरानी बन जाती है। इसके बावजूद उसके मन में पति के प्रति नफरत नहीं है - 'उसने उस आदमी को दोषी ठहराना नहीं चाहा, जिसने कभी उससे प्यार किया था। सान्त्वना व हमदर्दी को वह रेश्मी कपडे के समान ओढ सकती थी। उसके धोखे का दूसरों से जिक्र कर रो सकती थी। दुखान्त नाटक की नायिका की हैसियद वह भी पा सकती थी। लेकिन उस आदमी के

प्रति प्यार से वह संतृप्त थी। उसे और कुछ नहीं चाहिए था। इसलिए वह चुप रही।'54

'रुग्मिणी के लिए एक गुड़िया बालवेश्या, बारह साल की रुग्मिणी की कहानी है। कहानीकार ने इस कहानी में कोठी की ज़िन्दगी की क़डवी सच्चाइयों को उजागरित किया है। रुग्मिणी सैतेले पिता के बलात्कार की शिकार हो जाती है। फिर वेश्या बना दी जाती है। उसकी माँ भी वेश्या बनने के लिए मजबूर हो गयी थी। कोठी दर असल पुरुष की हविश का ज्वलन्त प्रमाण है। यौन सम्बन्ध सचमुच मानव जाति के अस्तित्व का अधिष्ठान है। लेकिन पुरुष की अतिरंजित भोगवासना की वजह स्त्री के लिए यह सज़ा जैसा लगता है। कहानीकार लिखती है - 'यौन संबन्ध उसे सज़ा लगता था। किसी अज्ञात कारण से भोगना पड रहा है। समाज लडकी को बोझ मानता है। लड़की बनने की सज़ा ही उन्हें झेलनी पड रही है।'55 उपन्यास का एक दूसरी पात्रा है सीता। वह रुग्मिणी से दो साल बडी है। उसे भी एक दलाल ने कोठी पहुँचा दिया था। यानी वह भी मजबूरन वेश्या बन गयी थी। अवैध गर्भपात के कारण सीता की अकाल मृत्यु हो जाती है। पुरुषमेधा समाज में स्त्री पुरुष के वहशीपन की बलि हो रही है। इस उपन्यास में राडिकल फेमिनिसम् की विचारधारा का स्पष्ट प्रभाव पडा है। सीता रुग्मिणी से कहती है - 'वे जो भी कहेंगे तुझे सब कुछ करना पडेगा। मर्द लोग सचमुच कुत्ते होते हैं।'56 वह यह भी बताती है - 'मैं अपना एक घर और बच्चा चाहती हूँ। मगर, मेरे घर में पुरुष कभी नहीं होना चाहिए।'57

सीमोन द बुआ के विचारानुसार स्त्री स्वभावतः आत्मलीन रहती है। पुरुषों की स्वीकृति के लिए वह सुन्दर रहना चाहती है। माँ और बडी बहिन बचपन से ही उसके मन में भविष्य के लिए एक सुन्दर घोंसले के होने की ज़रूरत पैदा कर देती है। कैसी भी स्वतंत्रता मिले वह इन इच्छाओं को छोड़ना नहीं चाहेगी। जिस हद तक वह पुरुष के अधीशत्व की दुनिया में असुरक्षित महसूस करेगी, उसी हद तक वह इन ज़रूरतों को भी अपने-आप में बनाए रखेगी। सीमोन द बुआ का यह विचार बिलकुल ठीक है कि घर, परिवार के उत्तरदायित्वों से उत्पन्न बोझ एवं अस्वतंत्रता के बावजूद हर स्त्री अपने एक अलग घर की कल्पना करती है। इसलिए ही दूसरों के सामने निर्वासित होती हुई भी सीता और रुग्मिणी के मन में परिवार एवं बच्चों से युक्त एक अलग घर की आशा बंधी रहती है। उपन्यास का और एक पात्रा मीरा का एक कॉलेज के लडके के साथ इश्क होता है और उसके साथ पारिवारिक जीवन की उम्मीद में भाग जाती है। वह लड़का उसे छलता है और वह हताश हो कोठी वापस आती है। इस उपन्यास में देह व्यापार को पुरुष की हविस मिटाने के साधन के रूप में नहीं, बल्कि अपनी मेहनत के लिए कीमत वसूल करती स्त्री का कार्यकारिणी रूप उभर आया है। इसलिए जब कमरे को लेकर मीरा और सरस्वती के बीच झगडा होता है तो कोठी की मालकिन सोचती है - 'मीरा ने ज़रूर गलती की है। इसमें कोई संदेह नहीं। दोनों में सरस्वती ही इस धंधे के लिए लायक है। किसी से कोई विशेष लगाव या स्नेह नहीं। गिन गिनकर पैसा भी वसूल करती है। सबसे अच्छा कमरा उसे ही मिलना चाहिए।'58

षूलामित फयरस्टोण के अनुसार प्रेम स्त्री के स्वतंत्र अस्तित्व के विकास में बाधा उपस्थित करता है। इस कहानी में फयरस्टोण का प्रभाव स्पष्ट है। कोठी की मालकिन रुग्मिणी को समझा देती है - 'पुरुष से प्रेम करना खतरनाक है। .....वह अपने आपको रस्सी से बाँधने की तरह है। किसी से भी प्रेम न करोगी तो तुम हमेशा आज़ाद रह सकोगी। हमेशा इस बात की याद रखो.....'59

हमारा समाज अन्य पुरुषों से नाजायज़ या अनैतिक सम्बन्ध रखनेवाली स्त्री को चरित्रहीन करार करता है। लेकिन पुरुष तो हर सन्दर्भ में बेकसूर एवं पाक साबित होता है। अवैध सम्बन्ध के आरोप पर हिरासत में लेनेवाले स्त्री पुरुषों में से केवल स्त्री को ही सज़ा दी जाती है। अवैध सम्बन्ध में भागीदार पुरुष को बरी कर दी जाती है। वह समाज की नज़र में शीलवाल ही है। अच्छे खानदान की लड़की से वह शादी भी कर सकता है लेकिन अन्य पुरुषों से नाजायज़ सम्बन्ध रखनेवाली स्त्री को समाज कुलटा मानता है। उसका बदनाम होता है। इसलिए कहानी की मीरा के, कॉलेज के लड़के के साथ रहस्य विवाह की बात सुनने पर इन्स्पेक्टर गुस्से से पूछता है - 'विवाह ? क्या एक भले लड़के को शापदी करने एक रेंडी ही मिली।'60

'झूला चौपाई' नामक लघु उपन्यास का नायक शिवशंकरन अधेड उम्र का है। ओमना नामक औरत से उसका अवैध संबन्ध है, जो देवदास उण्णित्तान की दूसरी पत्नी है। उसकी पहली पत्नी राज्यलक्ष्मी को शिवशंकरन बेहद प्यार करता था पर वह

शिवशंकरन के बदले देवदास उण्णित्तान को चाहती थी और दोनों शादी भी करते हैं। वर्षों बाद दोनों अलग हो जाते हैं और देवदास उण्णित्तान ओमना से शादी करता है। बरसों बाद वह पॉलियो का शिकार बनता है और अपहिज हो जाता है। देवदास से बदला लेने के लिए सिवशंकरन ओमना से प्यार का बहाना करता है और उसके ज़ेवर और पैसे छीन लेता है। उसे समाज के सामने ज़लील भी साबित कस्ता है - 'मुझ पर समाज में कोई इल्ज़ाम नहीं लगाया। लेकिन एक अविवाहित शुद्धात्मा को फंसाने और उसे पाप कराने के जुर्म में समाज ओमना उण्णित्तान को दण्ड देता है। नेतागण अपनी स्त्रियों से उससे मुंह फेरने तथा शादी दावत पर आमंत्रित न करने की सलाह देते हैं। उसे पश्चाताप की अग्नि में जल जलकर मरने दे।'61 बदला चुकाने के बाद शिवशंकरन राज्यलक्ष्मी के पास आता है और अपने प्यार को जाहिर करता है। लेकिन वह उसे ठुकरा देती है। यहाँ अपने स्वार्थ के लिए, स्त्री को सिर्फ चीज़ माननेवाले, पुरुष का दृष्टिकोण ही जाहिर हुआ है।

'सागर मयूर' नामक लघु उपन्यास, अधेड उम्र की कुमारी प्रोफेसर रेणुकादेवी की कहानी है। वह नारीवादी है और समाज सेविका भी। उसे दिल की बीमारी है। सिंगप्पूर में आयोजित अर्थशास्त्र के विशेषज्ञों के अन्तर्देशीय सम्मेलन में भाग लेने रेणुकादेवी सिंगप्पूर जाती है। हवाई जहाज़ में मलेष्या के युवा कवि किम् से उसकी मुलाकात होती है। रेणुकादेवी उसके जाल में फंस जाती है। होटल में उसके साथ शारीरिक सम्बन्ध भी स्थापित करती है। दिल

का मरीज़ होने के कारण उसकी मृत्यू हो जाती है। एक हफ्ते बाद उसकी लाशा केरल पहुँचती है।

एक ओर इस उपन्यास में लेखिका नारीत्व की जैविक विशिष्टता एवं सहज भावना को झकझोरती नारीवादी विचारधारा की तथा दूसरी ओर नारी को सिर्फ भोगवस्तु समझने की पुरुष मानसिकता की आलोचना भी करती है। अर्थात स्त्री के सहज प्यार, शिष्टता, विनम्रता का फायदा उठाते-हुए उसे अपनी जाल में फंसाकर अपनी हविश को शांत करते पुरुष की नृशंसता का चित्रण भी करती है। उपन्यास का किम् रेणुकादेवी से प्रेम का नाटक रचकर उसके साथ शारीरिक सम्बन्ध स्थापित करता है। प्रेम से वंचित रेणुका पुरुष का सच्चा प्यार चाहती थी। पर किम् बताता है - 'नश्वर चीजें ही प्रेम की हकदार हैं। मैं उस फूल को चाहता हूँ जो झडता हो, और उस सूर्य को भी जो डूबता हो। तेरा यौवन पंख पसारकर उड जाने को आतुर पंछी के समान है।..... मैं केवल उसको चाहता हूँ, रेणुका।'62

शिक्षा के सार्वजनिक होने के साथ स्त्री भी अपनी अस्मिता एवं व्यक्तित्व से अवगत हो गई। वह, पुरुष से शादी करके घर की चारदीवारी में सिमटने रहने केलिए तैयार नहीं हुई। रेणुकादेवी सोचती है कि - 'सिर्फ एक साधारण व्यक्ति की पत्नी और उसके बच्चों की मां बनकर जीने से बेहतर है आजीवन शांति से अपने घर में अनब्याहे अपनी मनपसन्द किताबों के घेरे में रहना।'63 आदर्श के नाते अपनी वासनाओं को यद्यपि रेणुका दबाती रखती है पर किम् को देखते ही अन्दर दबी व सुप्त पडी सारी कामनाएँ जाग उठती हैं। इसलिए वह सोचती है - 'अपने शरीर को पति और बच्चों के लिए उपयोग करती

हर स्त्री मुझसे अधिक निस्वार्थ है, मुझसे अधिक श्रेष्ठ भी है।'64 'एक पल रेणुका को ऐसा भी लगता है कि प्रेमिका और मां बनने के लिए ही उसकी पैदाइश हुई है।'65 यहाँ यद्यपि लेखिका स्त्री की अपनी अलग अस्मिता केलिए विद्रोह की बात कहती है फिर भी स्त्री पुरष के आपसी प्रेम और उसकी अनिवार्यता की घोषणा भी करती है।

'मीनाक्षियम्मा की मृत्यू' नामक कहानी की मीनाक्षियम्मा भी रेणुकादेवी की तरह आदर्श के नाते अपने मन की आशाओं को बाँध लेती है और गांधीवाद को आत्मसात कर सरल ज़िन्दगी बिताती है। लेकिन मरते वक्त उसके अन्दर दबी पड़ी आशाएँ बाहर आती हैं। वह अपने भाई और भतीजी से हरे रंग की चोली और विशेष किस्म का हार माँगती है।

माधविकुट्टी की नारीवादी विचारधारा स्पष्टतः 'चंदन के पेड़' में जाहिर होती है। उनकी कहानियों की भांती यह उपन्यास भी स्नेह की पवित्रता की घोषणा करता है। एक साथ यह स्नेह की खोज है और स्नेह निषेध के खिलाफ विद्रोह भी। कहानियों में चित्रित स्नेह सम्बन्धों में आत्मीय और वैकारिक पूर्णता की चाहत दृष्टव्य है। सचमुच उनकी दृष्टि में प्रेंम स्थायी, चिरंतन अनुभव है पर उनकी कहानियों में चिरंतन प्रणय का अभाव है। लेकिन 'चंदन के पेड' में लेखिका चिरंतन स्नेह की पूर्णता लेस्बियनिसम् में खोजती है। उपन्यास के षीला और कल्याणिक्कूट्टी के बीच समलैंगिक सम्बन्ध है। षीला कहती है - 'कल्याणिक्कुट्टी की दोस्ती के बिना मैं जिन्दा नहीं रह सकती थी।..... उसके मुंह का गीलापन और स्वाद मेरे हो गए। उसकी देर की नाज़ुकता और कठिनता मेरी अपनी हो गयीं।'66 यह

प्रस्ताव वास्तव में प्रेम की आत्मीयता और पूर्णता की खुली घोषणा ही है। कल्याणिकुट्टी के साथ षीला के सम्बन्ध को तोड़ने माँ उसकी शादी भी सुधाकरन के साथ हो जाती है। यद्यपि सदाचार की भावना दोनों के सम्बन्धों में बाधा बनती है लेकिन उनका आपसी प्यार मिटता नहीं। सदाचार, वर्ग वैषम्य एवं पारिवारिक संस्था प्यार को तोड़ने में कामयाब नहीं होते। उपन्यास के अन्त में षीला कहती है कि 'कल्याणिकुट्टी अब नहीं लौटेगी। षीला का पति जवाब देता है कि जब तक षीला कल्याणिकुट्टी से प्यार करेगी, वह उसकी उपेक्षा नहीं करेगी। प्रेम के उदात्त स्वरूप से स्त्री सचमुच मूर्त अनुभव चाहती है। उसे अपने शरीर और आत्मा की सुरक्षा की उत्कंठा भी है। इस परिप्रेक्ष्य में कल्याणिकुट्टी और षीला का प्रेम सम्बन्ध पूर्ण है। सचमुच समाज के पुरुष मेधा ढाँचे के खिलाफ़ नारीवादीयों के विद्रोह का मुर्तरूप है - 'चंदन के पेड'।

फ्रोयड के मनोविश्लेषण के अनुसार स्त्री की कमज़ोरी जैविक नहीं है, बल्कि मानसिक दबाव एवं नियंत्रण नारी को कमज़ोर बनाते हैं। पुरुष की मेधा शक्ति को रोकने के प्रयास में उसके अबोध मन की दमित भावनाएँ जबरदस्ती से बाहर उच्चलित होती हैं। 'चंदन के पेड' का लेस्बियनिसम् इस उच्छलन का मूर्तरूप है। उपन्यास की नारीवादी विचारधारा विवाह, परिवार और मातृत्व जैसे पितृसत्तात्मक समाज के संस्थाकृत रूपों के तिरस्कार के तौर पर भी प्रकट हुई है। कल्याणिकुट्टी स्त्री की शोषित स्थिति को बढ़ावा देती इन संस्थाओं का विरोध करती है। वह इस सन्दर्भ में पुरुष सत्ता की नींव को लौंगिक विद्रोह के ज़रिए तोड़ने की कोशिश करते राडिकल फेमिनिसम् का

प्रतिनिधि बनती है। उसके विचार में परंपरागत वैवाहिक संस्था समाज की सडी हालत का बाहरी रूप है। कल्याणिक्कुट्टी कहती है कि षीला के पिता जैविक तौर पर उसके भी पिता है। यानी सात्विक और भक्ति नज़र आते उस आदमी की अवैध संतान है कल्याणिकुट्टी। इससे आदर्श दाम्पत्य की सामन्ती विचारधारा का खोखलापन ही साफ साफ व्यक्त होता है।

अपने अचेत मन की गुलामी मानसिकता के कारण ही षीला सामाजिक व्यवस्था के नियमों का अनुसरण करती है और अपने मन की भावनाओं को दबाकर या छिपाकर रखती है। लेकिन बाद में मन की दमित भावनाएँ विवाह और पति के विरोध के रूप में बाहर आती है। - 'दीर्घकालीन दाम्पत्य आधुनिकों के लिए निश्चय ही असहनीय है। समाज के सम्माननीयों द्वारा सराहनीय योग्य गृहस्थाश्रम मुझे नहीं चाहिए। दूसरे के मुंह से निसृत लिजलिजाती लार मेरे मुंह को नहीं चाहिए। नौकरी के बोझ से थकी मेरी देह के लिए काम का विकृत बोझ बिलकुल असहनीय है।'67 षीला का दाम्पत्य जीवन के प्रति विरोध सिर्फ बुढे पति से नहीं है बल्कि परुष की मेधा शक्ति के प्रति भी है। पर विडम्बना की बात है कि अपने पातिव्रत्य को तोड़ने की कोशिश के बावजूद, हर पुरुष में वह अपने पति को ही देख सकती है।

'मानसी' उपन्यास की मानसी भी परिवार और दाम्पत्य से असंतुष्ट है। मानसी कवि है। वह एक युवा से प्रेम करती थी, लेकिन एक दुर्घटना में उसकी मृत्यु हो गयी। तब मानसी गर्भवती थी। इन सारी बातों को जानते हुए भी अमोल मित्रा ने उससे विवाह किया।

उसकी बेटी को अपनी बेटी की तरह पालने के लिए भी तैयार हो गया। वह मानसी से उम्र में बहुत बडा था। उसकी शारीरिक असुन्दरता एवं पैसे की कमी से मानसी में अपने दाम्पत्य के प्रति अतृप्ति उत्पन्न होती है और वह निराशाग्रस्त हो जाती है। वर्षों बाद मानसी की मुलाकात विजयराजे से होती है जो उसके प्रेमी के भाई है। वह एक राजनीतिक नेता है। देखने में वह सुन्दर है और अनेक स्त्रियों से अनैतिक संबन्ध रखता है। मानसी उसके जाल में फंस जाती है। एक जोड़ी हीरे के झुमके के लालच में विजय राजे के साथ एक हफ्ता सिंला में रहने केलिए पर तैयार हो जाती है। उसकी कठपुतली बनकर राजनीति में भी वह उतर जाती है। अपनी बेटी एवं पति को भूलकर वह नैतिक जीवन की सुख सुविधाओं के प्रति आकर्षित होती है। अधिकार हासिल करने के लिए प्रधनमंत्री की भी रखैल बनने के लिए वह तैयार हो जाती है। मानसी की बेटी सुपर्णा को भी विजयराजे अपने जाल में फंसा देता है। माँ की तरह बेटी भी बाहरी सौन्दर्य से आकर्षित होकर उसके साथ सिंला जाती है है और फलतः गर्भवती हो जाती है। मानसी अपने लक्ष्य हाज़िल करने में सफल होती है। वह प्रधानमंत्री बन जाती है।

विजयराजे नारी को अपनी स्वार्थपूर्ति के साधन माननेवाले पुरुष दृष्टिकोण का प्रतीक वत् पात्र है। वह स्त्री को सिर्फ भोगवस्तु मानता है। माँ और बेटी के साथ शारीरिक सम्बन्ध स्थापित करने में उसे कोई हिचक नहीं है। वह स्त्री शरीर को अपने स्वार्थ के लिए, बिकाऊ माल बनाता है। अधिकार जमाने के लिए वह मानसी को प्रधानमंत्री की रखैल बनने की प्रेरणा देता है। पहले विजयराजे मानसी

के प्यार और शरीर के प्रति दीवाना रहता था। लेकिन जब उसकी जवान बेटी सुपर्णा नज़र आती है तो उसे लगता है कि मानसी बूढी हो चुकी है - 'खिड़की के पास एक आराम कुर्सी में बैठकर वह दूर एक पेड की ओर देख रहा था। पत्तों के झडने से वह पेड एक बूढी के समान लगा रहा था। क्या मानसी के साथ बीते प्रेम का प्रतीक है वह? राजे ने अपने आपसे पूछा।'68

यद्यपि मानसी के लिए पति, उसके अभिमान का रक्षक एवं, प्यार एवं सुरक्षा प्रदान करनेवाला है तो भी, वैवाहिक संस्था के प्रति विरोध पति विरोध के तौर पर प्रकट होता है। अपने पालनकर्ता के प्रति शुक्रिया अदा करने के रूप में वह वैवाहिक संबन्ध को ढोती रहती है - 'पति को कभी दिल से चाहा नहीं। दैनिक उपयोग की कंधी और तौलिये से, हर रोज़ के परिचय से उत्पन्न होनेवाली भावना ही उनके प्रति भी है।'69 सहज प्रेम केलिए मचलता उसका मन विजयराजे के साथ संबन्ध स्थापित करके परंपरागत वैवाहिक संस्था के प्रति विद्रोह कर बैठता है। दूसरों से प्यार और मान्यता पाने की नारी की चाहत भी मानसी में प्रकट होती है। नारी के अवचेतन मन की त्याग भावना एवं कोमलता की वजह ही नहीं जैविक विकारों के कारण भी पुरुष से उसका सम्बन्ध अनिवार्य है। इसलिए पति हो या विजयराजे दोनों से अपना सम्बन्ध तोड़ने और अपने अलग अस्तित्व को कायम रखने में मानसी असमर्थ बनती है।

पुरुष के स्वार्थ और लैंगिक शोषण की शिकार स्त्री अपनी इच्छओं और सहज वासनाओं को छिपाने या बाकाने केलिए मजबूर है। यों एक प्रकार की कपट ज़िन्दगी वह जीती है। यों ज़िन्दगी का स्वांग

रचती हुई, कामनाओं को दबाकर जीनेवाली स्त्री का मन इस उपन्यास में उन्मीलित हुआ है। लक्ष्यप्राप्ति के लिए किसप्रकार लैंगिकता का उपयोग किया जाता है और इस कारण स्त्रीत्व की कैसी हानि होती है, इसका भी कारगर चित्रण हुआ है। अपना प्रेमी, बेटी का भी प्रेमी है, बेटी का चाचा उसके बच्चे का पिता हो गया है, इस जानकारी से उत्पन्न मानसी की दबी सिसकियाँ स्त्री की मजबूरी को और भी गहराती हैं।

यही चित्र माधवीकुट्टी की 'गिद्ध' नामक कहानी में भी है। मां के स्नेह एवं संरक्षण से वंचित बेटी में माँ के प्रति विरोध पैदा होता है और उसकी परिणति यही होती है कि बेटी मां के प्रेमी से प्रेम करके उसके साथ शारीरिक सम्बन्ध स्थापित करती है। मां के प्रेमी से अलगाने के लिए झूठ भी बोलती है कि वह उससे गर्भवती हो गयी है। यह झूठी खबर मां को बीमार बनाती है और मृत्यू की दहलीज तक पहुँचा देती है। प्रकृति की बाढ़, आँधी तूफान और मृत्यू की दावाग्नि से जिस प्रकार पुरुष डरता है उसी प्रकार वह स्त्री की स्वच्छन्दता, सृजनात्मकता और लैंगिकता से भी डरता है। 'मानसी' उपन्यास में यतीमखाने की गूँगी लड़की विजयराजे की अदम्य कामवासना पर बरस पडती है तो स्त्रीत्व के उस उग्ररूप से वह डरने लगता है और उससे बचने या स्त्री को अपने पंचों के काबिज में रखने के प्रयास में उस लड़की का गला घोंट देता है।

वर्तमान पुरुषमेधा समाज में नारी का अनेक प्रकार से शोषण हो रहा है। उनमें प्रमुख है लैंगिक शोषण जिसे पुरुष नारी के खिलाफ एक औज़ार के रूप में इस्तेमाल करता है। 'मनोमी' उपन्यास

की मनोमी पिता की मृत्यू के बाद श्रीलंका से अपने पिता के दोस्त अण्णादुरै को परिवार के साथ रहने भारत आती है। मनोमी के प्रति उनके दोनों बेटे और दामाद यही रवैया अपनाते हैं। उससे अनैतिक व्यवहार करते हैं। पर मनोमी विरोम परिस्थितियों के चपेट में आने पर भी अपनी अस्मिता को बनाए रखने में कामयाब होती है। अण्णादुरै के बेटे बेटी और दामाद की बूरी हरकतों व आचरण से तंग आकर वह श्रीलंका वापस जाने का निश्चय करती है और अण्णादुरै को भी एक पुत्री की हैसियत से अपने साथ श्रीलंगा ले जाती है। मनोमी में पुरुषमेधा समाज के मूल्यों से लडने की शक्ति के साथ साथ दया, त्याग आदि सहज भानाएँ भी हैं। उसके पिता सरत टेन्नक्कूण की हत्या एल.टी.टी.ई. के आतंकवादियों के बम आक्रमण में हुई थी। फिर भी अण्णादूरै का दूसरा बेटा सुन्दरम, जो एल.टी.टी.ई. के नेता है, के प्रति उसके मन में कोई विरोध नहीं है। घर आए एल.टि.टि.ई के एक घायल आदमी की सेवा करने में भी उसे कोई संकोच नहीं है। अतः स्त्री में सहजतः निहित सारे गुण मनोमी में है। दर्शन के प्रति भी उसे रुझान है। इतना ही नहीं अपने अलग व्यक्तित्व को कायम रखने की तीव्र अभिलाषा भी वह रखती है। यों मनोमी के माध्यम से लेखिका ने आदर्श स्त्रीत्व का परिचय दिया है।

नारी वादी स्वर : कृष्णा सोबती में

कृष्णा सोबती ने अपनी रचनाओं में अपनी अस्मिता की पहचान के लिए जबरदस्त कोशिश करती नारी का चित्रण किया है।

पंजाबी मिट्टी और अबोहवा में पली नारी पात्राएँ घुँघट उतारकर अपनी बेबसी और आकुलता के साथ अपने स्वत्व का भी ऐलान कर रही हैं। शिमला के रोमानी वातावरण की और दिल्ली की बाशिंदा स्त्री में समान दिल ही घडक रहे हैं। उनकी रचनाओं में पुरुष द्वारा दी गयी परिभाषाओं से इतर नारी की लैंगिकता की व्याख्या करने की कोशिश हुई है। उनके 'मित्रो मरजानी' और 'सूरजमुखी अंधेरे के' उपन्यास इसके ज्वलन्त उदाहरण हैं। 'मित्रो मरजानी' पंजाब के संयुक्त परिवार-की पृष्ठभूमि में लिखा गया है। गुरुदास-घरवन्ती के तीन बेटे हैं - बनवारी लाल, सरदारी लाल और गुलज़ारी लाल। मित्रो मंझले बेटे सरदारी की पत्नी है। बनवारी की पत्नी सुहागवन्ती है जो वाकई पतिव्रता है और परिवार निष्ठ भी। गुलज़ारी की पत्नी फूलाँवन्ती ज़ेवर एवं घर की लोभी है और उसने परिवार से अलग अपना घर बना लिया है। मित्रो नूरमहल की मशहूर 'कसबन' (तवापफ) की बेटी है। वासना और विलासिता के वातावरण में मित्रो की परवरिश हुई थी। पति से उसकी यौन पिपासा मिटती नहीं थी। मित्रो अपने तन की भूख को परिवारवालों से खोलकर बता देती है। परिवारवाले यह बर्दाश्त नहीं करते। वे उसे कुछ दिनों के लिए मायके भेज देते हैं। वहाँ उसकी माँ उसके तन की भूख को मिटाने का बन्दोवस्त कर देती है। पर मित्रो पारिवारिक ज़िन्दगी से प्राप्त शाश्वत सुरक्षा की खातिर अपनी अतृप्त वासनाओं का गला धोंटती है। मित्रो के ज़रिए उपन्यास लेखिका खुल्लमखुल्ला घोषित करती हैं कि स्त्री की भी अपनी लैंगिक अभिलाषाऐं हैं। वह पुरुष की भोग्य मात्र नहीं है। यद्यपि पुरुष ने प्रकृति और स्त्री को अपने अधीन में कर लिया है तो भी इन दोनों के

प्रचण्ड रूप से पुरुष डरता है। पुरुष की विचारधारा का साथ देनेवाली नारी भी डरती हैं। पुरुषमेधा समाज के कायदे कानून के बाहर खडे सब पर दोष लगाकर उन्हें हाशिये में करना पुरुष का स्वभाव रहा है। इसलिए मित्रो के ससुराल के सभी सदस्य उसकी दलील मानने व उसकी मानसिकता को समझने के लिए तैयर नहीं होते हैं। पुरुष स्वयं अपनी कमज़ोरी को छिपाने के लिए नारी को चरित्रहीन ठहराता है। स्त्री की लैंगिकता को, उसकी सहज कामनाओं के प्रस्फुटन को चरित्रहीनता का सबूत माना जाता है और उससे अपनी सारी सहज वासनाओं व विकारों-काम, क्रोध, लोभ, मोह - को दबाए रखने की माँग की जाती है। उपन्यास की मित्रो अपनी लैंगिकता को प्रकट कर रही है तो दूसरी ओर गुलज़ारी लाल की पत्नी फूलाँवन्ती लोभ और ईर्ष्या की अभिव्यक्ति करती है। लेखिका इस बात को स्पष्टतः व्यक्त कर देती है कि स्त्री का चोला पहनने का अर्थ उसकी सहज भावनाओं का जबरदस्त दमन नहीं है। स्त्री से देवत्व की अपेक्षा रखना भी उचित नहीं है।

'सूरजमुखी अंधेरे के' उपन्यास की रत्ती या रत्तिका बचपन में किसी अजनबी के हाथों बलात्कार की शिकार हो जाती है। इसलिए वह बचपन से ही दूसरे बच्चे और लोगों से मिलती जुलती नहीं हैं। उसका व्यवहार भी अजीब किस्म का रहता है। खान अंकल के बेटे असद भाई-जो रत्ती से बहुत प्यार करता था - की मृत्यु भी उसे गहरा आघात पहुँचाती है। इन सबसे उसमें एक प्रकार की जड़ता आ जाती है। - 'उसका तीखापन, कडुवापन सब मर गए हैं। वह फीकी है। एक फीकी औरत। एक लड़की जो कभी लड़की नहीं थी। एक औरत

जो कभी औरत नहीं थी।'70 इस स्थिति से उबरने केलिए वह अनेक पुरुषों से दोस्ती करती है और शारीरिक सम्बन्ध रखने की कोशिश भी करती है। लेकिन कोई उसकी मानसिक जड़ता दूर करने में कामयाब नहीं होते क्योंकि हर पुरुष उससे गरमाहट ही चाहता है। वे कहते भी हैं - 'रत्ती के पास पहने हुए कपडों के सिवाय कोई गरमाहट नहीं।'71 फिर भी आखिरकार दिवाकर के साथ वह प्रेमपूर्ण शारीरिक संबन्ध स्थापित करने में कामयाब होती है और उसकी ज़डता समाप्त हो जाती है। प्रस्तुत उपन्यास भी रत्ती की अलग लैंगिकता की ही व्याख्या कर रहा है। बचपन के बलात्कार की वजह रत्ती का सहज भोलापन विदीर्ण हो जाता है। पुरष के भोग का उपकरण बने रहने की अभिशब्त स्थिति से उसके तन मन इनकार करते हैं और जड़ता को ओढ़ लेते हैं। यों रत्ती स्त्री की लैंगिकता को नज़रअन्दाज़ करते पुरुष के अधीशत्व के खिलाफ अपनी प्रतिक्रिया ही प्रकट कर रही है। माधवीकुट्टी की पात्रों के समान रत्ती भी सच्चे प्यार की खोज में ही अनेक पुरुषों से संबन्ध स्थापित करती है। दोनों ने यह दिखाने का प्रयत्न किया है कि स्त्री के स्वत्व को पहचानने में समाज असमर्थ है।

राडिकल फेमिनिसम् में अंतरनिहित पुरुष विरोध रत्ती के चरित्र में देख सकते हैं। अपने प्रति अधिकार व कामेच्छा प्रकट करनेवाले हर पुरुष में रत्ती बचपन के बलात्कारी पुरुष को ही देख पाती है। अपने व्यक्तित्व पर पुरुष का शासन या जबरदस्ती वह बर्दाश्त नहीं कर सकती। वह कहती भी है - 'तुम मेरे गार्डियन नहीं हो। हम एक-दूसरे को नापसंद नहीं करते ..... बस इतना ही हक हमारा एक-दूसरे पर है..... मुझे किसी के साथ कहाँ जाना चाहिए, यह

मेरे सोचने की बात है, किसी और की नहीं।'72 ये वाक्य रत्ती भले ही रोहित से कहती है तो भी यह सचमुच संपूर्ण पुरुष जाति से स्त्री की अपील है। यद्यपि परिवार की सुरक्षा और सम्बन्धों की गरमाहट से स्त्री अवगत है तो भी निजी संपत्ती कि हैसियत से उसकी स्वतंत्रता को हनन करती चिरंतन पारिवारिक व्यवस्था का वह विरोध करती है। इसलिए दिवाकर के साथ शारीरिक संबंध रखने के बाद भी उसकी शादी की प्रार्थना को वह ठुकरा देती है। रत्ती पूलामित फयरस्टोण की इस विचारधारा से प्रभावित है कि नारी शोषण का अंत लैंगिक क्रान्ति से ही हो सकता है। यद्यपि अपनी योन तृप्ति के लिए योग्य पुरुष को चुनने की स्वतंत्रता वह दिखाती है फिर भी नारी की सहज संवेदनशीलता और सृजनात्मकता रत्ती को श्रीपत के साथ उसकी पत्नी के कमरे में सोने से रोक लेती हैं। प्रीति और दिवाकर के वैवाहिक सम्बन्ध को तोड़कर, उससे विवाह भी वह नहीं करना चाहती - 'में जुड़े हुए को नहीं तोडूँगी। विभाजन नहीं करूँगी। मेरी देह अब तुम्हारी प्रार्थना है दिवाकर।'73 बलात्कार हिंसा का एक रूप है जिसे पुरुष अपने काम मिटाने तथा नारी को दबाये रखने केलिए करता है। यह स्त्री की परतंत्रता का भी प्रमाण है। हमारा समाज बलात्कृत स्त्री पर चरित्रहीन एवं कुलटा का अभियोग लगता है। स्त्री के निजी सेक्स जीवन से बलात्कार का कोई सरबन्ध नहीं है। रत्ती इसका साक्ष्य है।

हालांकि हमारे परंपरागत परिवार में शोषण और अस्वतंत्रता है तो भी परिवार का हमारे समाज में सर्वोच्च स्थान है। उसमें निहित सुरक्षा को सभी चाहते हैं। 'मित्रो मरजानी' उपन्यास में मित्रो की शादी करा दी जाती है। पर मित्रो की मां वासना की दुनिया

में स्वच्छन्द विचरण करनेवाली थी। बुढ़ापे में उसकी स्थिति अत्यन्त दयनीय हो जाती है। वह कहीं की भी नहीं रह जाती है - 'तेरी मां के ज़माने लद गए री मित्ता। अब कौन इसका मित्र-प्यारा और कौन इसका संगि-साथी। .....न, न, री, अब इस ठठरी ठंडी भट्टी का कोई वाली-वारस नहीं। कोई मरे मनुक्ख का नाम भी नहीं।..... तेरी अकेली मां को अब यह घर काटने को दौडता है री।'74 मां की यह स्थिति मित्रो को वासना के कगार से परिवार के चौखट की ओर खींच लाती है।

'दिलो-दानिश' उपन्यास में नसीम बानो की बेटी महक बानो, मां की तरह वेश्या बनने तैयार नहीं होती। उससे हासिल धन दौलत व यौन स्वातंत्र्य को वह नहीं चाहती। इसके पदले वह वकील कृपानारायण की रखैल बनने तैयार होती है। विवाह और उसके बाद हवेली के जीवन से मिलते सम्मान प्राप्त नहीं होगा तो भी वेश्या के रूप में कोठी में रहने से बेहतर है रखैल के तौर पर मकान में रहना।

सिर्फ वेश्या ही नहीं उसके खानदान की समस्त बेटियों केलिए वैवाहिक ज़िन्दगी निषिद्ध माना जाता है। कृपानारायण अपनी बेटी मासूमा को, महक के खानदान के अनुसार कोठी में बैठने की सलाह देता है लेकिन महकबानों इनकार कर देती है। ''जनाम अपनी तालीम को न बिसराइए। आपका धराना तो..... तानपूरा निकालिए मासूमा को भी जोड़ी सिखाइए।'75 महक पर कृपानारायण की कोख में जन्मे अपने बेटे बदरुद्दीन को पढा लिखाकर अपने खानदान में स्थान दिलाना ही नहीं अपनी तरह वकील भी बनाना चाहता है।

पाश्चात्य नारीवादियों ने 'बेबी वुमन' की भी संकल्पना की है। पुरुष मेधा समाज स्त्री को अबोध बालिका समझता है जिसमें सामाजिक व वैयक्तिक कार्यों में निर्णय लेने की क्षमता नहीं है। उसे सदैव पुरुष की छत्रछाया चाहिए। परंपरागत साहित्य में अनेक ऐसे स्त्री चरित्रों की सृष्टि हुई हैं। नारीवादी लेखकों ने ऐसे प्रतिष्ठित मिथक को तोड़ने की कोशिश की है। 'दिलो-दानिश' की महकबानो बेबी-वुमन के सुरक्षित शिबिर में अपना जीवन शुरू करती है और जीवन की क्रूर विसंगतियों से टकराकर वयस्क निर्णय लेनेवाले धारदार चरित्र में उनका क्रमिक विकास यकीनन महत्त्वपूर्ण लगता है।'76

दिलो-दानिश सचमुच वकील कृपानारायण के दिल और दानिश की कहानी है। उनके कुनबे की कथा। कृपानारायण विवाहित हैं। वह पत्नी कुटुम्बप्यारी एवं तीन पुत्रों के अतिरिक्त भरे-पूरे संयुक्त परिवार की परवरिश भी सफलतापूर्वक निभाता है। कृपानारायण पुरुषमेधा सामंती व्यवस्था का सच्चा प्रतिनिधि है। वह मानता है - 'हर मर्द के हाथ में एक जाल हुआ करता है। अपनी हिम्मत और मरदानगी से वह इस जहान में जितना समेट सके, समेट ले।'77 अपनी हिम्मत और काबिलियत से बहुत कुछ कमानेवाले पुरुष घर के बाहर मौज मस्ती को ढूँढता है - 'भला पूछिए, मर्द हैं हम। मेहनत करके कमाते हैं। कुनबे को पालते-पोसते हैं। तो क्या थोडी बहुत दिलजोई-दिल्लगी पर भी हमारा कोई अख्तियार नहीं।'78 इसलिए मुकद्दमें के बहाने बेमोल मिले महकबानों वकील साहब के लिए दिलजोई-दिल्लगी का साधन बन जाती है। पत्नी कुटुम्ब प्यारी के प्रति वह फर्ज़ से अधिक बंधा है, प्रेम से कम। लेकिन महकबानों का

फराशखाना उसके लिए ऐसे स्थान रहा जहाँ जब उसका स्वीकार था। इसलिए महक के प्रति न्याय करने की जिम्मेदीरी अंततः कृपानारायण पर आ जाती है। लेकिन उसके प्रति न्याय करना उसने ज़रूरी नहीं समझा। पानदान की तरह इश्क मुहब्बत को भी जिन्दगी के साथ ले चलनेवाला वकील कृपानारायण पत्नी और प्रेयसी के हक और रुतबे को सही तरह समझता है, इतना ही नहीं तौलता और अलगाता भी है। अपनी स्वतंत्रता एवं अधिकार को कायम रखने और स्त्री को अपने अधीन कर लेने केलिए ही पुरुषमेधा समाज ने विवाह और परिवार जैसी संस्थाओं का रूपायन किया है। यों सहजतः अधीनस्थ नारी को अपने कब्जे में करने का प्रयास ही कृपानारायण कर रहा है। उनकी दृष्टि में पत्नी कितनी भी झगडालू क्यों न हो, पत्नी होने के नाते जो भी मांग ले वह उसका हक बनता है। लेकिन महक वही पाने की हकदार है जो वह उसे देना चाहता है। विवाह को सर्वोच्छ स्थान देते हुए वह पत्नी के हक अख्तियारों को स्वीकार करता है। लेकिन महक के लिए किसी भी हक व मांग की गुंजाइश नहीं छोडता। घर और कोठी के बीच जिन्दगी को बांटनेवाले वकील साहब दोनों के अन्तर को शिद्दत से महसूसता है - 'हज़ार झाड़ फानूस लगा लीजिए, घर तो घर ही रहेगा। जो घर नहीं, बहाँ बच्चे भी हो तो भी घर तो न बन जाएगा। कबीले की मर्यादा ने घेर रखा है जिन्दीगी को। कोठों छज्जों और डेरों को भला घर का नाम कैसे दिजिएगा?'79 समाज की नज़रिए के अनुसार कृपानारायण भी बेटे और बेटी में भेद भाव रखता है। वह अवैध पुत्री मासूमा को माँ महक बानो के व्यवसाय में प्रशिक्षित करने की बात करता है। लेकिन अपने तीन पुत्रों के उज्ज्वल भविष्य

की कामना करता है। अवैध पुत्र बदरू को बदरीनारायण बनाकर विरासत रूप में वकालत की गद्दी पर बिठाने के लिए भी वह लालायित है। मासूसा के प्रति कोई भाव उसके मन में नहीं है। शादी के सन्दर्भ में महक पर एहसान करने के अन्दाज़ में ही वह मासूमा का कन्यादान कर देता है - 'इन्हीं की बेटी की शादी करने जा रहे हैं। जाने कितनी पीढियों के बाद इनके यहाँ की बेटी गृहस्थी की सेज तक पहूँचेगी।'80 अपने लिए विवाहेतर संबन्धों को जायज़ माननेवाले वकील साहब महक व कुटुम्ब दोनों से एकनिष्ठ प्रेम की मांग करता है। यों स्त्री को निजी संपत्ती, भोग, व वारिस के उत्पादन का उपकरण समझने का पुरुष दृष्टिकोण वकील के ज़रिए प्रकट होता है।

नसीम बानो, अपनी बेटी महक को दायित्व निभाने के वास्ते वकील साहब को नहीं दिया था। उसकी परवारिश के लिए भरपूर दौलत - फराशखानेवाला मकान, शालीमारवाला बाग और खानदानी ज़ेवरों की भारी संदूकची यानी ढ़ेर सारी दौलत भी दी थी। लेकिन वकीलसाहिब ही नहीं बेटा और बेटी भी महक के व्यक्तित्व और अस्तित्व की तनिक भी परवाह नहीं करते। उससे बेटी छिन गयी, बेटा और वकील ने तो लगभग अपना संबन्ध तक तोड दिया। बाद में वह भी वकीलसाहब और उसकी संतानों के साथ अपने संबन्धों की समाप्ति की घोषणा करते हुए फराशखानेवाला मकान छोडकर चली जाती है। वह महकबानो से नसीम बानो की बेटी बन जाती है और उसी के से सर्द लहजे में ज़ेवर अर्थात अपने अतीत अपने हक, अपनी अस्मिता की मांग करती है - 'हमारी माँ के ज़ेबर हमें आज शाम तक मिल जाने चाहिए, वकीलसाहब। आप अम्मी के वकील रहे, अब हम आपकी

मुवक्किल की बेटी है जिसका उन पर पूरा हक है। ..... कुछ भी हो ज़ेवर पहले और शादी बाद में।'81 वह किसी स्वप्न लोक की परी के समान मासूमा के पिता और ससुरालवालों को अपने सम्मोहन के जादू में बाँध लेती है। फिर सारी बिरादरी के सामने न केवल मासूमा की मां होने का गर्व भरा ऐलान करती है, बल्कि वकील साहब के डूबहू अपनी समधिन को शगुन की गिन्नी देकर उसके विजेता पुरुष-दर्प को पछाडती भी है - 'समझते न बने कि यह पुरानेवाली महक भाभी है कि कोई और। लगा मानो भाभी ने चोला बदल दिया है।..... इस मौके पर महक भाभी के खडे होने का अंदाज़, बात करने में रुआब उनका खास अपना ही था।'82 लेकिन महकबानो की कमज़ोरी यही है कि उसके सारे विचार पुरुष आधिपत्य के इर्द गिर्द घूमते हैं। अपना स्वतंत्र अस्तित्व स्थापित करने की क्षमता उसमें है तो भी किसी पुरुष की छत्रछाया के बिना अपनी अस्मिता की पहचान वह नहीं कर पाती। पुरुष मेधा व्यवस्था के प्रति दास्य भाव के कारण ही वकील कृपानाराण से बिछुडकर दूसरे पुरुष वकील अनवर अली खाँ के आश्रय में वह जाती है।

सोष्यलिस्ट फेमिनिस्टों ने नारी के पिछडेपन को सुधारने में आर्थिक स्वावलंबन की भूमिका को प्रमुखता दी है। जब महक के पास खानदानी ज़ेवर की संपत्ती आ जाती है तो एकाएक वह व्यक्तित्व संपन्न भी हो जाती है। वकील कृपानारायण की बहन छुन्ना भी अपने दृढ़संकल्प और लगन से आत्मसम्मान, आत्मविश्वास एवं आर्थिक स्वावलंबन प्राप्त करती है और अपने आपको एक स्वतन्त्र व्यक्ति घोषित करती है। कृण्णाजी ने 'दिलो-दानिश' के ज़रिए पुरुषवादी सामंती सोच

की पूरी गहराई से पड़ताल की है। इस उपन्यास में सामंती विचार एक साथ कई रूपों में आए हैं। कृपानारायण की माँ बहुआजी पुरुषमेधा सामाजिक व्यवस्था को पूर्णतः स्वीकार करती है। उनका विचार है - 'कुछ बदलनेवाला नहीं। जो हो रहा है उसे नज़र अन्दाज़ करो।' और अपनी मां के इस कथन से वह भी पूरी तरह सहमत है कि 'मर्दों के हिस्से में आए हैं महफ़िल-मुजरे, खेल-तमाशे और औरत के लगे है बाल-बच्चे, दिन-त्यौहार, पूजा-व्रत।' और 'मर्द को गुमराह करनेवाली फकत हुस्न और जवानी नहीं, उसकी कमाई है, जो उसे खुदमुख्तारी देती है।'83 यानी पुरुषमेधा व्यवस्था में जीने की वजह स्त्री के मानस में भी उसके अनुकूल अवधारणा जम जाती है और उसके मुताबिक आचरण भी करने लगती है।

कृष्णा सोबती सीमोन द बुआ की इस विचारधारा से प्रभावित है कि स्त्री दूसरी श्रेणी की नागरिक है, उसका स्वतंत्र अस्तित्व नहीं, वह अन्य और पुरुष के व्यक्तित्व का पूरक भी। इसलिए उन्होंने 'डार से बिछुडी' उपन्यास में पशु से भी बदतर ज़िन्दगी गुज़ारती पाशो का चित्रण किया है। वह पुरुष के स्वार्थ केलिए बिकाऊ माल बन जाती है और सब जियें जागें का आशीर्वाद देती रहती है। उसी प्रकार अपनी दूसरी श्रेणी की हैसियत से अवगत हो, उस कसक को झेलते महकबनो सोचती है - 'हम ओढ़नी थे, अंगिया थे, सलवार थे।'84 उसके व्यक्तित्व का तिरस्कार किया गया था। वह सिर्फ एक शरीर, वासनापूर्ती का उपकरण रह गई थी। खूबसूरत ओढ़नी, अंगिया, सलवार की हैसियत ही उसे मिली। किसी के भी अर्न्तमन उसका कोई स्थान नहीं रहा।

हमारा समाज अनेक संकल्पनाएँ व विडंबनाओं से लैस हैं। कहा जाता है कि देवता वहीं बसते हैं जहाँ नारी की पूजा होती हैं। दूसरी ओर यह भी कहा जाता है कि नारी का रंचमात्र साथ भी आदमी की सूध-बूध हर लेता है। एक ओर कहा जाता है कि पत्नी पति की अर्धांगिनी है, दूसरी ओर मनुस्मृति में यह बात बतायी गयी है कि तीस वर्ष के पुरुष के साथ तेरह वर्ष की कुमारी की शादी सकती है।

जैसे उपर्युक्त सूचित किया गया, पुरुष की अधिनायक वृत्ति का परिवार की स्त्री साथ देती आयी है। परिवार का परंपरागत माहौल में उसे ऐसी ही शिक्षा मिलती है। कभी वह अपनी बहू से इतनी अमानवीयता से पेश आती है कि स्त्री के शोषण में वह दो कदम आगे हैं। 'डार से बिछुडी' की पाशो - जिसका पति बूढ़ा दिवानजी है - पर माँ के कलंक का टीका लगा हुआ है। पडोस के करीमू के साथ उसकी प्रेम कथा की अफवाह पर ही पाशो के जान से मरवा डालने की योजना बना ली जाती है। इसमें उसकी नानी, मामी यानी घर की सारी स्त्रियाँ भाग लेती है, घर की मान मर्यादा के खातिर सब यही सलाह देती है - 'बहु इसे मौहरा दे, मौहरा। एसी सोए कि फिर न जगे।'85

मनुस्मृति में बताई गई है कि नारी की सदैव रक्षा होनी चाहिए। स्त्री बचपन में पिता, यौवन में पति और बूढ़ापे में पुत्र द्वारा रक्षा की अधिकारी है। स्मृति में इसकी भी सूचना है कि स्त्री को पूर्ण स्वतंत्रता नहीं देनी चाहिए। जिस पुरुष को उसे दान में दिया जाता है उसकी सेवा तथा आज्ञापालन भी उसका धर्म है। यदि वह दुराचारी है, परस्त्रियों को पटाता है तो भी पत्नी के लिए देवरूप है। कृष्णा

सोबती ने 'पाशो' के ज़रिए ऐसी ही नारी को ही प्रस्तुत किया है। पति दिवानजी हो या उसे उठाकर ले जानेवाले लालाजी का मंझला बेटा हो, यानि जिस किसी को उसे अर्पित किया जाता है, उसकी सेवा पत्नी का फर्ज़ बनता है। यही नारी जीवन संबन्धी भारतीय संकल्पना है। इस से संघर्ष करते हुए अपने पैरों पर खडे होने का प्रयास ही आजकल स्त्रियाँ करती हैं। ऐसी स्त्रीयाँ भी कम नहीं हैं जो अपने पिता, पति और पुत्र की रक्षा करती हैं। 'सूरजमुखी अंधेरे' की रत्ती और 'ऐ लड़की' की बेटी दोनों आर्थिक दृष्टि से स्वावलंब है और पुरुष से अलग अपना अस्तित्व बनाए रखने की क्षमता रखती है। आर्थिक दृष्टि से जब स्त्री को पुरुष पर आश्रित रहने की नैबत आती है तभी वह वेश्या, रखैल या दासी बनती है। बलात्कार जैसे क्रूरतम शारीरिक शोषण की शिकार भी बनती है। पुरुष चाहते हैं कि अपने स्वाभिमान को बढ़ा-चढ़ाकर रखें परन्तु पत्नी में स्वाभिमान का निशाना तक न हो। स्त्रियाँ पुरुषों का वहशीपन सहती रहती है, इसलिए कि तलाकशुदा कहलाने से वे डरती है, बच्चों का प्यार उन्हें रोक लेता है या अकेले जीवन के सूनेपन से उन्हें डर लगता है।

'ड़ार से बिछुड़ी' सचमुच परिवार के कायदे-कानून और सामाजिक वर्जनाओं की गिरफ्त से छूटी पाशो की कहानी है जिसके माथे पर मां का कलंक है। मां ने घर की मान-मर्यादा को मिट्टी में मिला दिया था। वह शेखजी के घर की पटरानी बन गई थी। परिवारवाले पाशो को भी उसी दृष्टि से देखते-परखते हैं। खासकर नानी उसे नैतिकता की रस्सी में बाँध रखना चाहती है। फलतः पाशो प्रेम को अपराध मानती है। किसी से प्रेम करने की हिम्मत भी उसमें

नहीं। पर वह भी पाशो हाड-मांस से बनी, सपने देखती साधारण लड़की है। इसलिए पडोसी करीमू को देखकर वह मुस्कुराती थी। उसकी बातों से कान भी नहीं फेर सकती थी। इस अपराध के लिए उसके नए एक झूठी प्रेम कथा गढ़ी जाती है। जान से मार डालने की योजना भी बना ली जाती है। वहाँ से जान बचाकर वह निकल जाती है। उसके मानसिक भावों का चित्रण सोबती यों चित्रित करती हैं - 'मुंडेर फाँद पडोसियों की छत पर उतरी तो एक ही बात मन में आई- खोजों की हवेली दौड चलो..... दौड चलो।'86 फिर शेखजी के दोस्त लखषत दीवान के साथ पाशो की शादी होती है जो शेखजी को हम उम्र का है। दीवानजी की मृत्यू के बाद उसके भाई बरकत दीवान के वासना की भी वह शिकार हो जाती है। बरकत उसे एक बूढ़े लालाजी के हाथों बेचता है। लालाजी और बेटों की लौंडी रहते हुए उसे लालाजी का मंझला बेटा उठाकर ले जाता है। यद्यपि मंझला पाशो से प्यार करते हैं तो भी वह दीवानजी और अपना लापता पुत्र के बारे में सोचती रहती है। इसलिए वास्ता में मंझले से वह डरती है और इसीलिए उसकी वासना की साधन बन जाती है। फिरंगियों के साथ युद्ध में मंझले की मृत्यू होती है। उसके बाद अनेक मुसीबतों को झेलती पाशो, अंत में फिरंगियों की कचहरी में आ जाती है। कोई पेशी के इंतज़ार में पडी थी कि अचानक अपने भाई से उसकी मुलाकात होती है और वह उसे घर ले चलता है। यों डार से बिछुडी पाशो वापस डार में पहुँच जाती है।

पाशो की बदहालत पुरुषमेधा समाज की हर आम नारी के साथ हो सकती है। उसमें जीने की ललक है, भरपूर जीने की अदम्य

चाहत है। जीवन में जो हासिल हैं उनमें से चुनने का विकल्प घर से भाग निकलने के बाद वह खो देती है किन्तु अपने निर्णय के परिणामों को स्वीकारने की क्षमता उसमें अवश्य है। पाशो किशोरावस्था से ही किसी सजीले-गठीले नवयुवक का सपना देखती थी। इसलिए दीवान लखपत राय को पति स्वीकार करने में उसे संकोच होता है, तो भी वह नियति को स्वीकार करती है। अपने आपको पुरुष की गुलाम समझती है - 'ऐसे न कहें दीवानजी ! मैं तो इस घर की चाकर।'87 वह तो दीवनजी के भोग की चीज़ मात्र थी - 'वह पलंग छोड पीढ़ी लेती, पीढ़ी छोड पलंग।'88 फिर भी मानसिक स्तर पर उसका ठोस अस्तित्व एवं व्यक्तित्व है। वह अपने अन्तःकरण की आवाज़ ही सुनती है इसलिए मंझले की बाहों में रहकर भी पति व पुत्र की याद में गुपचुप आँसू बहाती है। मंझले की मृत्यू पर गहराई तक वीरान हो जाती है। मानो मंझले नहीं एक बार फिर दीवान लखपत राय स्वर्ग मिधारे हों - 'हाथ से बिछौना टटोला और किसी का नाम ले समेट दिया। नाक की लैंगा और हाथ की चूडियाँ उतार भू पर जा बैठी। जिस जानेवाले ने जोर-जबर मनवा ही लिया था, उसकी मैं कुछ तो लगती है थी।'89

जैसे आशारानी व्होरा ने सूचित किया है - 'स्त्री पुरुष के स्नायुओं की जांच से यह व्यक्त होता है कि संकटकालीन स्थितियों में

पुरुष अपेक्षाकृत जल्दी उत्तेजित होते हैं और महिलाएँ अधिक स्थिरता का परिचय देती हैं। मनोविज्ञानियों के मत में इसीकारण असफल प्रेम में पुरुष जल्दी टूटता है। नारी सहने में प्रेम-रहस्य को छुपाने में, पूर्वाश्रम को भूला नये घर में रच बस जाने में अपेक्षाकृत अधिक सफल होती है।'90 पाशो के बारे में यह बात

बिलकुल सही है। सब कुछ सहकर एक प्रकार का अनमनाभाव अपनाने में वह कामयाब हो जाती है।

स्त्री पैदा नहीं होती, उसे बना दिया जाता है - सीमोन द बुआ का कथन नारीवादी विचारधारा का निवाधार है। पैदा होते ही लड़की को सामाजिक व्यवस्था के अनुकूल वर्जनाओं के अन्दर गढ़ा लिया जाता है। इसलिए पाशो से नानी हमेशा कहती रहती है - 'संभल-कर री। एक बार का थिरका पॉव सारी ज़िन्दगानी धूल में मिला देता है।'91

'ऐ लडकी' जीवन की अंतिम यात्रा के लिए तैयार खडी एक बूढ़ी के अनुभवों का निचोड़ है। वह मरने के पहले अपनी बेटी को उपदेश दे रही है। वृद्धा अम्मू जानती है कि उसका अंत निश्चित है। डॉक्टर की दवा या बेटी की दुआ उसे नहीं बचा सकती। बचने की उत्कंठा भी उसमें नहीं है। वह मानती है कि मृत्यु हर व्यक्ति की ज़िन्दगी की स्वाभाविक एवं अन्तिम परिणति है - 'मेरी देहरी की सांकल तो खुल चुकी। दरवाज़े पर खटखट हुई नहीं कि मैं बाहर।'92 लेकिन वह स्वाभाविक मृत्यु से पूर्व मरना नहीं चाहती, यह उसकी जिजीविषा का ही सबूत है। उनकी दृष्टि में मृत्यु पर जीवन की विजय इसी में है कि आसन्न मृत्यु पर हमें घबराना नहीं चाहिए। जीवन को आसक्ति व विरक्ति के दो कोणो में बाँधना भी सही नहीं है। उसे अपनी कडुवी-मीठी ज़िन्दगी की तुलना में बेटी का एकाकी अविवाहित भविष्य सूना व अनसुरक्षितक होने का अंदाज़ होता है। पुत्री के प्रति उद्‌बोधन के ज़रिए अम्मू व्यक्ति और जीवन के प्रति एक सकारात्मक दृष्टि का परिचय देती है। उसके चिन्तन अपने अनुभवों पर आधारित है। मृत्यु

का इंतज़ार करती अम्मू इस बात पर दुःखी है कि उसकी पुत्री संबन्धों के हर चौखट के बाहर है। वह मानती है कि सम्बन्धों में बंधकर जीना ही वास्तविक ज़िन्दगी है। वही व्यक्ति को नित नूतन बनाता है और जीवन के नैरन्तर्य को बनाए रखता है। अपने अनुभव की कोख से उपजे चिन्तन के अनुसार वह स्त्री और पुरुष की सहज भिन्नता, पुरुष की श्रेष्ठता और स्त्री की पुरुष पर निर्भरता आदि को स्वीकार करती है। उसके चिंतन कहीं परंपरागत है तो कहीं आधुनिक एवं क्रांतिकारी है। परिवार में पुरुष की सत्ता को वह अवश्य मानती है। लेकिन स्त्री को परिवार में माँ, बहू, पत्नी, बेटी आदि विभिन्न भूमिकाओं को निभाना पड़ता है। यह कोई मामूली बात नहीं। वह स्त्री की निजता को कायम रखने का पक्षधर भी है - 'मैं तुम सबकी मां ज़रूर हूँ, पर अलग हूँ। मैं, मैं हूँ। मैं तुम नहीं, तुम मैं नहीं'93 उनके विचार में अपनी ताकत बनाने के लिए नारी को पहले अपनी ताकत की खोज करनी होगी। जब तक नारी अपनी खोज खबर न लेगी, उसे कोई नहीं पूछेगा। किसी को भी उसकी हैसियत का पता नहीं चलेगा। नारी के अस्तित्व की सार्थकता वे मातृत्व में मानती है। लेकिन मातृत्व एवं नारी की अस्मिता में संतुलन बनाए रखना है, नहीं तो अपने इर्द-गिर्द संबन्धों की गरमाहट एवं सुरक्षा होने के बावजूद नारी अपने आपको अकेली महसूस करेगी।

अम्मू सचमुच स्त्री केलिए आर्थिक स्वावलंबन और मनचाहा करते की हिम्मत, ज़रूरी मानती है। इसलिए उसे संतोष है कि उसकी बेटी वैवाहिक ज़िन्दगी को न अपनाकर अपनी अस्मिता को बनाए रखती है - 'न हो दुनियादारीवाली चौखट, तो भी तुम अपने आप

में तो आप हो। लडकी, अपने आप में आप होना परम है श्रेष्ठ है।'94 अम्मू की विचारधारा राष्ट्रीय अंतर्राष्ट्रीय नारीमुक्ति आन्तोलनों के नारों की गूँज से इतर है। उसकी निजता है। वह पारिवारिक संबंधों में बंधे जीवन और मातृत्व को वरीयता देती है। इसलिए उनकी धारणा है कि नारी यदि अपने बहाव के विरुद्ध न चले तो संबन्धों की डोर में बंधने पर भी अपनी अस्मिता बनाए रख सकती है। उसकी यही मान्यता है कि स्त्री की ताकत पुरुष को पछाडने, संबंधों व परंपराओं को त्यागने के लिए नहीं बल्कि अपनी अलग अस्मिता तथा आत्म संतोष को बनाए रखने केलिए है।

'तिन पहाड' की नायिका जया पुरुष की साये के बिना अपनी ज़िन्दगी को आधूरी मानती है। अपने प्रेमी श्री, दूसरी स्त्री एडना से शादी करता है तो वह मानसिक रूप में टूट जाती है। दूसरा पुरुष तपन को वह चाहती है जिसका दूसरी लड़की पुतूल से प्रेमसंबंध चलता है। ऐसी स्थिति में अपने जीवन और व्यक्तित्व को अलग संवारने केलिए वह नकाबिल होती है। फलतः तीन पहाडों से घिरी तिस्ता के भंवर में डूब, वह आत्महत्या कर लेती है। भावुकता की वजह, समय के साथ कदम मिलाकर चलने में वह असमर्थ हो गयी थी। इसलिए उसका त्रासद अंत भी हो गया। 'समय सरगम' आरण्या की कहानी है जो अपने कैरियर को संवारने तथा स्वतंत्र व्यक्ति की हैसियत से जीने के लिए ज़िन्दगी भर अविवाहित रहती है। बूढ़ापे में भी आर्थिक तौर पर वह स्वावलंबित रहती है और 'ऐ लड़की' की बूढी अम्मू के समान पूरी जिजीविषा के साथ ज़िन्दगी बीताती है। मृत्यु को भी वह जीवन की स्वाभाविक परिणति ही मानती है।

निष्कर्षत

पुरुष की इच्छाओं के अनुकूल भाषा, संस्कृति और जीवन दर्शन के रूपायन केलिए लालयित पुरुष मेधा सामजिक व्यवस्था के खिलाफ कृष्ण सोबती और माधवीकुट्टी की कहानियाँ सक्रिय प्रति क्रिया प्रकट करती हैं। स्त्री के स्वत्व की खोज और अपने अधिकारों की घोषण के रूप में दोनों लेखिकाओं ने अपनी कलम चलायी है। इन दोनों की कहानियों के अध्ययन से यह बात स्पष्टतः जाहिर होती है कि स्त्री की सामाजिक, आर्थिक परिस्थितियाँ हर प्रदेश में समान ही हैं और उनके अनुभवों और समस्याओं में भी देश काल से परे अद्‌भुत और अनिवार्य समानता है। ये दोनों लेखिकाएँ अपने स्वत्व से अवगत होकर स्त्रीत्व संबन्धी पुरुष निर्मित आदर्शों का तिरस्कार करती हैं। मुक्ति चाहनेवाली स्त्री-चेतना को दोनों लेखिकाओं ने उभारकर उकेर दिया है। झूठी आदर्शैन्मुखता के बदले स्त्रीत्व के सच्चे यथार्थ को इन्होंने चित्रित किया है। प्रणय, मातृत्व और दांपत्य की पुरुष प्रायोजित एवं प्रतिष्ठित मान्यताओं को नकारा है। पुरुष अधीशत्व को धिक्कारने और इस संसार और ज़िन्दगी को अपने दृष्टिकोण के अनुसार पुनःनिर्मित करने की शक्ति दोनो ने प्रकट की है। प्यार की खोज और शरीर की माँग से विह्वल मन को आभिव्यक्त करने में इन्होनों किसी भी प्रकार की दिक्कत प्रकट नहीं की है। समाज के संकुचित एवं एकतरफा नैतिक मान्यताओं के तहत दबा दी जाती नारी की परेशानियाँ उनकी रचनाओं की नीव रही हैं। इनकी कहानियों की पात्राओं का प्रेम खोखले आदर्शों से लैस नहीं है। वह अनायास प्रवहित होता है। इनकी कहानियों में स्त्री पुरुष संबन्ध और लैंगिकता का खुला

आविष्कार अपने शरीर के प्रति स्त्री के अधिकार के प्रमाण के तौर पर हुआ है। अपने प्रेम और शारीरिक अनुभवों की खुली अभिव्यक्ति से इन्होंने पुरुष मेधा समाज द्वारा निर्धारित सीमाओं का ही

उल्लंकन किया है और इसके साथ खुले आम यह ऐलान भी किया है कि स्त्रीत्व का अपना एक अलग अनुभव क्षेत्र है। परिवार की सीमा के तहत लैंगिक साधन बनने केलिए मज़बूर होती स्त्री असहायता से तह तक व्याकुल होती हैं। हमारी परिवारिक व्यवस्था का आधार पुरुष का अधीशत्व है। उसके खिलाफ़ चलने या उसके परोक्ष बंधनों को तोडने की कोशिश करें तो स्त्री को अनेक मुसीबतों को झेलना पड़ेगा। यों झेलने केलिए मजबूर बनती स्त्री के संत्रस्त मन के विभिन्न आयाम दोनों की रचनाओं में स्पष्टतः उभर आए है।

स्त्री की ज़िन्दगी की सीमाओं का अनुभव करते हुए ही कृष्ण सोबती और माधवीकुट्टी की पात्राएँ पुरुष मेधासमाज के मूल्यों के खिलाफ संधर्ष करती हैं। पुरुष मेधा समाज के शरीर पर अधिष्ठित नैतिकता को माधवीकुट्टी ने ठुकरा दिया है। समाज के झूठे आदर्शों से ऊपर उठकर अपने वैयक्तिक अनुभवों और सामजिक यथार्थ को बेधडके अभिव्यक्त करने की कोशिश उन्होंने की है।

जब स्त्री अपनी नज़रिए से संसार की परिभाषा करने लगती है तब समाज के प्रतिष्ठित यथार्थ उसके लिए उपादेय नहीं बनते हैं। प्रेम, मातृत्व, दाम्पत्य, दोस्ती, लैंगिकता - इन सब का मतलब बदल जाता है। स्त्री का दृष्टिकोण पुरुष से भिन्न ही नहीं काफी जटिल और सर्जनात्मक भी हैं जो काफी समय तक दबा पडा था। लेकिन आज वह उगकर उर्वर होने लगा है। पुरुष अधीशत्व की

बेडियों से बाहर अपने स्वत्व के लिए लडते स्त्री का संघर्षशील व्यक्तित्व के आयाम कृष्ण सोबती और माधवीकुट्टी की सर्जनात्मकता में सन्निहित है। पतिव्रता और सहनशील आदर्श पत्नी के बिंब से इतर ऐसी स्त्रियों का चित्रण इन्होंने किया है जिन्हें अपने व्यक्तित्व और आत्माभिमान को दाँव पर लगाना न पडे। दोनों लेखिकाएँ घोषित करती हैं कि सामजिक व्यवस्था की विचार घारा से लडकर अपनी अस्मिता के आविष्कार केलिए अपनी निजी भावना के साथ उसके अनुकूल भाषा भी चाहिए। दरअसल स्त्री की सृजनात्मकता ही आकुलता, गुस्सा, दीवानापन और प्रेम के रूप में बाहर प्रवहित होती हैं।

कृष्णा सोबती और माधवीकुट्टी की विचारघारा में समानता का प्रमुख आयाम यह है कि दोनों ने लैंगिकता का विरोध नहीं किया है बाल्कि ये दोनों मानव जीवन में सेक्स के नींवाधार स्थान के प्रति अवगत रहती है। स्त्री पुरुष प्रेम की पूर्णता भी सेक्स के द्वारा ही होती है। लिंग के स्तर की स्त्री पुरुष के व्यक्तित्व भिन्नता, पुरुष की अधिनायक वृत्ति आदि का विरोध भी दोनों करती हैं। दोनों पर पाश्चात्य नारीवादी सिद्धान्तों जैसे लिबरल, सोष्यलिस्ट अस्तित्ववादी फेमिनिसम् का परोक्ष प्रभाव पडा है। लेकिन राडिकल फेमिनिसम् का जितना सशक्त प्रभाव माधवीकुट्टी की रचनाओं में हैं, उतना कृष्ण सोबती में नहीं है। लेसबियनिसम् का वर्णन और पारिवारिक संस्था का कड़ा विरोध भी कृष्णा सोबती की रचनाओं में उपल्ब्ध नहीं है। सोबतीजी की रचनाएँ संख्या में कम है, इसलिए स्त्री मन की भावनाओं, कामनाओं, विचारों की जितनी विविधता माधवीकुट्टी की रचनाओं में हैं

उतनी पूर्णता सोबती की रचनाओं नहीं आयी है। माधवीकुट्टी ने स्त्री के जीवन और उसकी अस्मिता की नस नस को पकडने की जबरदस्त कोशिश की है।

टिप्पणियाँ

1. डां.सुरेन्द्रनाथ सिंह - प्रसाद के काव्य और नाटक दार्शनिक स्त्रोत पृ. 13
2. A.S.Hornby - Oxford Advanced Learner's dictionary of current english - P. 320
3. Ibid - P. 320
4. सं.डां.जानसी जेम्स - फेमिनिसम (भाग 1) - पृ. 5-6
5. वही - पृ. 6
6. वही - पृ. 7
7. वही - पृ. 7
8. वही - पृ. 7
9. वही - पृ. 8
10. वही - पृ. 9
11. वही - पृ. 10
12. As wealth increased, it, on the one hand gave the man a mere important status in the family the woman and on the other hand, created a stimulan to utilize this strengthened position inorder to overthrow the traditional order of inheritance in favour of his children. But this was impossible as long as descent according to mother right prevailed. This had, therefore to be overthrown, and it was overthrown :- Frederic Engles. The origin of the family-private property and the state. Page - 62
13. The first class antabonism which appears in history coincides with the development of antagonism between man and woman in monogamous marriage and the first class oppression with that of the female sex by the male.

Ibid. - P. 66

14. सं.जानसी जेम्स - फेमिनिसम (भाग-१) - पृ. 10

15. वही - पृ. 13

16. अनामिका - स्त्रीत्व का मानचित्र - पृ. 46

17. माधवीकुट्टी - माधवीकुट्टी की कहानियाँ - पृ. 135

18. The natural reproductive difference between the sexes led directly to the first division of labour based on sex, which is at the origins of all further division into economic and cultural classes and is possibly even at the root of all caste discrimination based on sex and other biologically determined characteristics such as race, age, etc. Shulamith Firestone - The dialectic of sex- P.9

19 Unless revolution disturbs the basic social organisation, the biological family - the vinculum through which the psychology of power can always be smuggled - the tapeworm of exploitation will never be annihilated. We shall need a sexual revolution much larger than - inclusive of - a socialist one to truly eradicate all class systems Ibid - P. 12-13

20. The freedom of all women and children to do what ever they wish to do sexually Ibid - P.236

21. Love, perhaps even more than child bearing is the pivot of womens' oppression today Ibid - P.142

22. Thus humanity is male and man defines woman not in herself but as relative to him; she is not regarded as an autonomous being..... For him she is sex - absolute sex, no less.She is defined and differentiated with reference to man and not he with reference to her; she is the incidental, the inessential as opposed to the essential.He is the subject, he is the absolute - she is the other.Simone De Beauvoir - The second sex - P.16

23. माधवीकुट्टी - माधवीकुट्टी की कहानियां - पृ. 114

24 माधवीकुट्टी - माधवीकुट्टी की कहानियां - पृ. 114

25 वही - पृ.165

26 वही - पृ.166

27 वही - पृ.175

28 वही - पृ.177

29 वही - पृ.175

30 माधवीकुट्टी - मेरी कहानियां - पृ.262

31 माधवीकुट्टी - माधवीकुट्टी की कहानियाँ - पृ. 202

32 वही - पृ.204

33 वही - पृ.127

34 सं.जानसी जेम्स - फेमिनिसम (भाग-१) - पृ.185

35 माधवीकुट्टी - माधवीकुट्टी की प्रेम कहानियाँ - पृ. 23

36 वही - पृ. 24

37 वही - पृ.130

38 वही - पृ.131

39 वही - पृ.78

40 वही - पृ.185

41 माधवीकुट्टी - माधवीकुट्टी की कहानियाँ - पृ.186

42. माधवीकुट्टी - मेरी कहानियाँ - पृ. 483.

43. वही - पृ. 449

44. वही - पृ. 455.

45. वही - पृ. 487.

46. वही - पृ. 488.

47. वही - पृ. 342.

48. वही - पृ. 349.

49. माधवीकुट्टी - माधवीकुट्टी की प्रेम कहानियाँ - पृ. 120.

50. माधवीकुट्टी - मेरी कहानियाँ - पृ. 425.

51. वही - पृ. 239.

52. माधवीकुट्टी - माधवीकुट्टी की प्रेम कहानियाँ - पृ. 38.

53. वही - पृ. 38.

54. वही - पृ. 39.

55. माधवीकुट्टी - माधवीकुट्टी के तीन उपन्यास - पृ. 29.

56. वही - पृ. 12.

57. वही - पृ. 27.

58. माधवीकुट्टी - माधवीकुट्टी के तीन उपन्यास - पृ. 44.

59. वही - पृ. 41.

60. वही - पृ. 31.

61. माधवीकुट्टी - सागर मयूर - पृ. 93.

62. वही - पृ. 32.

63. वही - पृ. 8.

64. वही - पृ. 26.

65. वही - पृ. 31.

66. माधवीकुट्टी - चन्दन के पेड़ - पृ. 14, 17.

67. वही - पृ. 41-42.

68. माधवीकुट्टी - मानसी - पृ. 38.

69. वही - पृ. 14.

70. कृष्णा सोबती - सूरजमुखी अंधेरे के - पृ. 9

71. वही - पृ. 71.

72. वही - पृ. 68-69.

73. वही - पृ. 134.

74. कृष्णा सोबती - मित्रो मरजानी - पृ. 93-94.

75. कृष्णा सोबती - दिलो दानिश - पृ. 110

76. अनामिका - स्त्रीत्व का मानचित्र - पृ. 197.

77. कृष्णा सोबती - दिलो दानिश - पृ. 56

78. वही - पृ. 72

79. वही - पृ. 112

80. वही - पृ. 136

81. वही - पृ. 180

82. वही - पृ. 184

83. वही - पृ. 74

84. वही - पृ. 175

85. कृष्णा सोबती - डार से बिछुडी - पृ. 20.

86. वही - पृ. 24.

87. वही - पृ. 48.

88. वही - पृ. 46.

89. वही - पृ. 107

90. आशारानी व्होरा - भारतीय नारी अस्मिता और अधिकार - पृ. 67.

91. कृष्णा सोबती - डार से बिछुडी - पृ. 96.

92. कृष्णा सोबती - ऐ लड़की - पृ. 8.

93. वही - पृ. 100.

94. वही - पृ. 76.

अध्याय चार

परिवर्तित मूल्य एवं मानवीय संबन्धों के विघटन की समस्यायें

भारत-पाक विभाजन और मानवीय संबन्धों में विघटन

भारत विभाजन सिर्फ भारत का ही नहीं, समस्त उपमहाव्दीप की विकट हादसा रहा था जिसकी अशुभ छाया के तले सारी मानवीयता तडप उठी थी। हिन्दु और मुसलमानों के बीच जो धार्मिक, सांस्कृतिक और सर्वोपरि राजनीतिक खाई मौजूद थी उसका भीषणतम नतीजा ही विभाजन रूप में सामने आया था। कृष्णा सोबती की सर्जनात्मकता अपने परिवेश से भली भांति हमेशा अवगत रही है। सोबतीजी ने अपने जीवन में विभाजन की भीषणता को गहाराई से समझा है और भोगा भी है। विभाजन के दौरान अपने घर और संपत्ति से हाथ धोकर उन्हें दिल्ली आना पडा था। फिर बरसों तक नगर संसकृति को आत्मसात कर रहना पडा। विभाजन से देश ही नहीं लोगों के दिल भी बंट गए थे। वे मानासिक और भौतिक स्तर पर शरणार्थी हो गए थे। स्वाभाविक आपसी मानवीय रिश्ते तक टूट गए। जनमानस में व्याप्त अनिश्चयात्मकता एवं कुंठा को सोबतीजी न दिल की तह तक समझा है। उसके विभिन्न आयामों का चित्रण उन्होंने प्रस्तुत भी किया है। उनकी 'सिक्का बदल गया' कहानी इसका ज्वलंत उदाहरण है। विभाजन के सन्दर्भ में संबन्धों और मूल्यों में जो दून्व्द, दुविधा और विघटन पैदा हुए उनका जीवंत चित्रण कहानी में है। सांप्रदायिक आधार पर देश के विभाजन ने अरसों से, साथ-साथ रहनेवाले हिन्दुओं

और मुसलमानों के मानस को गहराई से ज़ख्म किया था। यह परिवर्तन उन लोगों में भी हुआ, जो सांप्रदायिक आधार पर न कभी बंटे थे और न बंट सकने की स्थिति में थे। 'सिक्का बदल गया' में विभाजन की त्रसदी को मानवीय संबन्धों और मूल्यों के विघटन के परिप्रेक्ष्य में दिखाया गया है।

मीलों फैले खेत,दूर-दूर तक फैली हुई ज़मीन, उनमें लगे कुए-सब कुछ शाहनी के हैं। किन्तु बंटवारे ने चीजों और स्थितियों के सन्दर्भ बदल दिए। शाहनी के लिए ही नहीं, उसके सारे गांव के लिए भी। उन्हें लगता है-''चनाब का पानी आज भी पहले-सा सर्द था, लहरें ,लहरें को चूम रही थीं। दूर-सामने कश्मीर की पहाडियों से बर्फ पिघल रही थी। उछल-उछल आते पानी के भॅवरों से टकराकर कगारे गिर रहे थे, लेकिन दूर-दूर तक बिछी रेत आज न जाने वयों खामोश लगती थी।.....पर नीचे रेत में अगणित पॉवों के निशान थे। वह कुछ सहम सी उठी'' । 1 बंटवारे से गांव छोडकर जानेवालों के दिलों में भी धायल बनने के गहरे निशान हैं। बहुत वर्षों से गांव में रहते हुए शासनी ने सभी से अपनों की तरह पेश आई है। लेकिन विभाजन से बनी स्थितियों से शाहनी बिलकुल अकेली हो जाती है । हिन्दुओं को गांव छोडकर जाना पड रहा है। कल्लूवाल के जाट लोग शाहनी को मारने और उसकी हवेली को लूटने आ गए हैं-''शाहनी का घर से निकलना छोटी सी बात नहीं। गांव-का-गांव खड़ा है हवेली के दरवाज़े से लेकर उस दारे तक जिसे शाहजी ने अपने पुत्र की शादी में बनवा दिया था। गांव के सब फैसले, सब मशविरे यहीं होते रहे हैं। इस बडी हवेली को लूट लेने की बात भी यहीं सोची गयी थी। यह नहीं कि

शाहनी कुछ न जानती हो। वह जानकर भी अनजान बनी रही। उसने कभी वैर नहीं जाना। किसी का बुरा नहीं किया। लेकिन बूढी शाहनी यह नहीं जानती कि सिक्का बदल गया है।'' 2 शेरा की मां की मृत्यु के बाद शाहनी ने उसे पाल पोसकर बडा किया है।वही शेरा आज शाहनी की ऊँची हवेली की अंधेरी कोठरी में पडी सोने-चाँदी की संदूकचियॉ लूट लेना चहता है। हिन्दू परिवारों को सीमा की दूसरी ओर ले जाने के लिए ट्रकें आने पर बेगू पटवारी, थानेदार दावूद खाँ, शेरा जैसे लोग चहते हैं कि शाहनी जल्द से जल्द हवेली छोडकर बाहर निकलें। जब दावूद खॉ यह कहता है कि वह अकेली है, अपने पास कुछ नकदी रख ले, वक्त का कुछ पता नहीं तो ''शाहनी अपनी गीली आँखों से हंस पडी-'दावूद खाँ, इससे अच्छा वक्त देखने के लिए क्या मैं जिन्दा रहूँगी! किसी गहरी वेदना और तिरस्कार से कह दिया शाहनी ने।'' 3 शाहनी यह भी बताती है- ''सोना चाँदी! बच्चा वह सब तुम लोगों के लिए है। मेरा सोना तो एक-एक ज़मीन में बिछा है।.....नहीं बच्चा, मुझे इस घर से नकदी प्यारी नहीं। यहाँ की नकदी यहीं रहेंगी।'' 4 - जिस शेरा को शाहनी ने अपना बेटा माना, वह जब लोभी हो जाता है तो शाहनी के दिल बुरी तरह ज़ख्म होता है-''शाहनी चौंक पडी। देर-मेरे घर में मुझे देर। आँसुओं के भँवर में न जाने कहॉ से विद्रोह उमड पडा।..... पर नहीं, शाहनी रो - रोकर नहीं, शान से निकलेगी इस पुरखों के घर से, मान से लाँघेगी यह देहरी, जिस पर एक दिन वह रानी बनकर आ खडी हुई थी। '' 5 शाहनी को विदा करते हुए गहरी पीडा से लोग कहते हैं - राज पलट गया है, सिक्का बदल गया है। लेकिन कैम्प में पहूँचकर ज़मीन पर लेटे-लेटे आहत

मन से शाहनी सोचती है-''राज पलट गया है.....सिक्का क्या बदलेगा? वह तो मैं वहीं छोड आयी .....। 6 राजनीतिक दृष्टि से हुकूमत बदल जाने से, सिक्का बदल जाने से शाहनी को अपनी ज़मीन और सारे संबन्धों से हाथ धोना पडा। भौतिक संपत्ति रूपी सिक्के के साथ शाथ मानवीय संबन्ध एवं मूल्यों के सिक्के को भी शाहनी को खोना पडा। शाहनी के लिए 'सिक्का' का अर्थ मानवीय संवन्ध हैं, जो निरर्थक साबित हुए और जिन्हें जबरदस्ती खोना पडा।

जब सांप्रदायिकता व्यक्ति पर हावी हो जाती है तो वह अपनी इनसानियत से वंचित होकर दूसरे संप्रदाय के प्रति कुछ भी अन्याय करने के लिए तैयार हो जाती है। सोबतीजी की 'मेरी मॉ कहॉ' कहानी ऐसी सांप्र दायिक नृशंसता का चित्र पेश करती है। सचमुच यह सांप्रदायिक नृशंसता की ही नहीं, हिंसा और क्रूरता के बीच कौंधती मानवीयता की कहानी भी है। ब्लोच रेजीमेण्ट के बहादुर सिपाही यूनस खॉ अपने नये वतन पाकिस्तान की आज़ादी के लिए चार दिनों से लगाकर लड रहा है। इसी बीच उसने अनेक हिन्दुओं को मौत के धाट उतार दिया है। वह ऐन वक्त पर लाहौर पहुँचने के लिए अपने ट्रक पर जल्दी जल्दी जा रहा है, ताकि एक भी काफिर जिन्दा न रहे। सांप्रदायिक दंगे की इस क्रूर वातावरण से यूनस खॉ का दिल नहीं घबरा रहा है, व्योंकि वह जानता है- ''आज़ादी बिना खून के नहीं मिलती,क्रान्ति बिना खून के नहीं आती और इसी क्रान्ति से तो उसका नन्हा-सा मुल्क पैदा हुआ है।'' 7 और ''सडक के किनारे-किनारे मौत की गोद में सिमटे हुए गॉव, लहलहाते खेतों के आस-पास लाशों के ढेर। कभी-कभी दूर से आती हुई,'अल्ला-हो-अकबर' 'हर हर महादेव'

की आवाजें।'हाय, हाय'..... 'पकडो-पकडो.... मारो-मारो.....'। यूमस खाँ सब सुन रहा है। बिलकुल चुपचाप - इनसे उसे कोई सरोकार नहीं । वह तो देख रहा है अपनी आँखों से एक नयी मुग़लिया सल्तनत-शानदार, पहले से कहीं ज्यादा बुलन्द.... ''8 इसी ख्वाब से वह आगे बढता जा रहा था कि रास्ते में एक घयल बच्ची दिखायी पडी। यूनस खाँ उस घायल बच्ची में अपनी मृत बहन नूरन को देखता है। न जाने उसका मन बहुत आर्द्र हो जाता है और वह उसे अस्पताल पहुँचा देता है । उस हिन्दू लडकी के लिए उसके मन में ढेर सारा प्यार उमड़ आता है । और वह उस बच्ची को अपने साथ रखना चाहता है। लेकिन ठीक हो जाने पर बच्ची यूनस के साथ जाने के लिए तैयार नहीं होती और ट्रक में यूनस के साथ जाते वह डरती है कि ''ब्लोची कहीं अकेले में जाकर उसे ज़रूर मार देनेवाला है .... गोली से - छुरे से । बच्ची ब्लोच का हाथ पकड लेती है - ''खान , मुझे मत मारना - मारना मत ..'' 9 बच्ची ने सांप्रदायिक दंगे में अपने भाई की नृशंस हत्या देखी है । इसलिए यद्यपि यूनस खाँ उसमें बहिन की छवि देखता है पर वह उसे हत्यारा समझती है। लडकी खान की छाती पर मुट्ठियाँ मारने लगी - तुम मुसलमान हो- तुम .. । एकाएक लडकी नफ़रत से चीखने लगी- ''मेरी माँ कहाँ है। मेरे भाई कहाँ है । मेरी बहन कहाँ- "10 यहाँ मानवीय चिरत्र के विरोधी भावों को उजागार किया गया है । बच्ची अपने पूर्व अनुभवों से खान की हमदर्दी, करुणा और स्नेह को नहीं समझ पाती और यूनस खाँ को सदभावना व रहम के बावजूद पूर्व हरकतों की वजह संत्रस्त रहना पडता है ।

'डरो मत मैं तुम्हारी रहा करूँगा ' कहानी देश विभाजन के दौर की हिंसा, दंगा - फिसाद और उनसे उत्पन्न सम्बन्धों की शिथिलता और असुरक्षा की भावना को व्यंजित करती है । यद्यपि विभाजन पूरे देश के लिए त्तासद घटना रहा तो भी पंजाब का जनजीवन ही उससे गहराई से आहत हुआ । यह सर्वविदित है कि पंजाबी जीवन और परिवेश ही कृष्णाजी की रचनाओं का परिप्रेक्ष्य है । उनका 'जिन्दगीनामा' उपन्यास इसका अनन्य उदाहरण है । अपने बचपन से परिचित ग्राम्य परिवेश का हूबहू वर्णन उसकी 'कलगी', 'जिगरा की बात' , 'भोले बादशाह 'दादी माँ' जैसी कहानियों में उपलष्ध है । ''इन कहनियों का नायक सचमुच पंजाब ही है । उपने सारे शौर्य परंपराओं, रीति - रिवाज़ों , खुशियों और शमों के साथ एक ऐसा पंजाब जो कभी था और अब नहीं है । '' 11

'कलगी' कहानी अपने वतन की रक्षा के लिए शहीद होनेवाले पंजाब के जवानों की कहानी है । बहादुर सरदार जोधासिहं चिलियाँवाला मैदान में फिरंगियों से लडने जा रहा है । उसकी पत्नी सुल्लखी सुबह से आतंकभरी आकांक्षा में खडी है । उसके मन में दुःख के बादल छाए हुए हैं। सारा वातावरण भी लडाई के नतीजें को लेकर परेशान है -'' झरोखे से दीखती ड्योढ़ी की छत पर उड़ती - उड़ती सर्दियों की धूप फैल रही थी । महाराज के ज़माने की ढक्की पर बनी हवेली के बुर्ज फागुन की सिहरती हवाओं में खामोश खड़े थे । आकाश न जाने - क्यों स्तब्ध - सा था। ड्योढ़ी से लगा तबेला खाली पड़ा था । घोडे और सवार आज लडाई के मैदान में हैं । 12 अपने पति और वतन की रक्षा के लिए सुल्लखी मन ही मन मिन्नतें करती

रहती है- ''सुल्लखी सदा की तरह ऊपर अटारी पर जा चढ़ी । आँखें मूँद मन - ही - मन मालिक का नाम लिया और आकाश पर चमकते पहले तारे की ओर आँखें धुमायीं । बादलो की पतली लहरें - और वह बादलों के परदों में से झाँकता हुआ रात का भागी - भरा पहला तारा - सुल्लखी ने हाथ जोड़े, देखकर मस्तक नत किया । प्रियजनों तथा जोधासिंह की खुशी के लिए वह जाने कब से तुलसी के निकट दीप जलाती आयी है । आकाश में चमकते तारे को देख नतमस्तक होती आयी है । "13 मिन्नतों के बावजूद लडाई में जोधासिंह शहीद हो जाता है । उसकी देह खून से लथपथ हो गयी थी, सिर धड से अलग हो गया था। उसके माथे की चमकती कलगी धूल में जा गिरी थी । तब सुल्लखी को ऐसा लगता है कि वह कलगी केवल सरदार जोधासिंह के माथे की नहीं, बल्कि वह पंजाब के माथे की कलगी है जो आज फिरंगी के पैरों तले लोट रही है । यह कहानी उज्ज्वल देशप्रेम की धोषणा ही नहीं बल्कि स्वतंत्रतापूर्व अविभक्त पंजाब की वीरता को भी मूर्त करती है जहों के घर घर के नौजवान फौज में भर्ती होते थे ।

'जिगरा की बात' कहानी में पंजाब की आम ग्रामीण जिन्दगी उतर आई है। विधवा अमरो, अपने इकलौते बेटे सरदारा के लिए जी रही है । सरदारा नौजवान है। खानदानी ज़मीन - खेती है फिर भी उसमें दिलचस्पी नहीं है । वह शहर जाकर डाका ड़ालता है, और कमाई माँ को सौपता है। यद्यपि बेटा अपने धंधे के बारे में कुछ कहता नहीं, तो भी उसकी जानकारी माँ को है - '' एकाएक लगा जैसे उन धधों की खबर उसे है । नहीं तो - नहीं तो सास के ज़माने के गढ़े

चॉदी के गहने सोने में न बदल जाते । ..... अमरो की आँखों के आगे काली रात घूम गयी - वह काली रात, जिसमें उसका सरदारा चुपचाप परछाई की तरह ड्योढी में आ खडा होता है । और वह मन ही मन बेटे की कारकमाई के सदके जाती, उसकी थाली परस देती है । ''14 और '' लोगों का मुॅह चाहे वह न पकडे, पर उसकी ऑखें तो बेटे की दबी-दबी चाल परख सकती हैं, उसके हाथ से बंधी-बंधाई पोटली लेते उसका भेद समझ सकती है ।"15. फिर भी जहान के सामने अपने बेटे की काले करतूत की सफाई देने में भी वह नहीं चूकती। अपने बेटे पर नाज़ करती हूई वह बेटे की खोज में आए थानेदार से कहती है-'' जिगरा है तो झोलियाँ भरता है। तुम्हें क्यों आग लगती है.....अरे, शेर के पूत को डर काहे का ? हिम्मत थी तो डाका मारता था, चोरी तो नहीं करता था...."16 पंजाब की यही विशेषता है कि वहाँ के लोग मेहनती और वीर हैं, अपने देश और वतन के प्रति उन्हें गहरा प्रेम है। हर घर का नौजवान देश की रक्षा के लिए, फौज में भर्ती होता है । भारत माता की रखवाली करता है । अमरो को भी अपने बेटे की वीरता पर गर्व है । सरदारा भी उस पंजाब का सपूत है जो अपनी कमाई से माँ और घर की देखभाल करता है और अमरो उस पंजाबी औरत का प्रतिरूप है जो हर मुसीबत में सीना तानकर खडी होाी है - '' अमरो ने ऊँची आवाज़ में सबको सुना - सुनाकर हाथ हिलाते हुए कहा, मेरा बच्चा मिट्टी का माधो नहीं - जिन राहों से जाता है उन्हीं राहों से लौटा आयेगा । सदके जाऊँ अपने लाल पर। '' 17

'दादी माँ 'बहनें' जैसी कहानियों में भी पंजाबी जीवन और संयुक्त परिवार का माहौल जीवन्त हो उठा है । पारिवारिक जीवन की ऊष्मलता से लैस भी है । संयुक्त परिवार की कार्य कर्त्री होने के नाते नारी की गरिमा और अधिकार का वर्णन भी मिलता है । इसके साथ अपनी गरिमा के नष्ट होते वक्त बूढ़े मन की दर्दनाक स्थिति और आंतरिक संघर्ष भी कहानी में उन्मीलित है । 'दादी मॉ ' कहानी की दादी का बहू-बेटे, पोते-पोतियाँ से युक्त भरा पूरा परिवार है । मगर जब दादी बूढी हो जाती है परिवार में उसका अधिकार कम होता जाता है। और बहू मेहराँ घर की मालकिन बन जाती है । जीवन की, परिवार की गतिशीलता को नारी अपनी सृजनात्मकता द्वारा बनाए रखती है । दादाजी सोचते हैं - ''दूर तक धरती में बैठी अगणित जडें अन्दर ही अन्दर इस बडे पुराने पीपल को थामी हुई हैं । दादी अम्मा इसे नित्य पानी दिया करती थी । आज वह भी धरती में समा गयी है । उसके तन से ही तो बेटे-पोते का यह परिवार फैला है । पीपल की घनी छाँह की तरह यह और फैलेगा। बहू सच कहती है । यह सब अम्मा का ही प्रताप है । वह मरी नहीं । वह तो अपनी देह पर के कपडे बदल गयी है, अब वह बहू में जीयेगी , फिर बहू की बहू में।"18

'बहनें' कहानी में भी पंजाबी जीवन ही धडक रहा है । शादी के बाद तीनों बहिनें बिछुड गई थीं । अब फिर तीनों बडी बहन के बेटे की शादी में मिल रही है । घर-गृहस्थी में बंधी बडी बहन को अपनी बहनें बीते बचपन की सहेलियाँ सी लगती हैं। उनका बचपन साथ साथ एक ही माँ की गोद में बीता था, समय की लंबी अवधि ने उनको इतना दूर कर दिया है कि अब वे एक दूसरे का दुख सुख नहीं

बांट सकती थीं - ''एक माँ की बेटियाँ, पर अब वे एक नहीं-उनके घर एक नहीं, उनके प्यार के नाते एक नहीं। वे तो जैसे एक ही घर आँगन से उठकर अलग अलग किनारे जा लगी हैं।"19 मंझली और छोटी बहन की विवशता के माध्यम से फले - फूले परिवार के अभाव में होती जीवन की नीरसता की अभिव्यक्ति भी हुई है ।

बचपन से लेकर समय के बहाव के साथ मन में कोमल भावनाएँ एवं कामनाएँ जाग उठती हैं । उसके लिए कभी शारीरिक या दिमागी न्यूनताएँ बाधक सिद्ध नहीं होतीं । 'भोले बादशाह' कहानी का भोला मानसिक रूप से विक्षिप्त है। वह मन ही मन शादी करने और घर बसाने की इच्छाएँ लेकर चलता है । घर में माँ के अलावा कोई उससे प्यार नहीं करता । सारी दुनिया के सामने वह मज़ाक का पात्र है । पंजाबी वीर योद्धा के समान उसकी स्वर्ण सी पली - पलायी देह है, भरी -भराई मज़बूत कलाई है । एक लडकी व्दारा प्यार किये जाने और अपने एक बच्चे होने की तीव्र ललक भोले के मन भर है । इस ललक के कारण ही वह शादी के पीछे पडा है । अंत में अपने प्रति प्यार ज़ाहिर करती माँ को ही डोली से उतरी दुल्हन समझते हुए, उसी भ्रम में वह मर जाता है । भोले बादशाह के मन में सुप्त पडी प्यार की प्रतीक्षा एवं किसी को पाने की अदम्य इच्छा ही इस कहानी की धुरी है । पंजाबी देहाती वातावरण में ही कहानी लिखी गई ह।

ज़िन्दगीनामा

भारत विभाजन का भीषण नर - संहार एक चीत्कार के रूप में सतह पर न उभर कर गहरे दर्द की तरह कृष्णाजी की परवर्ती रचनाओं में दिल की गहराइयों में उतर गया है - वह दर्द जो हादसों

के आर - पार देखने की दृष्टि प्रदान करता है । यह दृष्टि उन्हें पंजाब के जातीय गौरव के प्रति और अधिक मोहासक्त करती है और वे पंजाब के अंचल विशेष के आँचल में फलते - फूलते जीवन को पोर - पोर में महसूस करना चाहती है । 'जिगरा की बात' और 'कलगी' इस दृष्टि से दो भिन्न कहानियाँ न होकर उस बिछुडे अंचल के प्रति श्रद्धानत होने की दो चेष्टाएँ हैं जो बाद में 'जिन्दगीनामा' में पुर्ण विकसित रूप में दृष्टिगत होती है।'' 20

'जिन्दगीनामा ' किसी व्यक्ति या परिवार की कहानी न होकर पंजाब के अंचल के और वहाँ की तडपती जिन्दगी की बृहत कथा है । भारत और पाकिस्तान के राजनीतिक मानचित्र की सरहदसे मुक्त पंजाब के अपने अंचल की कथा है । वहाँ खासकर जिला गुजरात की तहसील खारियाँ के एक गांव के जीवन को कुष्णा सोबती ने 'जिन्दगीनामा' में उभारा है, ''जहाँ मेहनतकश बादशाह / अपने सिर के साफे को / अपना ताज समझ संभालता रहा / और अपने खेतों को / अपना रिजक समझ / सत्कारता रहा ।"21 यही धरती पुत्र वास्तव में जिन्दगीनामा उपन्यास के नायक हैं जो शाहजी , कर्म इलाही, गंडासिंह, नजीबा जैसे विविधरूपों में प्रत्यक्ष होते हैं । दर असल सोबतीजी ने 'जिन्दगीनामा' को खेत में फसल की तरह उगाया है , जिन्दगी की तरह जिया है । इसलिए चाचा फतेहअली, कर्मइलाही, गंडासिंह, मौलादाद, जहाँदाद खाँ, गुरदित्त सिहं, ताया तुफैलसिहं, मुंशी इल्मदीन, मौलू मिरासी, कोकला डोडा, हीरा साँसी , चाची महरी, माँ बीबी, बेबे करभरी, काशीशाह, शाहजी, शाहनी,कवित्त जोडनेवाली राबयाँ जैसे अनेक पात्र अनायास उभरते चले गए हैं। जट्ट दीनिए

(मुसलमान), अरोड़े, खत्री, पराच्छे जैसे सब तरह के सब जातियों और धर्मों के लोग इस गाँव मे हैं । काश्तकारें की जी तोड मोहनत और फौजी जवानों की जवाँमर्दी जिन्दगीनामा की आंचलिक संस्कृति का ताना - बाना है । दोनों की भुमिका बराबर का है क्योंकि ''काश्तकार सरकार के हाथ हैं तो मुँह माथा सरकार का फोजें । '' पंजाब के छ : फुटिये जट्ट जवाहरे अगर हाथ में हल - पंजाली लें तो कामी मुजारे बन जाते हैं और जट्ट कन्धे पर बन्दूक टाँक ले तो फौजी बन जाते हैं। जी तोड़ मेहनत करना जट्ट किसानों के जीवन का मूलमंत्र है । इनकी प्रकृति ऐसी है कि वे मेहनत को ईश्वर प्राप्ति का रास्ता मानते है । '' जो मेहनत से जी - जान मार के कमाए वह खैरों से क्यों न खाए - हंडाए । भुक्ख भी कम्म योनि है । उद्दम - हौंसले से काम करे । कंगला बन के झुरता रहे रात - दिन तो ऊपरवाला भी खुश नहीं होता। "22 और '' पंजाबी बंदा चीनी - जापानियों से ज्यादा मेहनती । '' ऐसे मेहनत मस्तानड़े जट्टों की शारीरिक सुन्दरता का वर्णन सोबतीजी इसप्रकार करती है, जैसे, ''मोटे गाढ़े तम्बे और गलों के नीचे फैली बालों की क्यारियाँ । गंधमी चेहरों पर कलमें और मूँछें ऐसी सोहवें जैसे कडियल जेवर । '' 23 जी - तोड मेहनत, खूब खाना - पहनना यहाँ के मज़दूरों की विशेषता है जिन्हें रास -रंग में बहुत दिलचस्पी हैं । जीने की ललक और जीवन के प्रति आस्था रखनेवाले गाँववालों में जिन्दगी का हर लम्हा भरपूर जी लेने का उमंग है । मेले-उत्सव, तीज - त्योहार पर नाच - गान और ढोल के साथ आनन्द मनाने में वे कभी नहीं चूकते । उसमें किसी भी वर्जना, बंधन या अनुशासन उन्हें स्वीकार नही है । जीवन के प्रति अवेश भरी आसक्ति

पंजाब के इस अंचल की विशेषता है, जो जीवन को उसकी समग्रता में अनायास जीना चाहते हैं ।

फौजियों का खास स्थान और सम्मान है गाँव में । उनकी वीरता के किस्से कहने सुनने के लिए गाँव भर के लोग शाहजी की चौपाल में उमड पडते हैं । गाँव से बाहर जाकर दुनिया देखने और देश की रखवाली करनेवाले जवान उनकी नज़र में निराला है, इसलिए माँएँ अपने बेटों को फौज में भर्ती कराती हैं । ''अरी कल काशीराम भाई को बता रहा था कि रूपोचक की हाको ने पहले दो पुत्तर भरती कराए । एक को ज़ख्मी होने की खबर आई तो तीसरा भी उठा के लाम में भेज दिया । कहते हैं लाट पंजाब ने खुश होकर हाको को रूक्का भेजा है।"24 इसलिए जब लाम की भरती खुलती है तो बेकार घूमनेवाले नौजवानों को जीवन का मकसद मिल जाता है । ''सिकन्दरे के करतब सुनती है न । जाता है ; डाका मार परत आता है । चल, लाम लगी है तो लड़के अपने इन बातों से तो मुडेंगो। ''25 रोहिणी के अनुसार , ''यह उस अंचल की ही विशेषता है कि जेल जाना , डाका-कत्ल करना जुर्म नहीं , मर्दानगी है - ज़मीन के प्रति , परिवार के प्रति हक अदायगी की मिसाल ।'' 26 वास्तव में जिन्दगीनामा उपन्यास के विस्तृत कलेवर में कृष्णाजी ने मानव में सहजतः निहित जिजीविषा को ही प्रस्तुत किया है, जो उनके संपूर्ण साहित्य की अन्यतम विशेषता है । साथ साथ लेखिका ने इस उपन्यास के ज़रिए अपने बिछुडे अंचल के प्रति मन की गहरी आस्था भी प्रकट की है ।

आधुनिक भावबॊध और बदलतॆ मानवीय संबन्ध

व्दितीय विश्वमहायुद्धोत्तर परिस्थितियॊं सॆ सारी दुनिया मॆं एक प्रकार की अनिश्चयात्मकता, अनिर्णय तथा निष्क्रियता की स्थिति उत्पन्न हुई थी। बीसवीं शताब्दी कॆ उत्तरार्ध में अधिकांश दॆशॊं मॆं प्रजातंत्र शासन व्यवस्था स्थापित हॊ गयी थी और सामान्य जनता कॊ मौलिक मानवीय अधिकार भी प्राप्त हॊ गए थॆ। औद्यॊगीकरण और महानगरों कॆ आविर्भाव से सामाजिक जीवन एवं मानवीय संबन्धॊं में आमूल-चूल परिवर्तन आया। औद्यॊगीकरण सॆ उत्पन्न यांत्रिक सभ्यता सॆ व्यक्ति अपनॆ कॊ अपनॆ आपसॆ तथा अपनॆ परंपरागत संबन्धॊं सॆ अलग महसूस करनॆ लगा। वैज्ञानिक उपलब्धियॊं तथा यांत्रिक जीवन की आत्यंतिक विवशता नॆ मानविय संवॆदनशीलता का हनन किया। इससॆ उत्पन्न जीवन की निरर्थकताबॊध और मूल्यहीनता सॆ आक्रान्त साहित्यकार नॆ विद्रॊही बन परंपरागत रूदियॊं तथा परिवॆश की जडता को तॊड दॆना चाहा। कृष्णा सॊबती और माधवीकुट्टी दॊनॊं ऐसे रचनाकार हैं जिन्हॊंनॆ बदलतॆ परिवॆश और तदनुसार परिवर्तित मूल्यॊं कॆ अनुकूल अपनी सर्जनात्मकता कॊ शब्दबद्ध किया है।

पाश्चात्य संस्कृति कॆ भारतीय समाज पर प्रभाव की वजह उदित व्यक्ति स्वातंत्र्य की भावना भी मानवीय संबन्धॊं मॆं आए बदलाव का एक प्रमुख कारण है।इससे संयुक्त-परिवार की अनुशासन-पद्धति की नींव तक हिल गई थी। शिक्षित नारी अपने हक कॆ प्रति अवगत हॊ गई और इस एहसास नॆ परिवार और पति- पत्नी संबन्ध कॊ काफी प्रभावित किया। परंपरागत परिवार-प्रणाली मॆं काफी बदलाव आ गया। औद्यॊगीकरण कॆ कारण रॊज़गार कॆ नए अवसर खुल गयॆ। स्त्रियॉं भी

नौकरी के वास्ते घर के अहाते से बाहर निकलने और कमाने लगीं। यों नयी सामाजिक आथिक परिस्थितियों की वजह संयुक्त परिवार में जो परिवतन आये उन्हें मज़बूत बनाने में कानून भी सहायक बने थे। सन् 1930 के 'गेन्स ऑफ एर्निंग_ऐक्ट' ने व्यक्ति की निजी कमाई की सीमा काफी विस्तृत कर दी थी। संपत्ति पर स्त्री पुरुष के एक हद तक समान हक की अवधारणा और उसके लिए कानूनी मान्यता ने संयुक्त परिवार को पूर्णतः विघटित कर दिया। परिणामस्वरूप परिवार की संकल्पना पति-पत्नी और बच्चों से युक्त अणु परिवार के रूप में संकुचित हो गई।

पूँजीवादी व्यवस्था में बाज़ार नियामक शक्ति है। इस व्यवस्था के तहत मानव के श्रम तथा आपसी संबन्ध को पूँजी की बढ़ोतरी के लिए इस्तेमाल किए जाते हैं। पूँजीवादी व्यवस्था के इन नियामकों का सीधा प्रभाव आधुनिक मानव के चरित्र पर भी पडा है। व्क्ति समझता है कि उसका जीवन स्वतंत्र है, वह स्वेच्छा से प्रेम, विवाह या अन्य मानवीय संबन्ध स्थापित कर सकता है। इस व्यवस्था का श्रम विभाजन श्रमिक को आदमी के बदले मशीन बना देता है। इसलिए उसमें अपने और परिवेश के प्रति एक प्रकार के अलगाव की भावना उत्पन्न हो जाती है। इस व्यवस्था के सारे मानवीय संबन्ध पूँजी के आधार पर ही निर्धारित होते हैं। ये संबन्ध और अलगाव अकेलापन,ऊब और तनाव उत्पन्न करते हुं। इन्हें दूर करने के लिए इस व्यवस्था ने उपभोग और मनोरंजन पर आधारित बाज़ार का भी सुजन किया है। नाइट क्लब्स, टेलीविज़न,ब्लू फिल्म तथा कोठी आदि की व्यवस्था उसकी संवेदना को और विकृत तथा शून्य बना देती है।

इन सभी का मिला जुला प्रभाव मानव की प्रेम संवेदना पर पडता है। यंत्रवत मानव प्रेम नहीं कर सकता, केवल जैविक संवन्ध ही साबित कर सकता है। प्रेम के माध्यम से सौदा भी कर सकता है।परिवार के दम्पति, दंपति न रहकर दल बन जाते है । उनके बीच भी वैसे ही समझौते होते हैं जैसे कि मालिक और मज़दूर संघों के बीच होते हैं। इनके प्रेम में आश्वासन समझदारी और तादात्म्य नहीं होते। प्रेम की इस नयी अवधारणा के कारण प्रेम , प्रेम न रहकर एक अनुबंध बन जाता है।

परिवर्तित समय की अनुगूँज

आधुनिक भावबोध में ईश्वरीय सत्ता को इनकार करने की प्रवृत्ति है। परंपरागत मानवीय मूल्यों के प्रति सन्देह भी व्यक्त किया गया है जिनका अस्तित्ववादी विचारधरा के अन्तर्गत काफी विचार किया गाया है । उन्होंने मूल्यों और अवधारणाओं से परे जीवन को स्वीकार किया था । लेकिन मूल्यों के निषेध होने पर जीवन एक अर्थहीन, बेतुक, कार्य - कारण से रिक्त प्रक्रिया बन जाता है । इन स्थितियों के साथ पूँजीवादी मनोवृत्ति भी जुड गई जिससे व्यक्तिवाद को प्रश्रय मिला था । इसमें व्यक्ति को सर्वोच्च घोषित किया गया। आदर्श , त्याग जैसी भावनाओं को ठूकरा दिया गया । फल्नतः आदमी प्रतिष्ठित सिद्धातों और आदर्शों की अपेक्षा अपनी सोच और अनुभव के अनुसार जीने लगा ।

जहाँ तक स्त्रियों की सिन्थति की बात है उन्हें बचपन से यही सिखाया जाता था कि पुरुष के हर अन्याय को चुपचाप सहना और उसके आगे झुकना उसकी नियति है। जैसे पहले ही सूचित किया

गया है, शिक्षा की वजह उसके विचारों में सुधार हुआ । वह अपने बारे में अवगत हो गई है और जीवन को यथार्थ नज़र से देखने लगी। आज आदर्श के नाम पर अत्याचार सहना आदर्श स्त्री का लक्षण नहीं है । वह मानव के समकक्ष मानुषी बनकर जीना चाहती है । सामाजिक स्थिति में आए बदलाव के अनुकूल वैवाहिक संस्था जैसी सामाजिक संस्थाओं में बदलाव आया है । तदनुरूप समाज में महत्वाकंक्षी और नौकरीपेशा महिलाएँ भरपूर विश्वास नहीं करती हैं और कतिपय जिन्दगी भर अविवाहिता रहने का निश्चय करती हैं और यों अकेले जीवन व्यतीत करती हैं ।

कृष्णा सोबती के 'समय सरगम' उपन्यास की नायिका आरण्या सयानी है । उसने जीवन पर्यन्त अविवाहित रहने का निश्चय किया है । उसे अपने आसपास संबन्धों के जाल न होने से धुटन नहीं है - ''अकेलों के समुदाय की गिनती अब पहले से कहीं ज्यदा ! इनकी अपनी ही कठिनाइयाँ और अपनी ही सहूलियतें । ... अकेले - अकेलों की अपनी जीवन शौली है । करते रहते हैं स्व- निर्माण और आराम । परिवार का कोलाहल, शोर, तनाव, ऊँच - नीच और तनातनी आसपास नहीं । फिर भी पुरानी ध्वाँह से पितृ पाँव, मातृ हाथ, भ्रातृ और भगिनि भाव का गहरा आस्वादन जब कभी भी मिलता हो, उमड आता है स्नेह माँ की ममता केलिए और पिता के संयम में पगे प्यार के लिए ।''27

माधवीकुट्टी के 'सागर मयूर' में रेणुकादेवी अमीर बाप की इकलौती बेटी है, सारी सुख सुविधाओं के साथ जिन्दगी बिताती है । लेकिन अपने आपको दूसरी लडकियों से अलग मानती है । एक आम आदमी की पत्नी और उसके बच्चों की माँ बनना उसके विचार में

मामूली बात है और इसीलिए अविवाहित जीवन को स्वीकारा। उसे एक ऐसी रागात्मकता में ही रुचि थो जो देह पर अधिष्ठित नहीं थी ।

नए ज़माने में अर्थ की भूमिका

आधुनिक सामाज में पैसे को सर्वोच्च स्थान प्राप्त है । अर्थ ने मानवीय संबन्धों पर भी बहुत प्रभाव डाला है । सभी सम्बन्धों को अर्थ की तराजू पर तोला - परखा जाता है । उसके आगे धर्म जाति, कुल , नैतिकता, मर्यादा-आदि फीका पड जाते हैं । अर्थाभाव पति -पत्नी एवं अन्य सम्बन्धों में तनाव , अलगाव एवं खीझ उत्पन्न करता है । माधवीकुट्टी के 'मानसी' उपन्यास की मानसी, पति अमोल मित्रा से प्यार नहीं करती । अंम्र में कंघी बडे होने के कारण उसकी शरीरिक असुन्दरता और उससे भी बढकर पति की निम्न आर्थिक स्थिति मानसी के मन में असंतुष्टि पैदा करती है -'' दो वक्त का खाना और तन ढकने केलिए सस्ते कपडों के सिवा बीस सालों के इस वैवाहिक जीवन में तुमने मुझे और क्या दिया है , उसने पति से पुछा । क्या आज तक तुमने मुझे एक भी अच्छा तोफा दिया है ? अपने लहराते बालों पर कंघी फेरते हुए उसके कडे सवालों ने उन्हें दुखी बना दिया ।''28

दूसरी ओर अर्थ की अधिकता भी दूरियाँ और संघर्ष पैदा करते हैं। 'आखिरी मेहमान' की कवयित्री अनसूया देवी का पति मित्रा और मित्रा का बेटा रमेश, अनसूया देवी के धन दौलत को ही चाहते थे । उसकी संपत्ति और वैभवपूर्ण जिन्दगी से मोहित होकर ही मित्रा ने उससे शादी की थी । मित्रा पहले अनसूया का पडोसी था । उसके बेटे रमेश को अनसूया बहुत प्यार करती थी, और बाद में रमेश के पिताजी

से उनकी शादी हुई । उसके बारे में मित्रा सोचता है - वह मेरा भाग्य रहा होगा । नहीं तो मैं आज भी मश्किल से गुज़ारा करनेवाला एक मेडिकल रेप्रसन्टेटीव रहता । अब मैं अमीर बन गाया हूँ । जीने के लिए अब नौकरी नहीं करना पड रहा है ।"29 अनसुयादेवी भली भांति जानती है कि पति और बेटे को सिर्फ उनके दौलत से ही प्यार है । इसलिए अपनी नीरस जिन्दगी से छुटकारा पाने के लिए वह एक कातिल द्वारा अपनी हत्या कराने का इन्तजाम करती है ।

कृष्णा सोबती के 'दिलो-दानिश' उपन्यास में महकबानो ने अपने जीवन से यह सबक सीखी कि दौलत मानव जीवन की नियामक शक्ति है, उसकी ताकत के बिना खून के रिश्ते भी बहुत कमज़ोर होते हैं । वकील कृपानारायण कीरखैल रहते हुए उसे कोई गरिमा, प्रतिष्ठा नहीं थी । अपने बच्चों के मन में भी उसके लिए कोई गरिमामय स्थान नहीं था । यहाँ तक कि अपनी बेटी की शादी से भी उसे वंचित रखा गाया । लेकिन जब वह अपनी मां के गहनों की भारी संपत्ति वकील कृपानारायण से वापस हासिल करती है तो उस दौलत के साथ गरिमा भी वह हासिल करती है । संपत्ति की गरिमा से वह अपने कुल के कलंक को भी धो ड़ालती है- ''समझते न बने कि यह पुरानीवाली महक भाभी है कि कोई और । लगा मानो भाभी ने चोला बदल लिया है । .... उस मौके पर महक भाभी के खटे होने का अंदाज़ बात करने में रूआब उनका खास अपना ही था। '' 30

'समय सरगम ' उपन्यास में धन के पीछे पागल बने मानव के क्रूर व्यवहार का चित्रण है । उपन्यास की पात्रा कामिनी ,

अविवाहित वृद्धा है, असीम संपत्ति की मालकिन है, मगर घोर डिप्रशन की शिकार है । उसका सगा भाई कामिनी की सेवा के लिए नौकरानी खोकी को नियुक्त करता है , जो भाई के लिए, चैक बुक कहाँ रखी है , ज़मीन के कागज़ात कहाँ है आदि जासूसी काम भी करती है । भाई ने कामिनी के लिए एक डॉक्टर भी नयिुक्त किया है जो उसे नींद की गोलियों से धीरे धीरे मौत की ओर अग्रसर कर रहा है, ताकि कामिनी के मरने के बाद भाई लोग उसकी संपत्ति हुडप ले सकें- ''साहब, मेम साहिब का कुछ रहनेवाला नहीं । भाई लोग घर बेच चुके हैं ।..... बडे भाई मुझसे बोल गए हैं कि दो - चार दिन में इन्हें नर्सिंग होम में भेज देंगे । साहिब, मुझसे मेमसाहिब की तालियाँ माँग रहे हैं । मैं कब तक उनसे छिपाती रहूँगी । "31 कामिनी की मौत ने आरण्या को भी हिला दिया । वह यह सोचकर अपना फ्लैट बेचने का इरादा करती है कि अपने आपको यह नौबत कभी न आए । साथ साथ ईशान के गुज़ारिश करने पर उसी के घर में रहने का फैसला करती है। 'समय सरगम' उपन्यास का एक दूसरा पात्र है प्रभुदयाल जो विधुर है और तीन बेटों के रहते हूए भी परिवार में पराया हो गया है । वह भारी संपत्ति का मालिक है इसलिए उसके दूसरी रत्री के साथ संबन्ध की खबर से बेटे तिलमिला हो जाते हैं । उनकी असहिष्णुता इस हद तक बढती है कि प्रभुदयाल की मृत्यु गला घोटने से होती है । प्रभुदयाल की मृत्यु यह बात बुलन्द करती है कि वर्तमान समाज अर्थ की धुरी में ही चल रहा है। उसके प्रभाव से पुनीत समझे जानेवाले मानवीय संबन्धों का पूर्णत : विधटन हो गया है । मानवीय सम्बन्ध सम्बन्ध नहीं रह गया है ।

प्रेम तथा नैतिकता की मान्यताएँ

समय के बहाव के साथ प्रेम तथा नैतिकता संबन्धी मान्यताओं में भी परिवर्तन आया है । नैतिक मूल्य सामाजिक है, समाज के स्वास्थ्य को ध्यान में रस्वकर उनका निर्माण किया गाया है । नैतिक मूल्यों के पीछे जीवन जीने की एक निरिचत पद्धति होती है जो प्रायः रूढियों को प्रोत्साहित करती है और उसमें हेर फेर धीमी गति से होती है । लेकिन प्रेम एक वैयक्तिक प्रक्रिया है, इसलिए प्रेम धारणा में परिवर्तन अपेक्षाकृत तीव्र गति में होता है । परस्पर संबन्धित होने के कारण प्रेम को प्राय : नैतिकता के सन्दर्भ में ही आंका जाता है । प्रेम धारणा में परिवर्तन के साथ ही नैतिकता संबन्धी विचार मे भी संशोधन हुआ है । नैतिकता अपने आपमें एक आंतरिक ईमानदारी है। व्यक्ति जब अपनी शारीरिक तथा मनोवैज्ञानिक सीमाओं के अनुरूप आचरण करता है तब वह सच्चे अर्थों में नैतिक बनता है। ' परिचय से लेकर परित्याग तक नारी-पुरुष के आपसी सम्बन्धों की नैतिक धारणा में एक मूलभूत ' अंतर ' ज़रूर आ गया है। '32

कृष्णा सोबती के ' सूरजमुखी अंधेरे के ' उपन्यास में सेक्स का एक अलग अंदाज है। सेक्स किसी भी प्रकार के अपराधबोध को नहीं जगाता। रत्ती और दिवाकर ऐसे स्त्री-पुरुष हैं जो अपने समग्र अस्तित्व और व्यक्तित्व के साथ जीवन जीना चाहते हैं। उपन्यास की धुरी नायिका रत्तिका और उसकी सेक्स से जुडी हीनता ग्रन्थि है। बचपन की बलात्कार के परिणामस्वरूप झडता की शिकार बनी रत्ती एक समूची औरत बनने की कोशिश करती है। उसे एक ऐसे पुरुष का इंतज़ार है जो उसे पूरी औरत बना दे। उसी कोशिस के

दौरान रत्ती के जीवन में अनेक पुरुष आते हैं जैसे रंजन, रोहित, ओमी, बाली, डेविडठ्हाइट, भानुराव, सुब्रह्मनियम जयनाथ, राजन, श्रीपद आदि। लेकिन किसी के भी साथ सोते वक्त उसे एक प्रकार का भय दबोच लेता है और वह जड बन जाती है- ' वह एक काला ज़हरीला, क्षण हर बार मुझे झपट लेता है और मैं काठ हो जाती हूँ। ' 33 जब रत्ती के जीवन में दिवाकर आता है तब उसे इस यातना से मुक्ति मिलती है।-वह उसे समूची औरत बनाता है। रत्ती जो अपनी ही सडक का आखिरी छोर थी उसे मंजिल मिल जाती है। अपने जीवन के इस प्रयाण में रत्ती ने नैतिकता की परवाह कभी नहीं की। आधुनिक नारी को लेकर राजेन्द्र यादवजी का विचार रत्ती के विचार में मिलता जुलता है- ' वास्तविक व्यक्तित्व की खोज की दिशा में शारीरिक पवित्रता की उस दकियानूसी धारणा या किशोर-संकोच की अनुपस्थिति आज उसके मन में कोई पापबोध नहीं जगाती। '34 इस उपन्यास में चिगित सेक्स का अलग अस्तित्व है तो भी वह प्रेम से नितांत अलग नहीं है- ' दिवाकर को रत्तिका अपनी ही दौड की तरह लगी। वह रत्तिका को जानता नहीं था पर जान सकता था। वह पहला ही था जिसने ऐसी कोई माँग नहीं की जिसकी पूर्ति रत्तिका न कर सके। '35

कृष्णाजी का ' मित्रो मरजानी ' पंजाबी संयुक्त परिवार की पृष्ठभूमि में लिखा गया उपन्यास है। नायिका मित्रो और पति सरदारीलाल के बीच स्वस्थ यौन संबन्ध नहीं है। इसलिए समस्यायें पैदा होती हैं। सरदारीलाल का पुराना परंपरागत परिवार है। उस दकियानूसी पारिवारिक माहौल में मित्रो अपने तन की भूख को व्यक्त करती है। पति, सास, ससुर, जेठ, जेठानी, देवर, देवरानी सभी से

अपने अधिकार की मांग करती हुई अपनी अलग आस्मीता का ऐलान करती है। अपने दिल की बात व्यक्त करने में नैतिकता बाधा नहीं बनती। जब मित्रो मायके पहुँचती है तो उसकी देह की प्यास बुझाने के लिए उसकी मां सारा प्रबन्ध करती है। अपनी माँ के पुराने प्रेमी डिण्टी के पास जाने के लिए भी वह तैयार होती है। जब वह सीढियाँ चढती है तो माँ वापस बुलाती है। वह लौट आती है। यहाँ मित्रो और बालो का आपसी व्यवहार सखियों जैसा है। अपने पुराने प्रेमी के पास जाती बेटी के सौभाग्य से बालो कभी ईर्ष्यालू होती है ' एक दिन जो डिण्डी सौ-सौ चाव कर तेरी शरण आता था, आज वही इस लौंडिया से रंगरलियाँ मनायेगा। थू री बालो, तेरी जिन्दगी पर। '36 यहाँ बेटी को माँ अपनी सौतन मानती है। अपने दामाद के प्रति लालची नज़र रखती माँ के मनोविज्ञान से भी मित्रो अवगत है। इसलिए वह पति सरदारी का, माँ के पास जाने के प्रस्ताव का विरोध करती हुई चीख उठती है- ' तू सिद्ध भैरों की चेली, अब अपनी खाली कडाही में मेरी और मेरे खसम की मछली तलेगी? सो न होगा बीबो, कहे देती हूँ। '37 यहाँ नैतिकता के चौखट के बाहर मित्रो और बालो, माँ बेटी न होकर दो स्त्रियाँ हैं, जिनके बीच कोई वर्जित विषय नहीं हैं। एक दूसरे के प्रति ईर्ष्या द्वेष जाहिर करने में भी वे हिचकती नहीं हैं।

कृष्णा सोबती के ' तिन पहाड ' उपन्यास का श्री, जया से वचनबद्ध होकर भी विदेश में रहते हुए, एडना से शादी कर लेता है। उस शोक में जया घर छोड़ती है और उसकी मुलाकात तपन से होती है। यद्यपि तपन नया जीवन शुरू करने के वास्ते उसे आमंत्रित करता है। लेकिन जया अपने असफल प्रेम के आघात से मुक्त नहीं हो

पा रही है। उसे लगता है- ' याद जो सामने आ राह रोक ले, उसे अनसुनी कर आगे जाना अच्छा नहीं। .....जो बीत गया, सो ही अच्छा है, सो ही अपना है.....'38 वह आखिर तिस्ता के भँवर में डूबकर आत्महत्या कर लेती है। इसके अतिरिक्त ' बादलों के घेरे ', ' दो राहें : दो बाहें ',' दोहरी सांझ ', ' कुछ नहीं कोई नहीं ' जैसी कहानियों में भी प्रेम के विभिन्न रूप अंकित हैं।

माधवीकुट्टी की रचनाओं में प्रेम के विभिन्न सन्दर्भों की झलक मिलती है। उनमें कभी कभी नैतिकता प्रेम के रास्ते में बाधा बनती है। ' मानसी ' उपन्यास में नायिका मानसी विजयराजे से अवैध संबन्ध रखती है। विजयराजे मानसी के प्रेमी का भाई है जिसकी एक दुर्घटना में मृत्यु हो गयी थी। तब मानसी गर्भवति थी, और अमोल मित्रा यह सब जानते हुए भी उससे शादी करता है। शादी के कई साल बाद मानसी विजयराजे के जाल में फंस जाती है और फिर वह मानसी की बेटी सुपर्णा को भी अपने मोहजाल में फंसा देता है। उसे पता नहीं था सुपर्णा अपने भाई की बेटी है। सुपर्णा उससे गर्भवति हो जाती है। अपने पेट गिराने की माँग करनेवाले विजयराजे से सुपर्णा संबन्ध तोडती है। अनैतिकता किस प्रकार पवित्र संबन्धों को दूषित बनती है, इसका जीवंत सबूत है यह उपन्यास।

' गिद्ध ' नामक कहानी की बेटी माँ की प्रेमी से प्यार करने लगती है, और उससे शारीरिक संबन्ध भी साबित करती है। माँ को प्रेमी से अलग करने तथा उसे टीस पहूँचाने के उद्देश्य से बेटी झूठ बोलती है कि वह माँ के प्रेमी से गर्भवति हो गई है। इस सदमे से माँ बीमार पडती है और उसकी मृत्यु भी होती है। ' खोई नीलांबरी ' की

नायिका डॉ. सुभद्रा अपने किशोर प्रेम को शादी के अनेक साल बाद भी मन में बनाए रखती है। इसी कारण उसका वैवाहिक जीवन असंतुलित हो जाता है। किशोरावस्था में उसे गाना सिखानेवाले शास्त्रीजी को सुभद्रा चाहती थी, मगर उसके माता पिता उसकी मर्ज़ी के खिलाफ शादी किसी दूसरे पुरुष से करा देते हैं। फिर भी शास्त्रीजी के प्रति प्यार उसके मन में बरकरार रहा। पति की मृत्यु के बाद अपने पुराने प्रेमी की तलाश में मधुरा पहूँच जाती है।

'शतरंज', 'ठंडक', 'सूर्य', 'गालियारों के आइने', 'राजा की मेहबूबा', 'स्वतन्त्र जीवी', 'कठपुतली', 'राजपथ', 'राधा की चिट्टी', 'पतंगे', 'पद्मावती नामक वेश्या', 'ब्लेड प्रेशर', 'डाक्टर जवहर का प्रेम', 'प्रेम का विलाप काव्य', जैसी कहानियों में प्रेम के तरह तरह के रूप मिलते है। अधिकांश कहानियों की नायिकाएँ, शादी शुदा हैं। फिर भी दूसरे पुरुष के प्रेम सागर में डुबकियाँ लगाती हैं। 'शतरंज', 'ठंडक', 'गालियरों के आइने' कहानियों में नायिकाएँ पति की किसी कारण की वजह नहीं बल्कि अदम्य प्रेम-पिपासा को बुझाने दूसरे पुरुषों से प्रेम संबन्ध रखती हैं। 'शतरंज' की नायिका अचला अपने प्रेमी के अन्दर नासूर की तरह बढना चाहती है। वह प्रेमी के विरह में मरना नहीं चाहती बल्कि उसकी यादों को अपने अन्दर बनाए रखते हुए ज़िन्दा रहना चाहती है। 'ठंडक' कहानी की नायिका के लिए अधेड़ उम्र के सौम्यमूर्ती के प्रति प्रेम शाश्वत एवं आदर्श प्रेम का मूर्ति रूप है। उससे बिछुडकर उस अभाव की पूर्ति के लिए वह अन्य पुरुषों से प्रेम संबन्ध रखती है। इन्द्रजित से शारीरिक संबन्ध भी स्थापित करती है,

यह जानती हुई कि यह प्रेम क्षणिक है और महज शरीर पर अधिष्ठित है। लेकिन सौम्यमूर्ती के प्रति उसका प्यार अनश्वर है।

'सूरज' कहानी में बलात्कारी पुरुष से प्रेम करनेवाली अमृता, शरीर के पीछे पागल बनते मानवीय स्वभाव को ही जाहिर करती है। यह सर्वावदित विचार है कि शरीर आत्मा का वासस्थान है। यद्यपि आत्मा को शरीर से भी ऊँचा स्थान प्राप्त है तो भी शरीर को लेकर हमारी नैतिक मान्यता यह है कि आत्मा का वासस्थान होने के कारण शरीर को भी पवित्र रखना है। लेकिन धीरे धीरे इस विचार में परिवर्तन आया और आत्मा की पवित्रता की ओर ध्यान न देकर सिर्फ शरीर को ही नैतिकता की कसौटी मानने की रीति चली। इस धारणा को भी स्वीकृति मिली कि सिर्फ आत्मा की पवित्रता को ही माननाहै। शरीर कैसा भी हो, उसकी परवाह करने की ज़रूरत नहीं। नश्वर शरीर से कुछ भी करे अनैतिक नहीं माना जाता। 'सूरज' कहानी में पति की गैर हाजिरी में अपने को बलात्कार करनेवाले पति के दोस्त उण्णिकृष्णन से प्रेम और शारीरिक संबन्ध स्थापित करते हुए अमृता इसप्रकार सोचते हुए आश्वस्त होती है कि अपना मन पवित्र है। अन्य स्ती से संबन्ध रखनेवाला पुरुष भी शादी के संदर्भ में अपने लिए कन्या की माँग करता है। उण्णिकृष्णन जब शादी करता है तो वह अपने गांव की एक भली लडकी को ही चुनता है। पति के होते हुए गैर मर्द के साथ संबन्ध रखनेवाली अमृता को वह शादी के लायक नहीं समझता। 'कटलमयूरम' (सागर मयूर) उपन्यास में लेखिका प्रोफेसर रेणुका और किम् के बीच के प्रेम संबन्ध के द्वारा झूठे सदाचार की आलोचना करती है। रेणुकादेवी और किम् के बीच जो प्रेम है वह

मानसिक से ज्यादा शरीर पर अधिष्ठित है। सदाचार बरतने के विचार से रेणुका किम् के प्रति अपनी भावनाओं और मोह को रोकती है। 'गलियारों के आइने' कहानी में पति के होते हुए भी माधवी, पति के अफ्सर सौम्यमूर्ति को चाहती है, उसे अंधाधुंध प्रेम करती है, मगर सौम्यमूर्ति लोकलाज के भय से माधवी के प्रेम से छुटकारा पाने का उद्देश्य से उसके पति का तबादला कर देता है। लेकिन अमृता का प्यासा मन सौम्यमूर्ति को छोड़ने तैयार नहीं होता, उल्टे वह पति को छोड़ना चाहती है। 'प्रम का विलापकाव्य' कहानी में नायिका 'राजा' से मुहब्बत करती है जबकी राजा उसे सिर्फ एक भोगवस्तु मानता है। 'स्वतन्त्र जीवी' कहानी में नायिका अधेड उम्र के प्रेमी को बेहद प्यार करती है। लेकिन प्रेमी उसे सिर्फ एक रखैल की हैसियत ही देता है; क्योंकि वह समाज तथा परिवार में अपनी इज़्जत और स्थान को बनाए रखना चाहता है। कभी कभी नायिका से मिलने वह हवाई जहाज़ में पहूँच जाता है। पिता और बेटी का बहाना करके किसी होटल में कुछ दिन साथ रहकर दोनों वापस चले जाते हैं।

'कठपुतली' कहानी में अपने को महज कठपुतली बनानेवाले पुरुष को ही नारी चाहती है; उससे प्रेम करती है। उसीप्रकार 'मेरीन ड्राइव' की अनसूया ऐसे नायक से प्रेम करती है, वनमहिष नाम से अभिहित है। स्त्री को विलासिता का उपकरण मानकर उसे गुलाम बनाते वनमहिष की क्रूरता और घिनौनेपन की जानकारी यद्यपि उसे है तो भी उसके प्रति अनसूया के मन में प्यार है। फिर भी वह उसके चंगुल से बचने का निश्चय करती है। 'बंजर भूमि' कहानी में विवाह के बाद भी अपने पुराने प्रेम को मन में बनाये रखनेवाले स्त्री

पुरुष के माध्यम से प्रेम की अनश्वरता को घोषित किया गया है। 'राजा की मेहबूबा' में अधेड उम्र का नायक राजा अपनी जवान प्रेमिका के प्रेम की तीव्रता में उसका गुलाम हो जाता है। नायिका राजा से आत्मीयता रखती है, साथ 'जिनो' नामक युवक से भी संबन्ध रखती है। 'राजपथ' कहानी की मनोरमा जेन्निफर और जेरी के बीच का प्रेमसंबन्ध प्रेम के खोखले रूप को व्यंजित करता है। जेन्नी, पारीस की प्रसिद्ध फैरान मॉडेल है, जिसकी मुलाकात जेरी से श्रीलंका में होती है। वह स्टीफन फ्लेच्चर नामक अमीर साहित्यकार का प्राइवेट सेक्रेटरी है। फ्लेच्चर का अपने सेक्रेटरी जेरी से समलैंगिक संबन्ध था। इसलिए जेन्निफर और जेरी के प्रेम संबन्ध की बात जानकर फ्लेच्चर, जेरी को मार डालता है। लेकिन उसकी मृत्यु के बाद जेरी से अपने प्रेम की बात को छिपाती हुई जेन्नी अखबारवालों से कहती है कि मैं क्यों फ्लेच्चर की सेक्रेटरी से प्यार करूँगी। अपनी गरिमा को जाहिर करती हुई वह उनसे बताती है- 'मैं सिर्फ राजपथों में चलती आई हूँ। '39 इसके अलावा 'राधा की चिट्ठी', 'घनश्याम', 'पतंगे', 'पद्मावती नामक वेश्या', 'डॉक्टर जवहर का प्रेम' आदि कहानियों में प्रेम के तरह तरह के रूप चित्रित हैं।

सदियों की परतंत्रता के कारण हमारे मन में गुलामी की जडें इतनी गहरी पेठ गई हैं कि हम उनसे अभी तक मुक्त नहीं हो पाए हैं। यह परतंत्रता की मानसिकता भाष्य संस्कृति, पहनावा, शासन व्यवस्था सभी में दृष्टिगत है। 'यारों के यार' उपन्यास में इस मानसिक परतंत्रता का निदर्शन नौकरशाही व्यवस्था के भ्रष्ट स्वरूप में देखा जा सकता है। शासन व्यवस्था के संचालन के लिए बाबू-वर्ग का गठन, अफसरों का अधीशत्व, क्लर्कों की तरक्की और विकास में अडचन

आदि नौकरशाही की सारी विशेषताएँ आज भी मौजूद हैं। इस उपन्यास में दफ्तरी जीवन एवं नौकरशाही परिवेश का जीवन्त चित्रण हुआ है।

तनावग्रस्त दाम्पत्य और दाम्पत्येतर संबन्ध

मानवीय संबन्धों में स्त्री-पुरुष का रागात्मक संबन्ध सर्वाधिक घनिष्ठ और महत्वपूर्ण रहा है। आधुनिक जीवन की होड में जो परिवर्तन आए हैं, उनकी स्पष्ट झलक पति-पत्नी संबन्धों में भी जाहिर हैं। आज़ादी के बाद शिक्षित नारी में आए अस्मिता व आत्मनिर्भरता का भाव पति पत्नी संबन्धों में बदलाव के कारण बने हैं। जो चीज़ प्राप्त नहीं है उसके प्रति आकर्षण मानव मन की सहज प्रवर्त्ति है। जो हाथ लग जाता है उसके प्रति आकर्षण धीरे धीरे कम होने लगता है और उसके स्थान पर एक प्रकार काऊब पैदा हो जाता है। वैवाहिक संबन्धों को लेकर भी यह बात सही है। जब दाम्पत्य जीवन बोरियत से भर जाता है तब छोटी छोटी बातें भी तनाव एवं संघर्ष उत्पन्न करती हैं।

कृष्णा सोबती के 'मित्रो मरजानी' उपन्यास के मित्रो और सरदारी लाल का वैवाहिक जीवन संतुष्ट नहीं है। पति को 'बगलोल' कहकर वह अपनी असन्तुष्टि प्रकट करती है। जिठानी सुहागवन्ती से वह कहती है, 'देवर तुम्हारा मेरा रोग नहीं पहचानता। ....बहुत हुआ हफ्ते-पखवारे....और मेरी इस देह में इतनी प्यास है, इतनी प्यास कि मछली-सी तडपती हूँ। '40 अपनी शारीरिक भूख को मिटाने केलिए अन्य पुरुष को स्वीकारने में उसे कोई हिचक नहीं है। एक तवायफ की बेटी होने के नाते उसमें विलासिता का खूब प्रभाव है। और वह धर्म, समाज, परिवार की मान-मर्याद को महत्वहीन मानती है।

उसके लिए अपनी जवानी और सुन्दर शरीर ही सबसे बडे सत्य हैं। वह मानती है कि अगर ईश्वर ने रूप यौवन दिया है तो उसे भोगने का हक भी उसे दिया है। ससुराल में जब उसकी हरकतों के बारे में जिनसे उसके चरित्र पर लांछन लगी है, पूछने पर वह बताती है- सोने सी अपनी देह झुर-झुर कर जला लूँ?..... सच तो यूँ, जेठ जी, कि दिन दुनिया बिसरा मैं मनुक्ख की जात से हँस-खेल लेती हूँ। झूठ यूँ कि खसम का दिया राजपाट छोड मैं कोठे पर तो जा नहीं बैठी?41 यद्यपि मायके में वह माँ की प्रेमी से मिलने का निश्चय करती है तो भी, बाद में अपने पति और परिवार की ओर वापस आती है।

कृष्णाजी के 'दिलो-दानिश' उपन्यास दिल्ली शहर और वहां की संस्कृति के परिप्रेक्ष्य में वकील कृपानारायण के कुनबे की कथा कहता है। पत्नी के अलावा वकील कृपानारायण के एक रखैल भी है- महकबानो। वह उसके मुवक्किल नसीमबानो की बेटी है। अपने खानदान के संस्कारवश और अपनी कमाई से कुनबा चलाने के नाते उसमें विजेता पुरुष का दर्प है। उसका यह विश्वास है कि घर के बाहर मौजमस्ती के लिए अवैध संबन्ध रखना उसका अधिकार है। दिन भर की व्यस्तताओं और कामकाज के कारण कृपानारायण आराम चाहता है। महकबानो का फराशखाना ऐसी जगह है जहाँ पहुँचकर उसे सुकून मिलता है ; जब कि हर बात पर शिकायत और झगडा करनेवाली पत्नी कुटुम्बप्यारी से उसे ऐसी शान्ति नहीं मिलती।

' एक दिन' कहानी का धर्मपाल पहली पत्नी षीला से ऊबकर श्यामा से शादी करता है। दोनों पत्नियां एक ही घर में रहती है तो भी वह षीला की ओर देखता तक नहीं। बाद में एक दिन

श्यामा की गैर हाज़िरी में षीला से हिलमिल जाती है और उससे उसका गहरा लगाव होता है यानी वह षीला की ओर वापस आता है। ' ज़िन्दगीनामा ' उपन्यास की चाची महरी शाहजी के सम्मोहन में आकर अपने पति वीरेन्द्र सिंह को छोडकर शाहजी से शादी करती है। उसे अपने पति से किसी भी प्रकार की शिकायत नहीं थी। फिर भी शाहजी से वह इतनी मोहित हो गई कि ससुराल से भाग चली। उसी प्रकार 'कुछ नहीं कोई नहीं' कहानी में शिवा अपने पति रूप के होते हुए भी उसके दोस्त आनन्द से प्रेम करने लगती है और फिर शादी भी करती है। उसका कोई बच्चा नहीं था और आनन्द के बच्चों के लिए वह पराई रही, गैर रही। आनन्द की मृत्यु के बाद वह कहीं की भी नहीं रह जाती है और उसके घर संपत्ति छोडकर चले जाने का निश्चय करती है।

माधवीकुट्टी अपनी अनेक रचनाओं में तनावग्रस्त दाम्पत्य और दाम्पत्येतर संबन्धों को चित्रित किया है। ' मानसी ' उपन्यास में मानसी की शादी अधेड उम्र के अमोल मित्रा से इसलिए हुआ था कि वह शादी के पहले अपने प्रेमी से गर्भवती हो गई थी और फिर प्रेमी की मृत्यु हो जाती है। यद्यपि पति मानसी को बहुत चाहता है और अच्ची तरह देखभाल भी करता है तो भी मानसी के मन में पति के अर्थभाव और कुरूपता को लेकर गहरी असंतोष है। इसलिए छोटी छोटी बातों पर पति से वह हमेशा झगडा करती है। उसका अतृप्त मन इसलिए विजयराजे की ओर मुड जाता है।

' झूला-चौपाई ' लघु उपन्यास के पात्र ओमना और देवदास उण्णित्तान का वैवाहिक जीवन भी संतोषपूर्ण नहीं है। पोलियो

बीमारी के कारण अपाहिज बने देवदास उण्णित्तान की दूसरी पत्नी है ओमना। इसलिए वह वैवाहिक जीवन की सारी खुशियों से वंचित है।ऐसे संदर्भ में शिवशंकरन से उसकी मुलाकात होती है और उसे चाहने लगती है। वह अपना धन दौलत सब कुछ उसे समर्पित करती है। बाद में वह शिवशंकरन द्वारा वंचित हो जाती है। वास्तव में शिवशंकरन के प्रति अगाध प्रेम के कारण नहीं, बल्कि अपने वैवाहिक जीक्न से जनित नाखुशी ही ओमना को शिवशंकरन के साथ सम्बन्ध रखने के लिए प्रेरित करती है।

' रोहिणी ' उपन्यास की रोहिणी को गरीबी के कारण ऐसी शादी करनी पडी जो उसे पसन्द नहीं थी। वह अपने पति तथा सास दोनों से असंतुष्ट है। उसका पति हमेशा उसके चरित्र पर शक करता है और उसे मार डालने की साजिश बनाता है। इसके लिए विजयन नामक एक कातिल को नियुक्त भी करता है। इन सब बातों से अनजान रोहिणी कातिल की शारीरिक सुन्दरता से आकर्षित हो जाती है। उसके साथ शारीरिक सम्बन्ध स्थापित करने के लिए भी वह हिचकती नहीं। आखिर उस प्रेमी के हाथों वह मर भी जाती है। ' जया नामक बीज ' कहानी में रामुण्णिनायर एवं रमणि की कोई संतान नहीं है। इसलिए साथ रहने रामुण्णिनायर का भतीजा रवि उनके घर आता है। यद्यपि शुरुआत में रमणि के मन में उसके प्रति ममता है लेकिन बाद में वह प्यार में बदल जाती है। रमणि उससे गर्भवती भी हो जाती है। त्रासद बात यह है कि इस रिश्ते को कायम रखते हुए उसे अपने पति की तनिक भी चिन्ता नहीं है। 'कोहरा' नामक कहानी में भी नायिका अनमोल विवाह से उत्पन्न अतृप्ति के कारण संतृप्त नहीं रह

पाती। बूढे पति के प्यार को समझने और मानने के लिए वह तैयार नहीं होती। पति की तरफ से एक बच्चे की कल्पना तक उसमें नफरत पैदा करती है। उसका दिल तो नीचे मुहल्ले में गाते गरीब युवक की ओर झुक जाता है।

'एन्नेन्नुम तारा' का रामनकुट्टी गुडिया कारखाने का वैज्ञानिक है। उसकी पत्नी तारा बहुत सुन्दर है। उसे भी रामनकुट्टी ने मशीनी गुडिया बना दिया है। उसकी छाती में ऐसी चीज़ें भर देता है जैसी कि घडी के अन्दर दिखाई देती है। आधुनिक यांत्रिक सभ्यता से तादात्म्य प्राप्त करते हुए यांत्रिक बनते मानवीय संबन्धों की सही अभिव्यक्ति इस कहानी में हुई है।

विवाहेतर संबन्ध रखने वाले स्त्री पुरुष का चित्रण माधवीकुट्टी ने भी किया है। वैवाहिक जीवन की बोरियत से उभरने के लिए अन्य स्त्रियों से संबन्ध जोडते पुरुषों का चित्रण ' मेरिन ड्राइव', ' स्वतंत्र जीवियाँ ', ' ठंडक',' चाँद का माँस ',' शतरंज ', ' पागलपन ',' मेरी सहेली अरुणा ', 'पातिव्रत्य ' , ' पलायन' जैसी कहानियों में हुआ है। ' चाँद की किरण ' कहानी में दोस्त रमेश और इकबाल के आपसी प्रेम संबन्ध का चित्रण है। रमेश की शादी के बाद इक्बाल, रमेश के साथ नहीं रहता। घर बदलता है। उसे रमेश की पत्नी से नफरत है और वह आत्महत्या करने की कोशिश भी करता है। रमेश की पत्नी इक्बाल के मन की बात जान लेती है। उसके पूछने पर पति कहता है - ' हाँ, इक्बाल एक विचित्र आदमी है। साधारण लोग उसे समझ नहीं सकते।..... क्या तुम समझ सकते हो? पत्नी ने फिर पूछा। ' हाँ, अन्दर बाहर, आत्मा और शरीर। उस दिन से पत्नी का

दिल बेचैन हो गया। '42 उसके दिल की बेचैनी इस रूप में बाहर प्रकट हो रही है कि आत्महत्या की कोशिश में बीमार पडे इक्बाल से वह कहती है-' तुम्हारी जलन ने ही तुम्हें इस हरकत के लिए प्रेरित की।..... जलन ? किसलिए ? रमेश मुझे भी प्यार कर रहा है। इक्बाल ने कहा। हाँ, लेकिन मैं गर्भवती हो गयी हूँ। तुममें वह शक्ति नहीं है न, इसलिए ही तुमने आत्महत्या करने की कोशिश की। इक्बाल दोनों हाथों से चेहरा ढककर ज़ोर से सिसकने लगता है।' ४३ इस प्रकार पत्नी का आहत मन पति के प्रेमी से बुरी तरह पेश आकर आश्वासन का अनुभव करता है। ' वरलक्ष्मी पूजा' कहानी में पति को कभी टीस न पहुँचाने के उद्देश्य से पत्नी, दूसरी स्त्री के साथ पति के प्रेम संबन्ध को स्वीकार करती है। उस स्त्री से वह कहती भी है कि मेरे पति को कभी दुःख नहीं देना। 'स्तगित हणिमूण' कहानी में वैवाहिक जीवन की अतृप्ति के कारण पति और पत्नी दोनों विवाहेतर सम्बन्ध रखते है। मन में एक दूसरे से नफरत करते हुए भी बाहर प्यार का अभिनय करते हैं।' टंडक', 'शतरंज', 'घनश्याम',' राधा की चिट्ठी ',' राजा की मेहबूबा',' नदी फिर से बही','रात में','गिद्ध' जैसी कहानियों की नायिकाएँ शादीशुदा है। मगर वैवाहिक ज़िन्दगी से ये संतुष्ट नहीं है। यह शादी के बाद गुम हो गए सच्चे प्रेम की तलाश में है। प्यार पाने की ललक में यह जो अवैध संबन्ध रखती है। इससे उनके मन में कोई पछतावा या पापबोध नहीं है।

अन्य पारिवारिकसम्बन्ध

पति-पत्नी सम्बन्धों के अलावा अन्य मानवीय सम्बन्धों में भी परिवर्तित समय के अनुसार बदलाव आया है।

कृष्णाजी के 'समय सरगम ' उपन्यास का प्रभुदयाल विधुर है और उनके तीन बेटे है। बेटे विवाहित हैं और अपने अपने पैरों पर खडे हैं। उनके मन में पिता के लिए कोई खास स्थान नहीं है, प्यार भी नहीं, सिर्फ उनकी दौलत से ही ललक है। पिता के दूसरी स्त्री से सम्बन्ध का पता चलते ही संपत्ति नष्ट हो जाने के डर से वे पिता को मार डालते हैं।

जीवन की होड में अपने आपको बचाये रखने की व्यस्तता में सम्बन्धों की आपसी आत्मीयता घट जाती है। उसे बनाए रखने में आदमी असमर्थ होता है। 'यारों के यार ' उपन्यास में भवानीबाबू अपने बेटे मुन्नन की दुर्घटना की खबर सुनते ही घर नहीं आता। अपने निलंबन से जुडी समस्याओं को निपटाने की व्यस्तता में वह ऐन वक्त बच्चे के पास नहीं पहुँचता है, और जब पहुँचता है तब तक बच्चे की मृत्यु हो जाती है। बच्चे के अंतिम संस्कार के बाद अगले दिन ही वह वक्त से पहले ही ऑफिस पहूँच जाता है ताकि अपनी नौकरी न छूट जाएँ। पुनीत संबन्धों में आए गहरे विघटन को यह कहानी बेबाक अभिव्यक्त करती है।' दादी माँ', ' बहनें ', ' अभी उसी दिन ही तो' कहानियों में दादी, सास, सकुन्ती आदि के ज़रिए परिवार में गरीमा से छुत बूढियों के चित्र उभर आए हैं।' समय सरगम' उपन्यास की दमयन्ती का घर में कोई स्थान नहीं है। वह बूढी हो चुकी है, घर में उनके बेटों का शासन है। उसे एक गुलाम की तरह जीवन बिताना पड रहा है। अपने मेहमानों को घर के ड्राइंग रूम में बिठाकर चाय पिलाने का हक तक उसे नहीं है।

माधवीकुट्टी ने आधुनिक जीवन के बदलते मानवीय संबन्धों को बारीकी विश्लेषण करने की सफल कोशिश की है। ' बकरी' कहानी की मां अनपढ़ एवं गंवार है। परिवार एवं बच्चों के लिए वह मशीन की तरह अविराम काम करती रहती है। अनपढ एवं असुन्दर होने के कारण बच्चों के लिए वह अपमान की चीज़ है। माँ को बकरी जैसी समझते हुए, वे उसे उनके साथ ले जाने तक के लिए तैयार नहीं होते। छोटा बेटा कहता है कि माँ को स्कूल ले जाना मेरे लिए अपमान है। ' बच्चा और पिता' कहानी में ऐसी एक बच्ची का चित्रण है जो माँ बाप के प्यार से वंचित है। माता पिता दोनों से संपन्न पारिवारिक माहौल के अभाव में बच्ची का मन दर्द से तडप रहा है। बच्ची का पिता खूबसूरत माँ को छोडकर चला गया है। उसे पिता के प्यार और उसके वापस आने की प्रतीक्षा है। पिता के प्यार के अभाव से उत्पन्न असुरक्षा से वह सोचती है, पिता ने क्यों माँ को छोड दिया था? अब वह उसेज़रूर याद करता होगा। लेकिन मुझे भूल गया होगा। उनके जाते वक्त मैं छोटी तो थी।

'दया नामक विकार' नामक कहानी माता पिता के अतृप्त जीवन के कारण उनके प्यार और देखभाल से वंचित लड़का शिवप्रसाद की कहानी है। वह लंगडा है और माँ के प्यार के लिए तरसता है। माँ हमेशा पिता से झगडा करती रहती हैऔर अपने मामलों में व्यस्त रहती है। बच्चे की भावनाओं को जानने की कोशिश नहीं करती। एक अमीर परिवार की संतान एवं सारे वैभवों से युक्त होकर भी लडका अपने घर में अकेलापन महसूस करता है। उसके दोस्त वर्गीस बहुत गरीब है तो भी घर में प्यार की ऊष्मलता है। ममतामयी मां है।

यह सब देखकर शिवप्रसाद के दिल का दर्द और बढ जाता है। 'तेरह साल की बेटी' ऐसी एक लडकी की कहानी है जिसकी माँ उसकी देखभाल नहीं करती, क्योंकि उसका रंग साँवला है और देखने में भी सुन्दर नहीं है। माँ रह रहकर बेटी की बदसूरती और काले रंग पर व्यंग्य कसती है। सब सुनकर भी बेबी रोती नहीं, माँ को दोषी नहीं ठहराती, बल्कि उससे प्यार करती है। 'झूठ' कहानी के बालक अप्पू का पिता उसके छोटे छोटे शरारतें एवं ज़िद्द को मानने के लिए तैयार नहीं है। हर छोटी बात के लिए डाँटता है और उसके ज़िद्दी स्वभाव के लिए माँ को दोषी ठहराता है। एक रात को माँ के अभाव में पिता का स्टेल्ला नामक औरत के साथ हुए अवैध संबन्ध की बात जब बच्चा माँ से कहने लगता है तो पिता यह कहकर डाँटता है कि लडका हमेशा झूठ बोलता है। जब दुबारा उसके बारे में कहने लगता है तब फिर उस पर डाँट पडती है। माँ उससे बताती है- ' बेटा तुझे झूठ नहीं बोलना चाहिए। बडे होकर तुझे भी पिता के समान होना है। तब बच्चा माँ से पूछता है,-'क्या घोडे के बारे में भी नहीं कहना चाहिए?'44 अपने दुराचार को छिपाने के लिए बेटे को दोषी ठहराते पिता का ज़लील रूप यहाँ उभर आता है। पिता के डाँटने से अप्पू के मन में भी भय और दुविधा उत्पन्न होते हैं। 'रवि की कहानी' की लिली, अमीर माँ बाप की बेटी है। उसका एक ही भाई था जो किशोरावस्था में ही बीमारी के कारण मर गया था। जवानी में बेटी के दोस्त रवि से लिली प्यार करती है। लेकिन हर संबन्ध को अर्थ के तराजू पर तौलनेवाली लिली के मां बाप उसकी शादी किसी दूसरे पुरुष से करवाते है। मां बाप के प्यार के अभाव से उत्पन्न असुरक्षा बोध के कारण ही लिली रवि की ओर

आकर्षित हो गयी थी। उसका वैवाहिक जीवन भी संतुष्ट नहीं रहा। पति-पत्नी के बीच झगडा होता है जिसका असर बच्चों पर पडता है- ' ठोस कारणों के अभाव में ही पति पत्नी के बीच नफरत बरकरार था। कांटे और रस भरे पत्तों से युक्त ' कैक्टस' के समान। फिर वह पौधा पेड बन गया। वह उस घर की सांस लेती आत्मा बन गयी। गेंद से खेलते बातें करते व हँसते वक्त उनके बच्चे उस पेड के निश्वास सुनते है। वे देखते है कि वह पेड हाथों के समान शाखाओं को फैलाकर बढने की कोशिश करता है। तब उनके स्वर धीमी हो जाते हैं। हँसी ओझल हो जाती है।'45

बच्चों से तिरस्कृत बूढों की बदहालत भी माधवीकुट्टी ने चित्रित की है। 'दादा ' कहानी के बीमार बूढा पिता अपनी बेटी से उसके साथ बंबई जाने की इच्छा प्रकट करती है। उसके साथ रहकर अंतिम सांस लेना चाहता है। लेकिन बेटी और दामाद बूढे पिता को साथ को साथ ले जाकर मुसीबत मोल लेना नहीं चाहते। बेटी को यद्यपि पिता की आशा को पूरा न कर सकने का दुःख सताता है तो भी अपने पति की इच्छा के अनुसार पिता को साथ न ले जाने का निश्चय करती है। 'दादा और सेविकाएँ' कहानी के बूढा बीमार पिता भी बच्चों से घोर तिरस्कार का अनुभव करता है। उनके बेटे विदेश में बस गए है और पिता के नाम सिर्फ पैसा भेजना ही अपने कर्तव्य समझते हैं। 'काला कुत्ता' कहानी में भी बूढा विधुर बच्चों के प्यार के अभाव में बहुत अकेलापन महसूस करता है। घर में आई कुत्तिया को देखकर उसे अपनी स्वर्गीय पत्नी का एहसास होता है। 'मां' कहानी भी इसी किस्म की है। अपनी बूढी माँ की देखभाल करने के लिए बेटे तैयार

नहीं होते। जिन बच्चों को माँ ने कडी मेहनत करके पाल पोसकर बडा किया था वे अपनी ज़िन्दगी मज़े में गुज़ारते है। माँ की परवाह नहीं करते। 'चंदन की चिता' बच्चों के प्यार और देखभाल से वंचित माँ की कहानी है। उनके तीनों बेटे दूर शहरों में रहते है। मां ने जीते जी बच्चों से कभी कुछ नहीं मांगा, किसी ने कुछ दिया भी नहीं । लेकिन मां के मरने पर बडा बेटा उसके लिए चंदन की चिता तैयार करता है। अंतिम संस्कार के खर्च़ उठाने के लए तीनों बेटे तैयार होते हैं। क्योंकि उनकी दृष्टि मां के कीमती हीरों के कर्मफूल में गडी है।

टिप्पणियाँ

1. कृष्णा सोबती - बादलों के घेरे - पृ.122
2. वही - पृ.125
3. वही - पृ.126
4. वही - पृ.126
5. वही - पृ.126-127
6. वही - पृ.128
7. वही - पृ.169
8. वही - पृ.170
9. वही - पृ.173
10. वही - पृ.173
11. मधुरेश - साक्षात्कार - जुलाई-अगस्त - 1996 - पृ.185
12. कृष्णा सोबती - बादलों के घेरे - पृ.164
13. वही - पृ.165
14. वही - पृ.109
15. वही - पृ.109
16. वही - पृ.112
17. वही - पृ.113
18. वही - पृ.43
19. वही - पृ.60
20. रोहिणी - एक नज़र कृष्णा सोबती पर - पृ.47
21. कृष्णा सोबती - ज़िन्दगीनामा - पृ. 13
22. वही - पृ.44
23. वही - पृ.76

24. वही - पृ.193

25. वही - पृ.214

26. रोहिणी - एक नज़र कृष्णा सोबती पर - पृ.125

27. कृष्णा सोबती - समय सरगम - पृ.107-108

28. माधवीकुट्टी - मानसी - पृ.12

29. माधवीकुट्टी - माधवीकुट्टी के तीन उपन्यास - पृ.69

30. कृषणासोबती - दिलो दानिश - पृ.184

31. कृष्णा सोबती - समय सरगम - पृ.99-100

32. राजेन्द्र यादव - एक दुनिया समानान्तर - पृ.36

33. कृष्णा सोबती - सूरजमुखी अन्धेरे के - पृ.92

34. राजेन्द्र यादव - एक दुनिया समानान्तर - पृ.38

35. कृष्णा सोबती - सूरजमुखी अन्धेरे के - पृ.150

36. कृष्णा सोबती - मित्रो मरजानी - पृ.11

37. वही - पृ.111

38. कृष्णा सोबती - यारों के यार तिन पहाड - पृ.85

39. माधवीकुट्टी - माधवीकुट्टी की प्रेम कहानियाँ - पृ.190

40. कृष्णा सोबती - मित्रो मरजानी - पृ.20

41. वही - पृ.37

42. माधवीकुट्टी - मेरी कहानियाँ - पृ.473

43. वही - पृ.473

44. माधवीकुट्टी - माधवीकुट्टी की कहानियाँ - पृ.28

45. माधवीकुट्टी - मेरी कहानियाँ - पृ.174

अध्याय पाँच

कृष्णा सोबती और माधवीकुट्टी की सर्जना की शिल्पगत विशिष्टताएँ

यह सर्वविदित एवं निस्तर्क बात है कि भाव और रूप किसी भी सर्जना के अनिवार्य अंग हैं। दोनों की समान हैसियत हैं। दोनों का समन्वित संतुलन ही किसी भी रचना को सौन्दर्य और महत्व प्रदान करता है। उपन्यास के संदर्भ में रूप के तहत भाषा से जुडी सारी बातें आ जाती हैं जिनकी वजह वह संवेदनशील एवं पठनीय बनता है।

भाषा

हालांकि भाषा भावों की अभिव्यक्ति का माध्यम है, फिर भी हर रचनाकार की अपनी खास भाषा होती है। अपनी संश्लिष्ट भावनाओं एवं संवेदनाओं की अभिव्यक्ति के लिए लेखक जब विशिष्ट शब्दों का खास अन्दाज़ में प्रयोग करता है तो रचना की भाषा विशिष्ट रूप धारण करती है। कमलेश्वरजी के विचार में - " हर लेखक को भाषा की खोज करनी पडती है क्योंकि आदमी के अन्दर और बाहर जो खामोशी है, और उसके अन्दर और बाहर जो शोर है, वह हर समय एक-सा नहीं होता और उसी को कथाकार शब्द देता है। अपने वक्तव्य को सही-सही प्रस्तावित कर सकने से ही उसका अर्थ प्रकट हो पाता है। .....भाषा की खोज इसलिए अर्थो की खोज भी बन जाती है। " 1 सही भाषा तथा विचारों में ताल-मेल बिठाने से ही वैचारिक संवाद सफल हो सकता है। रचनाकार की यह क्षमता रचना को संवेदनशील बना देती है।

कृष्णा सोबती ने भाषा पर विशेष ध्यान दिया है। कथ्य की जितनी विविधता है उतनी भाषा में भी है। कथ्य को प्रभावात्मक ढंग से प्रस्तुत करने के लिए कहीं उन्होंने संवेदनशील काव्यात्मक एवं तीर की मानिन्द नुकीली भाषा का प्रयोग किया है। ग्रामीण परिवेश को उभारने के लिए स्थानीय बोली एवं शब्दों से मिश्रित भाषा के प्रयोग में भी वे सिद्धहस्त हैं। अपनी कई रचनाओं में बिंबात्मकता और लाक्षणिकता से युक्त काव्यात्मक भाषा तथा निर्मम, धारदार, आक्रामक भाषा का भी प्रयोग किया है जो कथ्य को संवेदनशील बनाता है।

' ऐ लडकी ' उपन्यास शिल्प की दृष्टी से कृष्णाजी की गंभीर एवं अनोखी रचना है। कथ्य की दृष्टी से यह उपन्यास उतना गंभीर नहीं है। इस में कथा गौण है, पात्र तथा घटनाओं की भी कमी हैं। पूरा उपन्यास मृत्यु शय्या पर पडी बूढी के अनुभवों का लेखा जोखा है जो माँ बेटी के बीच के वार्तालाप के रूप में रचित है। इस उपन्यास के संदर्भ में अरविन्द त्रिपाठी ने लिखा है - " 'ऐ लडकी ' कविता के इलाके से गद्य का, मृत्यु के क्षेत्र से जीवन का चुपचाप उठाकर लाया सहेजा गया अनुभव है। "2 वहाँ जीवन और मृत्यु का काव्यात्मक सम्मिलन है - " वही उसका हरा मूँगिया जोडा और ओढनी में से झाँकता हुआ उसका स्तन, वानप्रस्थ उतरा हुआ है। कान देखते हैं, और आँखें सुनती हैं। पकी उम्र खाली आहटें ही चुनती हैं। "3

स्थानीय बोली का प्रयोग परिवेश की गंध को उभारता है।

इससे काव्यमय अभिव्यक्ति और भी प्रभावोत्पादक बन जाती है। 'जिन्दगीनामा ' उपन्यास के पहले अध्याय में शरद पूर्णिमा की रात को लाला वड्डे के आंगन में स्तियों-बच्चों की टोली में पौराणिक कथाख्यान का प्रसंग, कलपना, भावुकता तथा लयात्मकता से युक्त काव्यात्मक भाषा के लिए उत्तम उदाहरण है- " आकाश में टंगा चांद और दरिया में कांपता चांद एक ही चांद का अक्स नहीं , दो चांद हैं, दो भिन्न प्रकृतियों के स्वामी । चाँद अपना दुख किसी को नहीं दिखाता । सारे दुख दर्द अन्दर ही अन्दर पीता रहता है। सो चाँद का कालजा शिलाखण्ड बन गया है। ....दरियाओं में काँपता चाँद चंचल है। हिमवान ने सोचा उसे पाताल पहूँचा दूँगा और यह मनचला लौंकडा परबतों से कूद भागा और हमारी धरती पर अठखेलियाँ करने लगा। "4 उपन्यास के आरंभ में लगभग कविता जैसी पंक्तियों में सोबतीजी ने जो वाङमय की संरचना की है वह बिलकुल अनन्य है-" गलबहियों सी / उमड़ती मचलती / दृध भरी छातियों सी / चनाब और जेहलम की धरती ; बाहों के चूडे छनकातीं / मक्का सी खिली खिली शरबती आँखोंवाली / नयी ताज़ी बहूटियाँ; अपने आँचलों में मज़बूत बेटे बेटियों की पनीरियाँ उगाती माताएँ; तने माथे पर अक्खड़ तेवर / गेंहुआं रंग पर नखरीली मूँछोंवाले / भारे गौहरे चेहरों पर गन्दम की इलाही लाली लिए सदियों खुले आसमान तले गेंहूँ की सुनहली फसल उगाता गबरू जवान....."5

' सूरजमुखी अंधेरे के ' में गहन संवेदना के स्तर पर रत्ती

की कथा को उकेरा गया है जिसके भविष्य को अतीत की एक घटना की काली छाया ने ढँक दिया है। कालका से ऊपर चढती रेल की खिडकी में मुँह टिकाते हुए रत्ती की यादों के तौर पर चेतना प्रवाह शैली में प्रकृति का खूबसूरत वर्णन प्रस्तुत किया गया है। रत्ती की यादों में उभरता प्राकृतिक वातावरण पाठक के समक्ष भी साकार हो उठता है-

" आँखों में छोटे-बड़े स्टेशन, पहाडों के सिल-सिले, घुमावदार आड़े-तिरछे पुल। नीले आसमान पर चमचमाते चिट्टे दूध बादलों के टुकडे। सामने हरियाली के विस्तार पर चहकते बुरूस के लाल शोख पेड ।"6 प्रस्तुत वातावरण के चित्रण में काव्य भाषा की बिंबात्मक शैली का ही प्रयोग उपन्यासकार ने किया है।

उपन्यास के ' सुरंग ' शीर्षक के अन्तर्गत रत्ती की चेतना में उसके बचपन के मूर्त होने का चित्रण भी वैसे ही हुआ है- " चीड के पेडों पर सांय - सांय हवा और नन्हें नन्हें पांवों में, उछलती - कूदती बच्चों की टोलियाँ। एक बार टीलो, टीलो ही टीलो, दूधिया तुम्हारी - काली हमारी , कडी के कपाट, दहलीजें, खिडकियाँ, चौखटें, टीन की छतें, पत्थरों के नीचे, पेडों के तनों पर कोयले की लकीरें। चाक की लकीरें। "7 इस तरह उपन्यास में रत्ती की चेतना के माध्यम से ही शिमला का वातावरण सजीव हो उठा है। इस उपन्यास में भाषा की सर्जनात्मक क्षमता को उद्‌घाटित करने का प्रयास भी किया गया है। यह निस्सन्देह बात है की अपने रूपगत कसाव में इस उपन्यास की भाषा

कविता के निकट है। यों कह सकते हैं कि गद्य की वर्णनात्मक क्षमता और कविता की भावप्रवणता का संतुलन बनाते हुए एक निजी भाषा की निर्मिती सोबती ने की है।8 एक शिल्पकार की सी सजगत से कृष्णाजी ने एक एक शब्द को तराशा तथा संवारा है। खुद आपने स्वीकार भी किया है - " शब्दों की आत्मा से मेरा साक्षात्कार था। इस साक्षात्कार के लिए मैं सूरजमुखी की कृतज हूँ। सूरजमुखी की पहली और तीसरी प्रतिलिपि को जाँचकर देखा है। कोई परिवर्तन नहीं। काव्यांश को सुधारने संवारने तक की कहीं कोई गुंजाइश नहीं थी। भाषा के स्तर पर कोई जुगाड मंजाव या कसाव की छूट नहीं थी। पूरी कथा की लय अपने-आप ही शब्दों में घुलती चली गयी और जितना जहाँ कहना था। उसमें आप ही अपनी सामर्थ्य थी। सामर्थ्य थी क्योंकि कथा की ज़मीन बनायी नहीं गई थी। वह थी। जडें गहरी थीं। तह थी, गुंजल थे और आँखों के सामने थे।"9 उपन्यास में भाषा की यह साज सज्जा सिर्फ बाह्य अलंकरण के लिए ही नहीं, यौन ग्रन्थि की शिकार बनी रत्ती के मानसिक एवं ऐन्द्रिय अनुभवों की सहज अभिव्यक्ति के लिए हैं।

संदर्भ के मुताबिक शब्दों को प्रयुक्त कर नया अर्थ देने की प्रवृत्ति आधुनिक रचनाओं की एक खास विशिष्टता है। कृष्णा सोबती ने अपनी रचनाओं में नये नये विशेषणों का सृजन किया है। जैसे- " भँवराते अंधेरे, मुखहीन समय, छनीली छांह, बीमार बातें, इकहरा जीवन,धुपाती सुबह आदि।।0 इसके अलावा सोबतीजी ने लाक्षणिक भाषा का भी प्रयोग

किया है जैसे - 'इस चलते पानी का ठौर कहाँ', 'इस पानी की झलक झेली नहीं जाती ', 'केवल मंझले कुछ कहते रहे जिसे मेरा मन नहीं, तन सुनता रहा' आदि 11

माधवीकुट्टी ने चुनिंदे शब्दों के प्रयोग से अनोखे भावजगत का सृजन किया है। उनकी रचनाओं की सीधी सादी सपाट भाषा है। भावों की यथातथ्य ईमानदार आभिव्यक्ति के लिए बिंबों, प्रतीकों, संकेतों का प्रयोग उन्होंने भी किया है। उनकी रचनाओं की भाषा सादगी से युक्त है। थोडे शब्दों में सुन्दर ढंग से उन्होंने भावों को प्रस्तुत किया है। बिंबात्मकता, चित्रात्मकता, लाक्षणिकता के साथ काव्यात्मक भाषा का प्रयोग उनकी रयनाओं में भी हैं। 'प्रेम का विलाप काव्य' कहानी में अपने प्रमी का वर्णन करते हुए कथावाचिका कहती है-

"मेरे ख्वाबों के झीलों में एक नील कमल के समान तेरा चेहरा प्रफुल्लित है।"12 कल्पना और भावुकता से संपन्न काव्यात्मक भाषा का और भी प्रयोग उनकी कहानियों में धड़ल्ले से हुआ है-

"आकाश में उडते बादल चांदी के रंग के रूई के टुकडे लगे। उनकी रोशनी में उसका चेहरा और भी फीका पड गया। "13

माधवीकुट्टी की भाषा में संवेदनशीलता के साथ चित्रकार की बारीकी निरीक्षण पटुता भी दृष्टव्य है। जैसे -

" सान्ध्य स्वर्णिमा में एक नीली चिडिया के समान तेरा चेहरा फहरा रहा है। हर कहीं मैं तुम्हें देख रही हूँ। "14

संवाद

कृष्णाजी की रचनाओं के संवाद छोटे तथा सांकेतिक है जो वातावरण तथा चारित्रिक विशेषताओं को उजागर करने में पूरी तरह सफल है। वाक्य बहुत ही सुगठित और अपने में कसे हुए हैं। जितने से काम चल जाय उतने ही शब्दों से काम चलाया गया है। जैसे-

" माल पर चहल पहल थी?

-कम

-लौटती बार तो रास्ता अकेला होगा?

-था ही

केशी काफी देर रत्ती को देखता रहा।

-पहले वक्त कैसा गुज़रा?

रत्ती ने मानो कोई पुराना हिसाब चुकाया हो।

-माल पर घूमने के सिवाय और क्या किया जा सकता है?"15

मित्रो-मरजानी, उपन्यास में आंगिक हरकतों से युक्त चुटीले संवाद को प्रस्तुत किया गया है जो एक ओर नाटकीयता एहसास दिलाता है तो दूसरी ओर पात्रों. की चारित्रिक विशेषताओं की ओर भी इशारा करता है। औसत संवाद दो-तीन वाक्यों में सिमटे हुए हैं- "मित्रों ने सुहाग को बीच ही में रोक जिठानी के हाथ से कपडे छीन लिए-जिठानी. अब इन कपडों का हिसाब-किताब मेरे और छुटकी के

बीच !

सुहाग ने झिडका - चुकने दे झगडा, मंझली, अब क्या युद्ध छेडेगी?

मंझली ने सिर हिलाया- एक बार छोड हज़ार बार !इस भुख्खी का माथा घूम गया है, जिठानी,जैसे इन जोडों के बिना इसके पित्तर न तिरते हों !"16

इसप्रकार एक-दूसरे के प्रति ईर्ष्या, प्रतिद्वन्दिता, संवादों के माध्यम से ही जादिर होती हैं-

"सुहाग पलटकर देवरानी के पास चली आई और गम्भीर स्वर में बोली - देवरानी, ताने-तेवर एक तरफ, पर क्या सौंह खाकर बैठी हो कि घर में किसी का परदा न रखोगी?

फूलावन्ती थिरकी नहीं- जिनकी नियत बुरी उनका परदा मैं क्या रखूँ? मेरे दहेज के निकाले तीन जोड़े, भारी बनारसी ओढ़नी, सिंगार पट्टी और माथे का टीका मुझे दिलवा दो तो किसी के साथ न मेरा कोई बैर न विरोध। "17

इस वार्तालाप में फूलावन्ती का लोभी मन अनायास ही उन्मीलित हुआ है। ' डार से बिछुडी ' उपन्यास की भाषा की नाटकीय शैली की वजह संवेदनात्मक हो गयी है। पाशो और उसके भाई की बात चीत से यह स्पष्ट होता है-

" बहना, जी न बुरा करो। बडे कोट से लौटती बार तुम्हें

मिलने आऊँगा।

रोते-रोते ठिठक गयी।

इतनी दूर काहे जाना है वीरजी?

वीर पहले झिझके, फिर समझाकर बोले-

बहना, बडा नगर ठहरा, वहाँ तो आना-जाना लगा ही रहता है।

पहले सँभली, फिर ध्यान कहीं जा भटका। साँस रोके पूछा-

कहीं लडाई तो नहीं छिडी वीरजी। "18

परिवेश के अनुसार संवाद रचना की अपनी विशेषताएँ होती हैं। आँचलिक शब्द एवं स्थानीय बोली के प्रयोग से ही ये खासियतें आ जाती हैं। कृष्णा सोबती की पंजाबी पृष्ठभूमि में लिखी रचनाओं में पंजाबी शब्दों की भरमार है। ' मित्रो मरजानी ', ' डार से बिछुडी ', 'जिन्दगीनामा' उपन्यास और 'जिगरा की बात' कहानी आदि इस तरह की रचनाएँ हैं। इनमें लिशकना(चमकना), लीडे(कपडे), चंगेर(टोकरी), पिंडा(शरीर), तावली(जल्दी) जैसे अनेक पंजाबी शब्दों का प्रयोग मिलता है। 'जिन्दगीनामा' उपन्यास में तो पंजाबी भाषा का इतना प्रभाव पडा है कि उसकी भाषा को पंजाबीकृत हिन्दी कहना उचित लगता है। जैसे -

"शरद पुण्या की रात। पिंड के कच्चे कोठे चम्मचम्म चमकने लगे। दमकने लगे। चान्ननी ने सजरी लिपाई से खेत-खलियान रूख-वृख सब उजरा-उजला दिए। कुओं के मिट्ठडे सुर झलमल-झलमल हियरों

को हुलसाने लगे। बेटों-बच्चडों के साथ घरों को लौटती बलदों की जोडियाँ जी की तृखा-प्यास जगाने लगीं। चूल्हों से उठती उपलों की कच्ची गंध हर कोठे हर चौके को महकाने-लहकाने लगी।"19

माधवीकुट्टी की रचनाओं के संवाद भी छोटे एवं भावुक है। अधिकांश कहानियों का संवाद एक एक शब्द या वाक्य में सिमट गया है। फिर भी मन के भावों को ठीक से संप्रेषित करने में पूरी तरह सक्षम है। जैसे-

- पिताजी।

- क्या है बेटी?

- क्या नानीजी अगले साल मर जाएगी ?

- नहीं।

- नहीं मरेगी?

- नानी नहीं मरेगी।

- सच ?" 20

'गर्मी की छुट्टी' नामक कहानी का उपर्युक्त संवाद एक ऐसी लडकी की विह्वलता का ठीक ठीक व्यंजित करती है, जिसकी माँ नहीं है और नानी ही एकमात्र सहारा है। छोटे छोटे वाक्यों से पूरे भावजगत को खडा करने में माधवीकुट्टी की भाषा सक्षम निकली है। जैसे-

" लगता है दाल जल रहा है।"

'बकरी' कहानी का यह वाक्य एक ऐसी औरत का आत्मकथन है जो

पति एवं बच्चों की खातिर घर में मशीन की तरह अनवरत काम करती रहती है। ऑपरेशन के लिए ले जाते वक्त भी उसके मन में अपने परिवार की चिंता ही सवार है जिसकी प्रस्तुत वाक्य के माध्यम से सक्षम अभिव्यक्ति हुई है। 'खीर' कहानी के छोटे बेटे का यह कथन भी काफी मार्मिक है-

" माँ ने अच्छा खीर बनाया है। "

माँ की आकस्मिक मृत्यु के बाद, पिताजी बच्चों को खाना खिला रहा है। तब माँ की मृत्यु से अनजान सबसे छोटा बेटा माँ की बनायी खीर का स्वाद लेते हुए प्रस्तुत बात बता रहा है जो मृत्यु की घनीभूत पीडा को और गहराती है।

माधवीकुट्टी ने उत्तर केरल के ग्रामीण परिवेश में लिखी कहानियों में मलयालम भाषा के वल्लुवनाटन शैली को अपनाया है।यों अपनी अलग पहचान भी बना ली है। गाँव के अनपढ लोगों के बोलचाल के सन्दर्भ में ग्राम्य भाषा के बारीकी प्रयोग से पात्र एवं परिवेश को जीवंत भी बनाया है।

बिंबात्मकता

भावों की कलात्मक प्रस्तुति के लिए बिंबों का इस्तेमाल किया जाता है, तद्वारा भाषा में चमत्कारिता भी आ जाती है।

कृष्णा सोबती के ' सूरजमुखी अंधेरे के ' उपन्यास बिंबों एवं संकेतों के प्रयोग से काफी संवेदनात्मक हो गया है। किशोरावस्था की

रत्ती के असद से प्रेम की अनुभूति का चित्रण बिंबात्मक ढंग से हुआ है जिससे अमूर्त संवेदना मूर्त हो उठी है। जैसे -

" उस रात रत्ती सोई तो अंधियारे में एक लौ सी टिमटिमाने लगी। सिरहाने पर, बालों में ., आँखों में और दोनों ओर के छोटे-छोटे दो उरोजों पर। "21

बचपन में रत्ती के साथ हुए बलात्कार का बिंबात्मक वर्णना बहुत ही मार्मिक बन पडा है -

" सालों पुराना दिन। सालों पुरानी शाम। वही पुरानी शाम। वही बर्फीली सरदी। गले में उठता हुआ धुआं, लंबे सांस से रत्ती ने खींच लिया कि किसी काली परछाई ने झपटकर चेहरे को काला कर दिया।

रत्ती ने ओठों को मरोर दे मानो अपने से वायदा किया हो कि वह रोएगी नहीं । "22

'मित्रो मरजानी' में संकेतों के माध्यम से भावों की अभिव्यक्ति की कोशिश हुई है। अपनी कामनाओं को दबाये रखने के लिए मजबूर मित्रो का मानसिक संघर्ष निम्नलिखित प्रसंग में संकेत के द्वारा ही हुआ है।मित्रो की सास के पूछने पर कि वह क्यों दुबली होती जा रही है तो सुमित्रावन्ती हरकत इसप्रकार है -

"सुमित्रावन्ती ने त्योरियाँ चढाकर अपनी दनदनाती आँखों से धनवन्ती को घूरा और कडाही के उबलते दूध पर पानी का छींटा दे मारा। ओढनी-तले सांस ऐसी गिरती-पडती रही कि कहीं कोई धौंकनी चलती

हो। "23

'डार से बिछुडी' उपन्यास का शीर्षक तक बिंबात्मक है। जिन्दगी के पग पग पर ठोकरें खाती, अपने परिवार से बिछुडती पाशों का जीवन प्रस्तुत शीर्षक से मूर्त हो जाता है। रोहिणी के विचारानुसार -शीर्षक 'डार से बिछुडी' एक बिंब की सृष्टि करता है - आकाश की नीली ऊँचाइयों को नाप लेने का जज़्बा अपने भीतर भरकर उडते पंछियों की एक कतार ....उस कतार से बिछुड कर कहीं अकेली छूट गई नन्हीं अबोध चिडिया। भटकती ...पगलाई...कमी दूर तक पसरे विराट अकेलेपन से घबराती ...कभी गिद्धों-बाज़ों के आ झपटने की आशंका मात्र से सिहरती ...फिर भी कहीं आशावान, पुनः अपनी कतार में शामिल होने का स्वप्न लेती। "24

पात्रों के मानसिक भावों को उभारने के लिए प्रकृति को बिंब के रूप में प्रयोग करने की रीति कृष्णा सोबती ने भी अपनायी है। 'एक दिन' कहानी के धर्मपाल और उसकी पहली पत्नी शीला के पुनर्मिलन का बिंबात्मक वर्णन बहुत ही मार्मिक है। जैसे -

" शीला रोये जा रही थी। लेकिन आँसू की बूँदें सिरहाने पर नहीं, पति के वक्ष पर पड रही थीं। बाहर बादल बरसे जा रहे थे और धरती भीग रही थी; और भीगी धरती के वक्ष में एक आलोड़न उठ रहा था - शायद नेमाणी की प्यास ही.....

वह रात कितनी गीली थी, कितनी गहरी थी ! गरजते हुए

बादलों का निनाद सुनकर भी बिजली चमकती जा रही थी। एक महीन-सी रेखा किस गति। से कजरारे बादलों को उन्मत्त किए जा रही थी ! "25

विभाजन की भीषणता पर लिखी गयी कहानी 'सिक्का बदल गया' में भी प्राकृतिक वातावरण के बिंबात्मक वर्णन के ज़रिए शाहनी की मानसिक जडता को साकार कर दिया है। जैसे -

" चनाब का पानी आज भी पहले-सा सर्द था, लहरें लहरों को चूम रही थीं। वह दूर-सामने कश्मीर की पहाडियों से बर्फ पिघल रही थी। उछल-उछल आते पानी। के भँवरों से टकराकर कगारे गिर रहे थे, लेकिन दूर-दूर तक बिछी रेत आज न जाने क्यों खामोश लगती थी ! ....पर नीचे रेत में अगणित पाँवों के निशान थे। वह कुछ सहम-सी उठी ! आज इस प्रभात की मीठी नीरवता में न जाने क्यों कुछ भयावना-सा लग रहा है।26"

' बादलों के घेरे ' कहानी में रवि और मन्नो के बीच के असफल प्रेम इस प्रकार अभिव्यक्त हुआ है -

" कहीं, एक दूसरा प्यार भी होता है, जो पहाड के सूखे बादलों की तरह उठ-उठ आता है और बिना बरसे ही भटक-भटककर रह जाता है। "27

माधवीकुट्टी ने रागात्मक संबंधों के संदर्भ में सूक्ष्म भावों की अभिव्यक्ति के लिए बिंबों का प्रयोग किया है। 'खोई नीलांबरी'

कहानी में नायिका सुभद्रा का शास्त्रीजी के प्रति अगाध प्रेम और उसके मन में उडती यौन भावना की बिंबात्मक अभिव्यक्ति हुई है। सुभद्रा के पानी में डूबने पर शास्त्रीजी उसकी रक्षा करता है। उस वक्त सुभद्रा के मन में जो भावनाएँ उठ रही थी उसका इसप्रकार चित्रित किया गया है, जैसे - " मुझे सीने से लगाकर जब वे तैरने लगे तो मेरा शरीर भँवरों से युक्त सागर बन गया। नाभि में कुछ ऐसी लगी जैसे मैं झूले में बैठकर जल्दी नीचे की ओर झूल रही हूँ। क्या वह यौन का पहला हमला था? "28

' घोंसले लौटती चिडियाँ ' कहानी की उमा कैंसर की मरीज़ है। सालों बाद उसका पुराने प्रेमी मिलने आता है। वैवाहिक जीवन से असंतुष्ट उमा के मन में अपने असफल प्रेम का दुख है और धीरे धीरे आती मृत्यु का एहसास भी।उसकी मानसिकता का चित्रण इस प्रकार हुआ है -"उसकी आँखों में सूर्यास्त की लालिमा सन्ध्या दीप के समान प्रज्वलित है। वे थकी आँखें दीप जले द्वार जैसे लगीं। "29

डॉ. अय्यप्पापणिक्कर के विचार में " माधवीकुट्टी की काव्य भाषा बिलकुल उनके काबू की है। किसी परंपरागत रीति का अनुसरण न करते हुए वह अनायास, स्वाभाविक लय के साथ निसृत होती है। "30 काव्य भाषा की ही नहीं, कथासाहित्य की भाषा के लिए भी यह बात लाजिमी है।

सूक्ष्म भावों की अभिव्यक्ति के लिए माधवीकुट्टी ने कभी

कभी घ्राण बिंबों का भी प्रयोग किया है। अपनी आत्मकथात्मक रचना में उन्होंने सूचित किया है कि बचपन में नौकरानियों के पसीने की बू को वह वात्सल्य की गंध समझती थी। यों 'वात्सल्य' का भाव पाठकों के मन में गंध के रूप में मूर्तरूप धारण करता है। माँ बाप की निकटता के अभाव में वात्सल्य के लिए बच्ची माधवीकुट्टी के दिल की अदम्य चाहत ही इससे व्यक्त होता है। वात्सल्य के लिए बेताब मन की कसक को गंध बिंब भली भांति उजागरित करती है। उसी प्रकार माँ के दूध और नन्हे बच्चों के मुंह की गंध को उन्होंने दूब की गंध से उपमित भी किया है।

' पक्षी की गंध ' कहानी में मृत्यु को विविध गंधों द्वारा मूर्त बनाया गया है। जैसे -

" मृत्यु की गंध, न, मृत्यु की विविध गंधों को मुझसे ज़्यादा कौन जान सकता है? पके ज़ख्मों की गंध, फलों के बाग का मीठी गंध, अगरबत्तियों की गंध...."31

' घाटियों में ' कहानी में मृत्यु को क्लोरोफॉम् की गन्ध से मूर्त बनाया गया है और साथ साथ उसका मानवीकरण भी हुआ है। मृत्यु से भयभीत नायिका की चेतना में मृत्यु इसप्रकार साकार हुई है -

" उस फीके चेहरे में आँखें ज्वलित हो रही हैं। काँच जैसा शरीर, हमेशा पसीने से तर बतर ललाट, मोटे कपडे से लिपटा कमर, उसने उन सबसे मुँह मोडा। क्लोरोफॉम् की ठंडी गंध कमरे में

फैल गयी। "32

उसीप्रकार मृत्यु प्रकृति और मानवीय भावनाओं को उन्होंने मानवीकृत भी किया है जो उन्हें बेहतरीन ढंग से संप्रेषणीय बना देता है। जैसे 'कमरा नम्बर 565 का मरीज़' नामक कहानी में मृत्यु को मुर्गे के गर्दन लैस बताया गया है, जैसे -

"मृत्यु कई बार उस दरवाज़े तक पहूँची। दरवाज़े में लगे बोर्ड को देखकर वह मुसकुराई। दरवाज़ा खोलकर अपने मुर्गे-गर्दन से एक बार अंदर झाँका। मरीज़ के सूखे काले होंठ ओर त्वचा के हरे रंग को देखा। "33

'बंजर भूमि' कहानी की निम्नलिखित वाक्य नायक और नायिका के मानसिक संघर्ष और प्रेम को भली भांति उजागर करते हैं।

" उनके आगे बरसात में भीगा सागर, ऐसा लगा मानों लंबी साँसें लेती करवटें बदलती सिसकती कामातुर स्त्री हो। "34 कहानी में सागर का मानवीकरण भी किया गया है जैसे -

" उसे लगा, कि सागर का पानी एक थके आदमी के समान हाँफ रहा है, रो रहा है। "35

'राजपथ' कहानी में जेरी के ओठों की गंध के बारे में कहा गया है -" उसके ओठों की कच्चे सेब की गंध थी। "36

बूढों की तन्ही दुनिया और जिजीविषा को मुखरित करते कृष्णाजी के 'समय सरगम' उपन्यास में भी बिंबात्मक भाषा का प्रयोग

हुआ है। जैसे -

" जिन पहाडों की हवाओं में सन्नाटे तैरते हैं वहीं खिलते हैं नरगिस के फूल "37

" निः शब्द है समय, पर इसमें भी बहुत कुछ धडक रहा है। और उम्र? वह बकरी बनी चर रही है। धीरे-धीरे। चरने दो; उस ओर मत देखो। "38

प्रतीकात्मकता

भावाभिव्यक्ति को संप्रषणीय बनाने में प्रतीकों की भी अहं भूमिका है। प्रतीक का शाब्दिक अर्थ है चिन्ह। किसी विशेष भाव, घटना, दृश्य के प्रभाव को गहरा बनाने के लिए ही प्रतीकों का प्रयोग किया जाता है। इसके फलस्वरूप सामाजिक परिवेश प्राकृतिक प्रतीकों के माध्यम से जीवन्त हो उठता है। प्रतीकों के माध्यम से प्रस्तुत होने से पाठक और कथ्य के बीच आत्मीय संबन्ध भी स्थापित होता है।

कृष्णा सोबती ने प्रतीकों का भरपूर प्रयोग किया है जो बहुत ही मार्मिक बन पडा है। 'ऐ लडकी' उपन्यास की मृत्यु शय्या पर पडी बूढी कहती है -

" मेरी देहरी की साँकल तो खुल चुकी ! दरवाज़े पर खटखट हुई नहीं कि मैं बाहर ! "39

अरविंद त्रिपाठी के अनुसार " कृष्णा सोबती आज हिन्दी में उन थोडे से कथाकरों में शुमार हैं जिन्होंने कविता और कथा की भाषा

की चार दीवारी को तोड़कर एक रंजक किस्म की काव्यमय भाषा रचने की कोशिश की है। "40 'समय सरगम' उपन्यास में आशावादी विचारधारा को इसप्रकार प्रतीकात्मक ढंग से प्रस्तुत किया है --

" नीम और करेला खाते रहने से ही मिठाई की मिठास का लुत्फ लिया जा सकता है। "41

'सूरजमुखी अंधेरे के' उपन्यास तीन शीर्षकों में विभाजित हैं- पुल, सुरंग और आकाश। ये नाम उपन्यास की नायिका रत्ती के जीवन के तीन पड़ावों को प्रतीकात्मक ढंग से व्यक्त करते हैं। पुल के प्रतीक को इसप्रकार व्यक्त किया गया है कि -

" रीमा, केशी और कुमू बाबा - रत्ती ने मानो इस पुल पर से अंधियारे की गहरी दुर्गम घाटी पार की हो। "42

'सुरंग' रत्ती के अंधेरे अतीत और भयावह वर्तमान का प्रतीक है। जैसे-

" हाथों में सूरजमुखी के फूलों का ढेर लिए रत्ती खुशी-खुशी उतराई उतरने लगी। सुहाती। इतराती। ....

अज्जू ने कान के पास मुँह लगाकर धीमे से कहा-

किसी ने बुरा काम किया था न तुम्हारे साथ ! खून निकला था न ! रत्ती ने आगे कुछ सुना नहीं। फटाक-से सूरजमुखी का अज्जू के मुँह पर दे मारा ....

नुचे हुए पंखों-सी सूरजमुखी की पंखुडियाँ सडक पर बिखरी रही....

वह हवाघर.....वह भद्दा चेहरा-वह नीचे पटकता हाथ। 43

'आकाश' रत्ती के हीनता ग्रंथि से मुक्त होने का प्रतीक है जिसमें कोई बंधन नहीं है। जैसे-

" सिर्फ आकाश-
आकाश में घरौंदे नहीं बनते
आकाश में धरती के फूल नहीं खिलते-
नहीं उगते तो बस नहीं उगते-
उगते ही नहीं। "44

रत्ती और दिवाकर के दैहिक सम्बन्ध के अनुभवों को प्रतीकों के माध्यम से अभिव्यक्त किया गया है। जैसे- " आँच के फूल का लोहित कुण्ड में जा तिरना, पाटल का बिखरना, जंगल के आरक्षित अंधेरे में खो जाना, रूई धुनकना, सेमल के फूलों का बिखरना, नदी के पाट पर किसी मछली का तड़फड़कर पानी के भँवरों में जा फंसना, रत्ती के बरसों पुराने अंधियारे में मुक्ता-मणि का लहराना आदि। "45

भाषा को जीवंत और प्रभावोत्पादक बनाने के लिए माधवीकुट्टी ने भी प्राकृतिक उपादानों को प्रतीकात्मक ढंग से प्रस्तुत किया है। 'नीरमातलम के फूल' नामक कहानी में अपने विदेशी पति के साथ,सूने खानदान में आती नायिका की गृहातुरता की अभिव्यक्ति के लिए 'माखन रंग के फूल', 'दोपहर के धूप में चमकते खेत'46 आदि प्राकृतिक दृश्यों का प्रयोग किया गया है।।कहीं घर के साधनों को भी प्रतीकवत चित्रित किया है जैस - "पुराने होने के कारण उस धोती की सिलवटें

पीली पड चुकी थी। "47 केरल में 'यममुर्गी'नाम से अभिहित पक्षी को मृत्यु का प्रतीक माना जाता है और माधवीकुट्टी ने उसी प्रतीकार्थ में उसका प्रयोग भी किया है। इसके अलावा काम भाव को भी प्रतीकों के माध्यम से जाहिर किया गया है। 'पक्षी की गंध' और 'झूठ' कहानियों में 'घोडा' यौन भावना का प्रतीक है। 'पक्षी की गंध' में युवक के चेहरे को घोडे के चेहरे से उपमित किया है तो ' झूठ ' कहानी में बच्चे के स्वप्न में आनेवाला घोडा, पिता का प्रतीकवत रूप है जो प्रमिका स्टेल्ला के साथ अनैतिक संबन्ध रखता है। इसके अलावा माधवीकुट्टी के कथासाहित्य में 'लाल' शब्द का प्रतीकवत् प्रयोग धडल्ले से हुआ है जो यौवन और आसक्ति का प्रतीक है। 'लाली सन्ध्या', 'लाल हवेली', 'लाल घाघरा' जैसी कहानियाँभी इसी किस्म की हैं।'राजपथ' कहानी में स्टीफन फ्लेच्चर के घर की नीरस जिन्दगी का वर्णन प्रतीकात्मक ढंग से हुआ है। जैसे-" अंदर और बाहर सब कहीं खामोशी। आंगन के पौधों में ढेरे सारे फूल थे। मगर भौरों के गुंजन नहीं थे। चिडियों के कूजन भी नहीं थे। "48

बुढापे के प्रतीक के रूप मेंपत्ते हीन रूखे सूखे टहनियों से लैस पेड का चित्रण हुआ है। 'गर्मी की छुट्टी' कहानी और 'मानसी' उपन्यास में ऐसा वर्णन हैं। स्त्री मानस के शाश्वत प्रेम की संकल्पना के प्रतीक के रूप में'राजा' तथा 'श्रीकृष्ण' बार बार कहानियों में अवतरित हुए हैं। राजा 'मधुरा का राजा' श्रीकृष्ण ही है।

शैली

शैली वह तत्व है जो रचनाकार के अलग वैशिष्ट्य को उद्घोषित करती है। कथ्य की प्रस्तुति के लिए जिन प्रणालियों तथा साधनों का प्रयोग किया जाता है,वही प्राय: शैली में अभिहित होता है। इसलिए शैली एक प्रक्रार से विचारों की वेशभूषा है।वह रचनाकार के चिन्तन को ठीक से संप्रेषित करती है। साथ साथ पात्रों की वैयक्तिक विशेषताओं मनोवृत्तियों और क्रियाव्यापारों को संप्रेषित करने का रचना कौशल भी है।

मानव चेतना की गहराइयों में उतरकर तह के विचारों को आत्मसात करने में चेतना प्रवाह पद्धति बहुत सहायक है। कृष्णा सोबती ने प्रस्तुत शैली के माध्यम से 'सूरजमुखी अंधेरे के' की रत्ती के मानसिक भावों कोउजागरित करने की कोशिश की है। उपन्यस की आरंभ में ही जब रत्ती हवाघर के पास पहुँचती है तो अतीत की घटनाएँ चेतना प्रवाह शैली में उभर आती हैं -

" गुम्बद की गोलाई से अटा रेलिंग। फिर एक छोटी सी सीढी। वही सीढी । रत्ती ने ऊपर कदम रखा और हाथ फैला रेलिंग को भींच लिया। झपटता। पटकता। वही हाथ! "49

यहाँ पाठक रत्ती की चेतना के धुमाव से साक्षात्कार कर पाता है। बेबसी से रेलिंग पर माथा झुकाते हुए उसकी चेतना में यह विचार उभरता है -

" इस लडकी को एक बार भी समूची औरत बनने नहीं दिया ?

क्यों? "50

' बादलों के घेरे ' कहानी में रवि, मन्नो से अपना संबन्ध तोडकर अंतिम बार उतराई उतरते वक्त उसकी चेतना में अतीत का दृश्य निखर आता है, जो पाठक को उनके बिछुडन की गहरी पीडा का एहसास दिलाता है -

" बिलकुल ऐसे लगता है कि किनारे पर खडा हूँ और किश्ती में बैठी मन्नो बही चली जा रही है....वह मुझे नहीं देखती, नहीं देखती ,उसकी आँखों के आगे उसके अपने हाथों की रोक है, अपने हाथों की ओट है।"51

पात्रों के अचेतन मन के गहनतम भावों को उभारने के लीए अन्तरंग एकालाप सहायक है। 'सूरजमुखी अंधेरे के' में ऐसे ही अन्तरंग एकालाप द्वारा असद एवं रत्ती की पारस्परिक अंतरंगता को प्रस्तुत किया गया है -

" मोड पर असद भाई का घर । फाटक खोलकर....हिश्, अभी तो देर है। कई घण्टे बाकी हैं । अन्दर जाऊँगी। आपा मिलेंगी।खान अंकल....और असद भाई। चाय खान अंकल के यहाँ। हर सीज़न वहीं लेते हैं।"52

पूर्वदीप्ति शौली में स्मृतियाँ बीच बीच में फ्लैशेस के रूप में उभरकर अतीत को उजागर करती है, और यों अतीत पाठकों के सामने स्पष्ट भी होता है। 'बादलों के घेरे' कहानी के बीमर रवि के मन में अपने

अतीत के असफल प्रेम की स्मृतियाँ सूखे बादलों की तरह उठ-उठ आती हैं जो बिना बरसे ही भटक-भटककर रह गये थे। जैसे-

" एक बार गर्मी में पहाड गया था । बुआ के यहाँ पहली बार उन आँखों-सी आँखों को देखा था। धुपाती सुबह थी। नाश्ते की मेज़ से उठा, तो परिचय करवाते-करवाते न जाने क्यों बुआ का स्वर ज़रा-सा अटका था....साँस लेकर कहा -" मन्नो से मिलो, रवि, दो ही दिन यहाँ रुकेगी। "53

परिवेश एवं जनजीवन की विस्त्रृत जानकारी देने के लिए कृष्णाजी ने कहीं कहीं वर्णनात्मक शैली का भी प्रयोग किया है। जैसे -

" इस बार जो चिल्ला पड़ा तो शहर-भर को कँपकँपी लग गई। गहराता जाड़ा लाल किले की महराबों को फलाँग जामा मस्जिद की सीढियों पर पसर गया। रज़ाइयों, दुलाइयों और निहालियों के ढेर। हवा में झिलमिलाती पतली धूप। रंग-बिरंगी रज़ाइयों में पडते डोरे मानो दिल्ली के बाशिंदों पर आडी-तिरछी खींचने लगे। "54 कृष्णाजी ने कहीं कहीं पत्रशैली को भी अपनाया है।'पहाडों के साये तले','दो राहें : दो बाहें' आदि इसी शैली में लिखी गयी हैं। 'पहाडों के साये तले' कहानी कथावाचिका की तरफ से भीमताल, रानीखेत और कौसानी से 'सुषी' के नाम लिखे तीन पत्र के रूप में लिखी गयी है जिसमें पहाडी इलाके का मोहक वर्णन मिलता है।

माधवीकुट्टी ने अपनी अनेक कहानियाँ आत्मकथात्मक शैली

में लिखी हैं जो उनकी ईमानदार अभिव्यक्ति का ज्वलंत सबूत है। इससे कहानी में अंतरंगता एवं प्रामाणिकता आ जाती है। 'शतरंज', 'राधा अनुराधा', ' राजा की मेहबूषा ',' प्रेम का विलाप काव्य ' आदि कहानियाँ इस किस्म की हैं। भावों की गहरी अभिव्यक्ति के लिए यह शैली बहुत सक्षम है। जैसे -

" मेरे ख्वाबों के झील में तेरा चेहरा एक नीलकमल के समान प्रज्वलित है। तुमने कभी यह नहीं पहचाना कि मैं अपने इस अतृप्त प्रेम का विलापकाव्य रच रही हूँ।"55

' राधा की चिट्ठी ' कहानी में पत्र शैली और आत्मकथात्मक शैली का समावेश हुआ है। कहानी, कृष्ण के नाम राधा द्वारा लिखित चिट्ठी के रूप में लिखी गयी है जो काफी भावप्रवण है -

"तुमने कहा :" राधे, अगर मैं किसी दूसरी स्त्री का आलिंगन करूँ तो उसकी वजह तुम होगी। क्योंकि, तेरे प्रति आसक्ति की वजह ही मैं उससे आकर्षित होता हूँ। पुरुष से मिलती हर स्त्री में तेरा ही रूप नज़र आता है।"56

'जानु की कही कहानी ' , 'जानु दिल्ली में' जैसी कहानियों में लेखिका स्वयं जानु से अपनी कहानी कहलवा रही है। तो ' राजपथ', 'नीरमातलम के फूल', 'हरा रेशमी साडी', 'धोखा', 'पातिव्रत्य' जैसी कहानियाँ अन्य पुरुष शैली में प्रस्तुत की गयी हैं।

नई कहानी की शैली के संदर्भ में कमलेश्वरजी ने लिखा है-

"नई कहानी ने शैली की पृथक सत्ता को स्वीकार ही नहीं किया बल्कि विषयवस्तु , कथानक, भाषा आदि दृष्टियों से परिभाषित न हो सकने का संकट भी पैदा किया। उसमें कहानी की समग्रता को ही प्रश्रय मिला और यह स्पष्ट हुआ कि कहानी बनायी नहीं जाती, वह स्वयं अपना रूप ग्रहण करती है और इस प्रयास के साथ कहानी की सारी पच्चीकारी और शिल्प कहानी के नये स्थापित स्वतन्त्र अस्तित्व में पर्यवसित हो गया।"57 इस विचार से मिलती जुलती कुछ कहानियाँ माधविकुट्टी ने लिखी है जैसे 'पद्मावती नानक वेश्या', ' कृष्ण की भूमिका', ' एक महल की कहानी', 'परवाने ' आदि।

निष्कर्षतः कृष्णा सोबती और माधवीकुट्टी कथ्य को अत्यंत संवेदनशील बनाने की कला में, यानी पाठकों के मन में गहरा प्रभाव डालने के वास्ते कारगर शिल्प के रूपायन में प्रवीण रचनाकार हैं। इसी लिए उनकी रचनाएँ पठनीय हैं। मनोरंजन के धरातल पर भी इनकी खास अहमीयत है। यों कथ्य और रूप का संतुलित समावेश दोनों की रचनाओं को उदात्त बनाता है।

टिप्पणियाँ

1. कमलेश्वर - नई कहानी की भूमिका, पृ. सं. - 167

2. साक्षात्कार, जून 1993. पृ. सं. - 98

3. कृष्णा सोबती - ऐ लडकी, पृ. सं. - 12

4. कृष्णा सोबती - जिन्दगीनामा, पृ. सं. - 22,23

5. वही - पृ. सं. - 9,10,12

6. कृष्णा सोबती - सूरजमुखी अंधेरे के, पृ. सं. - 59

7. वही - पृ. सं. - 43

8. बिनदु भट्ट - अद्यतन हिनदी उपन्यास, पृ. सं. - 167

9. कृष्णा सोबती - सोबती एक सोहबत, पृ. सं. - 393

10. कृष्णा सोबती - सूरजमुखी अंधेरे के, पृ. सं. - 124,122,116,101
    और बादलों के घेरे, पृ. सं. - 11

11. कृष्णा सोबती - डार से बिछुडी, पृ. सं. - 16,20,101

12. माधवीकुट्टी - मेरी कहानियाँ, पृ. सं. - 493

13. माधवीकुट्टी - माधवीकुट्टी की कहानियाँ, पृ. सं. - 227

14. माधवीकुट्टी - मेरी कहानियाँ, पृ. सं. - 522

15. कृष्णा सोबती - सूरजमुखी अंधेरे के, पृ. सं. - 12

16. कृष्णा सोबती - मित्रो मरजानी, पृ. सं. - 29

17. वही - पृ. सं. - 28

18. कृष्णा सोबती - डार से बिछुडी, पृ. सं. - 59,60

19. कृष्णा सोबती - जिन्दगीनामा, पृ. सं. - 16

20. माधवीकुट्टी - मेरी कहानियाँ, पृ. सं. - 209

21. कृष्णा सोबती - सूरजमुखी अंधेरे के, पृ. सं. - 56

22. वही, - पृ. सं. - 7

23. कृष्णा सोबती - मित्रो मरजानी, पृ. सं. - 62,63

24. रोहिणी - एक नज़र कृष्णा सोबती पर, पृ. सं. - 58

25. कृष्णा सोबती - बादलों के घेरे, पृ. सं. - 159

26. वही, - पृ. सं. - 122

27. कृष्णा सोबती - बादलों के घेरे, पृ. सं. - 10

28. माधवीकुट्टी - माधवीकुट्टी की प्रेम कहानियाँ, पृ. सं. - 227

29. वही, - पृ. सं. - 223

30. सांस्कारिक विकासम्, अप्रैल 2002 पृ. सं. - 50

31. माधवीकुट्टी - माधवीकुट्टी की कहानियाँ, पृ. सं. - 201

32. वही, - पृ. सं. - 225

33. माधवीकुट्टी - मेरी कहानियाँ, पृ. सं. - 531

34.माधवीकुट्टी - मेरी प्रेम कहानियाँ, पृ. सं. - 117

35. वही, - पृ. सं. - 118

36. वही, - पृ. सं. - 187

37. कृष्णा सोबती - समय सरगम, पृ. सं. - 17

38. वही, - पृ. सं. - 15

39. कृष्णा सोबती - ऐ लडकी, पृ. सं. - 8

40. हंस, जुलाई 2000. पृ. सं. - 88

41. कृष्णा सोबती - समय सरगम, पृ. सं. - 31

42. कृष्णा सोबती - सूरजमुखी अंधेरे के, पृ. सं. - 39

43. वही, - पृ. सं. - 43-45

44. कृष्णा सोबती - सूरजमुखी अंधेरे के, पृ. सं. - 135

45. वही, - पृ. सं. - 121-122

46. माधवीकुट्टी - माधवीकुट्टी की कहानियाँ, पृ. सं. - 244,245

47. वही, - पृ. सं. - 240

48. माधवीकुट्टी - माधवीकुट्टी की प्रेम कहानियाँ, पृ. सं. - 183

49. कृष्णा सोबती - सूरजमुखी अंधेरे के, पृ. सं. - 7

50. वही, - पृ. सं. - 8

51. कृष्णा सोबती - बादलों के घेरे, पृ. सं. - 25

52. कृष्णा सोबती - सूरजमुखी अंधेरे के, पृ. सं. - 59

53. कृष्णा सोबती - बादलों के घेरे, पृ. सं. - 11

54. कृष्णा सोबती - दिलो दारिश, पृ. सं. - 7

55. माधवीकुट्टी - मेरी कहानियाँ, पृ. सं. - 493

56. वही, - पृ. सं. - 485

57. कमलेश्वर - नई कहानी की भूमिका, पृ. सं. - 161

उपसंहार

तुलनात्मक अध्ययन महज विभिन्न भाषा साहित्यों का ही नहीं बल्कि व्यतिरिक्त संस्कृति एवं जीवन परिवेश का भी अध्ययन है। इसलिए कृष्णा सोबती और माधवीकुट्टी के कथासाहित्य के तुलनात्मक अध्ययन में केरल व हिन्दी प्रदेश की संस्कृति व वातावरण अपने आप उभर आते हैं। कृष्णा सोबती और माधवीकुट्टी दोनों का जन्म स्वतंत्रतापूर्व भारत में हुआ था। कृष्णाजी का जन्म अविभक्त पंजाब के एक गाँव में होने के कारण उन्हें विभाजन की भीषणता को भोगना पडा था। संभ्रान्त परिवार में जन्म लेने से महानगरों में शिक्षा प्राप्त करने का अवसर भी उन्हें प्राप्त हुआ। इसलिए उनके व्यक्तित्व में देहाती और शहरी जीवन का मिला जुला प्रभाव पडा है। बचपन से ही अनुशासन के तहत पलने के कारण उनका व्यक्तित्व ठोस है, उसमें कोई बिखराव नहीं है। बचपन से ही साहित्य की अनोखी दुनिया से नाता जोडने का सुअवसर उन्हें प्राप्त हुआ। इसी वजह जीवन और साहित्य संबन्धी खास नज़रिया अपनाते हुए आगे बढने में सोबतीजी सफल हुई। अपनी सर्जना में इस नज़रिए को बेहिचक प्रकट करने की हिम्मत भी उन्होंने की। ज़िन्दगी के सम्बन्ध में उनकी ठोस मान्यता है कि अपनी अपनी छतों पर ज़िन्दगी की धूप सेंकने का अधिकार सभी को है। साहित्य संबन्धी उनकी मान्यता भी गौरतलब है कि तमाम ऊँच नीच और भिन्नताओं के बावजूद वह जीवन की व्यापक साझेदारी है। मानवीय समस्याओं, कमज़ोरियों और आस्थाओं को धर्म तथा नैतिकता के नाम पर हाशिये में

कर देना उचित नहीं है।

माधवीकुट्टी उर्फ कमला सुरय्या का जन्म केरल के एक ग्रामीण परिवार में हुआ था और उनकी शिक्षा-दीक्षा शहरों में हुई थी। साहित्यिक वातावरण उन्हें विरासत में ही मिला था जिससे साहित्य के प्रति रुचि भी सहज ही विकसित हुई। घर के कडे अनुशासन के तहत उन्हें अपनी सहज अभिलाषाओं को दबाए रखना पडा, जो बाद में उनकी रचनाओं में प्रतिक्रिया के रूप में अभिव्यक्त हुई। बेहद संवेदनशील और भावुक होने के कारण प्यार और सम्मान पाने की अदम्य इच्छा उनके व्यक्तित्व की सबसे बडी विशेषता है। उनके लिए साहित्य बौद्धिकता से पृथक मानवीय भावनाओं की ईमानदार अभिव्यक्ति है। कृष्णा सोबती के समान माधवीकुट्टी भी मानवीय भावनाओं एवं क्रिया कलापों को नैतिकता की तुला पर तौलने के खिलाफ है।

स्वतंत्रतापूर्व भारत के ग्रमीण परिवेश और संयुक्त पारिवारिक व्यवस्था ने, कृष्णा सोबती और माधवीकुट्टी की सृजनात्मकता पर गहरा प्रभाव डाला है। तत्कालीन कृषिप्रधान संयुक्त पारिवारिक जीवन को कृष्णा सोबती ने अपनी रचनाओं की पृष्ठभूमि बनायी थी। विभाजन ने भारतीय जनमानस को बुरी तरह जख्म किया था। सांप्रदायिकता की आग को बुझाने के लिए भारत का विभाजन किया गया था, लेकिन विभाजन के साथ वह आग और भडक उठी। अनेक

नृशंस एवं खौफनाक स्थितियाँ उत्पन्न हुई थीं। विभाजन की भीषणता को कृष्णाजी ने खुद अनुभव किया था और उसकी स्पष्ट झलक उनकी रचनाओं में हैं। सांप्रदायिकता के आग में झुलसती मानवीयता का विकराल रूप उनकी 'सिक्का बदल गया',' मेरी माँ कहाँ' जैसी कहानियों में उभर आया है। विभाजन का असर माधवीकुट्टी की कहानियों पर नहीं पडा है। दूरी की वजह भारत विभिजन से उद्भूत भीषण परिस्थितियों से केरल बच गया था।

माधवीकुट्टी ने केरल के देहाती परिवेश को अपनी कहानियों की पृष्ठभूमि बनायी है। दर असल उससे भी ज़्यादा औद्योगीकरण के फलस्वरूप उत्पन्न अणुपरिवार और उसकी समस्याओं से उत्पन्न अहं की भावना, अकेलापन,असुरक्षा की भावना, स्त्री - पुरुष संबन्ध एवं प्यार की चाहत को उन्होंने शब्दबद्ध किया है। परिवेश के साथ रचनाकार का अटूट सम्बन्ध रचना को प्रामाणिक बनाता है। इस दृष्टि से कृष्णा सोबती और माधवीकुट्टी ने जिस परिवेश का अंकन अपनी रचनाओं में किया है, बहुत प्रामाणिक साबित हुआ है।

मुक्ति कामी स्त्री-चेतना को दोनों ने चित्रित किया है। यह स्त्री के स्वत्व की खोज की कोशिश के अलावा, स्त्री के अपने अधिकारों की घोषणा के दस्तावेज़ भी बन गया है। कृषणा सोबती और माधवीकुट्टी की कहानियाँ इस तथ्य की ओर प्रकाश डालती हैं कि स्त्री की सामाजिक आर्थिक परिस्थितियाँ हर जगह समान हैं। उनकी

समस्याएँ और अनुभव देश काल से परे हैं। उनमें अभूतपूर्व समानता है। स्त्रीत्व के यथार्थ को चित्रित करने में इन्होंने झूठी आदर्शात्मकता का सहारा नहीं लिया है। प्रणय, मातृत्व और दांपत्य की पुरुष प्रायोजित मान्यताओं को नकारतीं और खिलाफ चलतीं पात्रओं को कृष्णा सोबती और माधवीकुट्टी ने चित्रित किया है। प्यार की खोज और शरीर की माँग से विह्वल मन को अभिव्यक्त करने में दोनों लेखिकाओं ने हिम्मत प्रकट की है। इनकी रचनाओं में स्त्री-पुरुष संबन्ध और लैंगिकता का खुला आविष्कार अपने शरीर के प्रति स्त्री के अधिकार के प्रमाण के तौर पर हुआ है। मानसिक एवं शारीरिक अनुभवों की खुली अभिव्यक्ति से यह घोषित भी किया गया है कि स्त्री का अपना एक अलग अनुभव क्षेत्र है।

स्त्री की ज़िन्दगी की सीमाओं का अनुभव करते हुए कृष्णा सोबती और माधवीकुट्टी की पात्राएँ सामाजिक मूल्यों के खिलाफ संघर्ष करती हैं। दोनों की रचनाओं पर पाश्चात्य नारीवादी सिद्धांतों जैसे लिबरल, सोष्यलिस्ट, अस्तित्ववादी फेमिनिसम का परोक्ष प्रभाव पडा है। मगर राडिकल फेमिनिसम का जितना सशक्त प्रभाव माधवीकुट्टी की रचनाओं में है उतना कृष्णा सोबती में नहीं है। लेस्बियनिसम का वर्णन और पारिवारिक संस्था का कडा विरोध भी उनकी रचनाओं में उपलब्ध नहीं है।

जीवन के आधुनिक भावबोध और परिवर्तित मूल्यों के फलस्वरूप मानवीय जीवन में आए बदलाव को दोनों लेखिकाओं ने

चित्रित किया है। समाज ही मूल्यों का निर्माण करता है और समय के अनुसार इनमें संशोधन भी होता है। आधुनिक युग में मानवीय जज़बातों को अर्थ की तराजू पर तोला परखा जाता है, जिससे संबन्धों की आत्मीयता कम हो गयी है। फलतः शिथिल होते मानवीय संबन्धों एवं त्रासद स्थितियों का वर्णन दोनों ने किया है। अर्थ के लिए पिता की हत्या करनेवाले बेटे और बहन की हत्या करनेवाले भाई कृष्णा सोबती की रचनाओं में मयस्सर हैं। माधवीकुट्टी के पात्र स्वस्थ आर्थिक स्तिथी के बावजूद अकेलेपन से पीडित हैं। आधुनिक यांत्रिक सभ्यता के परिणामस्वरूप आधुनिक जीवन में जो मोहभंग एवं मायूसी का दबदबा है और उनके अनुरूप पति-पत्नी संबन्धों में डंवाडोल दृष्टिगत हैं वह कहीं असंतृप्त दाम्पत्य के रूप में और कहीं दांपत्येतर संबन्धों के रूप में प्रकट हुआ है। कृष्णाजी के 'दिलो-दानिश' उपन्यास में आर्थिक दृष्टि से स्वस्थ और परिवार का दायित्व निभानेवाले पुरुष का विचार है कि मौज मस्ती के लिए विवाहेतर संबन्ध रखना जायज़ है। माधवीकुट्टी की कहानियों में प्रेम तथा वैवाहिक क्षेत्र की विडंबनाओं की खुली अभिव्यक्ति हुई है। वैवाहिक जीवन के बोरियत से उबरने के लिए पुरुष इतर संबन्ध रखते हैं तो स्त्री शादी के बाद गुम हो गए सच्चे प्रेम की तलाश में रत हैं। बनते मिटते अन्य मानवीय संबन्धों का भी चित्रण दोनों लेखिकाओं ने किया है।

भाषा एवं शैली की दृष्टि से कृषणा सोबती और

माधवीकुट्टी आधुनिक हैं, दोनों ने नवीनतम माध्यमों को अपनाए है। कथ्य की दृष्टि से कृष्णाजी ने बेहद संवेदनात्मक काव्यभाषा और यथार्थवादी बेबाक भाषा दोनों का प्रयोग किया है। प्रकृति के बिंबात्मक चित्रण के माध्यम से पात्रों की मानसिक स्थिति को उभारने का प्रयास हुआ है। उनकी रचनाओं में लाक्ष्यणिक शब्दावली से युक्त संवाद काफी अर्थपूर्ण बन पडा है और कहीं कहीं नाटकीय भी छलकती है। चेतनाप्रवाह शैलीद्वारा चरित्र चित्रण काफी मार्मिक बन पडा है।

माधवीकुट्टी ने भी अपनी कहानियों में काव्यात्मक भाषा का प्रयोग किया है। रागात्मक भावों के साथ मृत्यु को मूर्त रूप प्रदान करने के लिए बिंबों का तथा प्रतीकों का सहारा लिया है। परिवेश को जीवंत बनाने के लिए और पात्रों को स्वाभाविकता प्रदान करने के लिए रचनाओं में आंचलिक बोली एवं शब्दावली का प्रयोग दोनों ने किया है। संक्षेप में दोनों ने कथ्य एवं पात्रानुकूल भाषा का प्रयोग किया है।

इसप्रकार कृष्णा सोबती और माधवीकुट्टी के कथा साहित्य के तुलनात्मक अध्ययन हिन्दी तथा मलयालम क्षेत्र की ज़िन्दगी, परिवेश एवं संस्कृति को उभारने में भी सक्षम निकला है। परिवेशगत भिन्नताओं के अनुरूप दोनों की रचनाओं में यद्यपि कुछ भिन्नताओं के बावजूद काफी समानताएँ हैं। दोनों लेखिकाओं ने अपने जीवन और रचनाओं के ज़रिए भारतीय स्त्री की गरिमा को बढाया है और भारतीय साहित्य में अपनी अलग पहचान बना रखी है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

मौलिक ग्रंथ

1 डार से बिछुडी — कृष्णा सोबती
राजकमल प्रकाशन
नई दिल्ली।
तृ.सं 1979

2 मित्रो मरजानी — कृष्णा सोबती
राजकमल प्रकाशन
नई दिल्ली।
पाँचवाँ.सं 1992

3 यारों के यार तिन-पहाड — कृष्णा सोबती
राजकमल प्रकाशन
नई दिल्ली।
चतुर्थ.सं 1993

4 सूरजमुखी अंधेरे के — कृष्णा सोबती
राजकमल प्रकाशन
नई दिल्ली।
प्र.सं 1994

5 ज़िन्दगीनामा — कृष्णा सोबती
राजकमल प्रकाशन
नई दिल्ली।
पाँचवाँ.सं 1989

6 ऐ लडकी — कृष्णा सोबती
राजकमल प्रकाशन
नई दिल्ली।
प्र.सं 1991

7 दिलो-दानिश — कृष्णा सोबती
राजकमल प्रकाशन
नई दिल्ली।
प्र.सं 1993

8 समय सरगम	कृष्णा सोबती राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली। प्र.सं 2000
9 बादलों के घेरे	कृष्णा सोबती राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली। प्र.सं 1980
10 माधवीकुट्टियुटे मून्न नोवलुकल	माधवीकुट्टी डी.सी बुक्स कोट्टयम्। प्र.सं 1997
11 मानसी	माधवीकुट्टी करन्ट बुक्स प्र.सं 1988
12 मनोमी	माधवीकुट्टी करन्ट बुक्स तृशूर। प्र.सं 1988
13 चन्दन मरङ्ङल	माधवीकुट्टी करन्ट बुक्स प्र.सं 1988
14 कटल मयूरम	माधवीकुट्टी करन्ट बुक्स प्र.सं 1989
15 माधवीकुट्टियुटे कथकल	माधवीकुट्टी करन्ट बुक्स प्र.सं 1982
16 माधवीकुट्टियुटे प्रेम कथकल	माधवीकुट्टी ओलीव पब्लिकेशन्स कोषिकोड प्र.सं 1998

17 पलायनम	माधवीकुट्टी करन्ट बुक्स तृशूर प्र.सं 1990
18 चेकेरुन्न पक्षिकल	माधवीकुट्टी डी.सी बुक्स कोट्टयम प्र.सं 1996
19 वीण्डुम चिला कथकल	माधवीकुट्टी प्रभात पब्लिकेशन प्र.सं 1999
20 एन्टे चेरुकथकल	माधवीकुट्टी डी.सी बुक्स कोटयम प्र.सं 1999
21 हंसध्वनि	माधवीकुट्टी पाप्पियोण कोषिकोड प्र.सं 2001

आलोचनात्मक ग्रंथ

हिन्दी

22 अद्यतन हिन्दी उपन्यास	बिन्दू भट्ट पार्श्व प्रकाशन अहम्मदाबाद प्र.सं 1993
23 अमृतलाल नागर के उपन्यासों में सामाजिक चेतना	डॉ. शोभा पालिवाल साहित्यागार जयपूर सं 1995
24 आज का हिन्दी साहित्य संवेदना और दृष्टि	डॉ. रामदरश मिस्र अभिनव प्रकाशन

दिल्ली
प्र.सं 1975

25 उपन्यास का पुनर्जन्म — परमानन्द श्रीवास्तव
वाणी प्रकाशन
नई दिल्ली
प्र.सं 1995

26 उपन्यास की शर्त — जगदीश नारायण श्रीवास्तव
किताब घर
नई दिल्ली
प्र.सं 1993

27 उपन्यास समीक्षा के नए प्रतिमान — दंगल झालटे
वाणी प्रकाशन
नई दिल्ली
प्र.सं 1987

28 एक दुनिया समानान्तर — राजेन्द्र यादव
अक्षर प्रकाशन
दिल्ली
चतुर्थ.सं 1980

29 एक नज़र कृष्णा सोबती पर — रोहिणी
अखिल भारती
दिल्ली
प्र.सं 2000

30 औरों के बहाने — राजेन्द्र यादव
अक्षर प्रकाशन
दिल्ली
प्र.सं 1981

31 कहानी उपलब्धि और सीमाएँ — गोरधन सिंह शेखावत

32 कहानी अनुभव और अभिव्यक्ति — राजेन्द्र यादव
वाणी प्रकाशन
नई दिल्ली
प्र.सं 1996

33 कृष्णा सोबती कृति कृतिकार और — महात्मा गांधी

कृतित्व	अंतरराष्ट्रीय हिन्दी विश्व विद्यालय,दिल्ली प्र.सं 2001
34 गर्दिश के दिन	सं.कमलेश्वर
35 चुकते नहीं सवाल	मृदुला गर्ग सामयिक प्रकाशन नई दिल्ली प्र.सं 1999
36 छायावाद की दार्शनिक पृष्ठ भूमि	सुषमा पोल नाषनल पब्लिशिंग हाऊस नई दिल्ली प्र.सं 1971
37 दुर्गद्वार पर दस्तक	कात्यायनि परिकल्पना लखनऊ द्वि.सं 1998
38 तुलनात्मक अध्ययन स्वरूप और समस्याएँ	सं भ.ह.राजूरकर डॉ.राजमल बोरा वाणी प्रकाशन नई दिल्ली प्र.सं 1990
39 तुलनात्मक साहित्य	सं डॉ नगेन्द्र नाशनल पब्लिषिंग हाऊस नई दिल्ली प्र.सं 1985
40 तुलनात्मक साहित्य की भूमिका	इन्द्रनाथ चौथरी दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा,मद्रास सं 1983
41 नई कहानी की भूमिका	कमलेश्वर शब्दकार,दिल्ली सं 1978

42 नवें दशक की हिन्दी कहानी में मूल्य-विघटन
राहुल भरद्वाज
जवाहर पुस्तकालय
मधुरा
प्र.सं 1999

43 नारी विद्रोह के भारतीय मंच
आशा रानी व्होरा
नाशनल पब्लिशिंग हाऊस
नई दिल्ली

44 नारी शोषण आइने और आयाम
आशा रानी व्होरा
नाशनल पब्लिशिंग हाऊस
नई दिल्ली
सं 1984

45 पच्चीस उपन्यास ; नाटकीयता के निकष पर
ओम प्रकाश शर्मा 'प्रकाश'
पाण्डु निपि प्रकाशन
दिल्ली
प्र.सं 1987

46 परिधी पर स्त्री
मृणाल पाण्डे
राधाकृष्ण प्रकाशन
नई दिल्ली
प्र.सं 1996

47 परिवेश की चुनौतियाँ और साहित्य
हेतु भरद्वाज
पंच शील प्रकाशन
जयपुर
प्र.सं 1984

48 प्रसाद के काव्य और नाटक दार्शनिक स्त्रोत
सुरेन्द्रनाथ सिंह
पाण्डु निपि प्रकाशन
दिल्ली

49 प्रेमचन्द्रोतर हिन्दी उपन्यासों में सामाजिक चेतना
अमर सिंह जगराम लोधा
अमर प्रकाशन

अहम्मदाबाद
द्वि.सं 1985

50 फनीश्वरनाथ रेणु का कथा शिल्प — रेणु शाह
राजस्थानी ग्रन्थागार
जोधपुर
प्र.सं 1990

51 फनीश्वरनाथ रेणु की कहानियाँ शिल्प और सार्थकता — हरिकृष्ण कौल
पराग प्रकाशन
दिल्ली
प्र.सं 1989

52 फनीश्वरनाथ रेणु का साहित्य — डॉ अंजली तिवारी
ऋषभ चरण जैन एवं संतति
दिल्ली
प्र.सं 1983

53 फनीश्वरनाथ रेणु के उपन्यासों का शिल्पगत अध्ययन — अशोक वामन राव
अक्षय प्रकाशन
कानपुर
सं 1994

54 बदलते परिप्रेक्ष्य — नेमीचन्द्र जैन
राजकमल प्रकाशन
दिल्ली, प्र.सं 1968

55 बीसवीं शताब्दी का उत्तरार्ध :हिन्दी कहानी — नरेन्द्र मोहन
कादंबरी प्रकाशन
दिल्ली
प्र.सं 1996

56 भारत विभाजन और हिन्दी कथा साहित्य — प्रमीला अग्रवाल
जयभारती
इलाहबाद
प्र.सं 1992

57 भारतीय दर्शन : मूलान्वेषण — विष्णुदेव उपाध्याय
आतमाराम एन्ट सन्स
दिल्ली

	प्.सं 1990
58 भारतीय नारी अस्मिता और अधिकार	आशा रानी व्होरा नाशनल पब्लिशिंग हाऊस दिल्ली प्र.सं 1983
59 भारतीय नारी दशा दिशा	आशा रानी व्होरा नाशनल पब्लिशिंग हाऊस दिल्ली प्र.सं 1983
60 महिला उपन्यासकारों की रचनाओं में बदलते सामाजिक संदर्भ	डॉ शील प्रभा वर्मा विद्या विहार कानपुर प्र.सं 1987
61 महा समरोत्तर हिन्दी उपन्यासों में जीवन दर्शन	कलावती प्रकाश श्याम प्रकाशन जयपुर प्र.सं 1987
62 श्रृंखला की कडियाँ	महादेवी वर्मा भारती भवन इलाहाबाद
63 समकालीन कहानी सोच और समझ	डॉ पुष्पपाल सिंह आत्माराम एन्ट सन्स प्र.सं 1986
64 समकालीन हिन्दी कहानी:स्त्री-पुरुष संबन्ध	सुनंत कौर अभिव्यंजना प्र.सं 1991
65 सिक्का बदल गया	डॉ नरेन्द्र मोहन सीमान्त पब्लिकेशन्स दिल्ली सं 1975
66 सोबती एक सोहबत	कृष्णा सोबती राजकमल प्रकाशन

67 स्त्रीत्व का मानचित्र	अनामिका सारांश प्रकाशन दिल्ली प्र.सं 1999
68 स्त्री उपेक्षिता	सीमोन द बुआ सरस्वति विहार द्वि.सं 1991
69 स्वातंत्र्योत्तर महिला उपन्यासकारों के उपन्यासों में यथार्थ के विभिन्न रूप	नीहार गीते पंचशील प्रकाशन प्र.सं 1996
70 स्वातंत्र्योतर हिन्दी उपन्यासों में वैचारिकता	आशा मेहता भारतीय ग्रंथ निकेतन सं 1988
71 हिन्दी उपन्यास में चेतना प्रवाह पद्धति	डॉ मोहनलाल कपूर साकेत समीर प्र.सं 1988
72 हिन्दी उपन्यास : द्वंद्व एवं संघर्ष	डॉ मोहनलाल रत्नाकर दिल्ली विश्व विद्यालय सं 1993
73 हिन्दी उपन्यासों का मनोविश्लेषात्मक अध्ययन	गिरिधर प्रसाद शर्मा इन्द्रप्रस्थ दिल्ली प्र.सं 1995
74 हिन्दी लघु उपन्यास	घनश्याम मधुप राधाकृष्ण प्रकाशन
75 हिन्दी-कहानी:अलगाव दर्शन	गॉर्डन चार्लस् रोडरमल अक्षर प्रकाशन प्र.सं 1982
76 हिन्दी उपन्यासों का शिल्प विधान	डॉ प्रदीप कुमार शर्मा अभय प्रकाशन

कानपुर
प्र.सं 1990

77 हिन्दी उपन्यास : सामाजिक परिवर्तन प्रक्रिया और स्वरूप — प्रभा वर्मा
क्लासिकल पब्लिशिंग कम्पनी, दिल्ली

78 हिन्दी उपन्यास में प्रतीकात्मक शिल्प — सुशीला शर्मा
सिद्धुराम पब्लिकेशन्स
दिल्ली

79 हिन्दी उपन्यासों मों रूढ़ी मुक्त नारी — राजरानी शर्मा
साहित्य मण्डल
दिल्ली
प्र.सं 1989

80 हिन्दी उपन्यास और प्रेम संबन्ध — विजय मोहन सिंह
प्रवींण प्रकाशन
दिल्ली
प्र.सं 1995

81 हिन्दी तथा अंग्रेज़ी केआंचलिक उपन्यासों का तुलनात्मक अध्ययन — डॉ राजकुमारी सिंह
अन्नपूर्णा प्रकाशन
कानपुर
प्र.सं 1988

मलयालम

82 अन्तर्जनम मुतल माधवीकुट्टी वरे — स. प्र. स. संघं
कोटयम
सं 1987

83 आत्मकथा साहित्यम मलयालत्तिल — डॉ नटुवट्टम गोपालकृष्णन
केरल भाषा इन्स्टिटूट
प्र.सं 1985

84 आधुनिक मलयाला साहित्यम — पी के परमेश्परन नायर
सा. प्र. स. संघं
कोटयम
प्र.सं 1954

85 उत्तराधुनिकता वर्तमानवुम वंशावलियुम	के.पी.अप्पन डी सी बुक्स प्र सं 1997
86 एन्टे कथा	माधवीकुट्टी करन्ट बुक्स कोटयम
87 एन्टे पातकाल	माधवीकुट्टी
88 कथा आख्यानवुम अनुभवसत्तयुम	के पी अप्पन डी सी बुक्स प्र.सं 1999
89 कथयुटे पिन्निले कथा	टी एन जयचन्द्रन सा. प्र. स. संघं कोटयम प्र सं 1975
90 केरलत्तिन्टे समूह घटनयुम रूपान्तरवुम	डॉ इ जे तोमस डी सी बुक्स प्र.सं 1997
91 केरलत्तिले स्त्री मुन्नेट्टङ्ङलुटे चरित्रम	सी एस चन्द्रिका केरल साहित्या अकादमी सं 1998
92 चेरुकथा इन्नले इन्न	एम् अच्युतन सा. प्र. स. संघं कोटयम सं 1973
93 चेरुकथयुटे छन्दस्	वी राजकृष्णन डी सी बुक्स प्र.सं 1997
94 जातिव्यवस्थितियुम केरला चरित्रवुम	पी के बालकृष्णन सा. प्र. स. संघं कोटयम प्र सं 1983
95 जीवितत्तिन्टे स्त्री वायना	सोणिया ईपा

	सेक्कुलर बुक्स कोषिकोट प्र.सं. 2000
96 तारतम्या साहित्य परिचयम	सं डॉ.चात्तनात्त - अच्युतनुण्णि करन्ट बुक्स तृशूर,प्र.सं 2000
97नवसिद्धान्तङ्ङलःस्त्रीवादम	जे.देविका डी.सी.बुक्स प्र.सं. 2000
98 नीरमातलम पूत्ता कालम	माधवीकुट्टी डी.सी.बुक्स
99 फेमिनिसम १-२	सं.जानसी जेम्स केरल भाषा इनस्टिटूट प्र.सं 2000
100 फेमिनिसम चरित्रपरमाया ओरन्वेषणम	एम.लीलावती प्रभातम प्र.सं 2000
101मून्नां कण्ण	एम.पी.नारायण पिल्लै डी.सी.बुक्स प्र.सं 2000
102वर्षङ्ङलक्कु मुन्प	माधवीकुट्टी करन्ट बुक्स कोटयम
103स्त्री पठनङ्ङल	सं.सच्चिदानन्दन बोधी पब्लिशिंग हाउस कोषिकोट
104स्त्री स्त्रीवादम स्ज्त्रीविमोचनम	के.शारदामणि डी.सी.बुक्स प्र.सं 1999
105स्त्री संकल्पम मलयाला नोवलिल	एम.लीलाकुमारी डी.सी.बुक्स

प्र.सं 2000

106स्त्री स्वत्वम समत्वम माधवीकुट्टी पढनङ्ङल — सं.ई.वी.रामकृष्णन
पूर्णा पब्लिकेशन्स
कोषिकोट
सं.1994

अंग्रेज़ी

107 Second sex — Simone de beauvior
Penguin Books
London
1949

108 The dialectic of sex — Shulamith Fire stone
Jonathan cate
London
1970

109 The origin of the family private Property and the state — Frederich Engles
Progress publishers
Moscow

110 Writing the female: A study of KamalaDas — N.Prashantha Kumar
Bharathiya Sahithya Pratisthan,Kochi
1998

पत्रिकाएँ

1 आजकल - सितंबर 1984
2 वही - जून 1989
3 आलोचना - अप्रैल-जून 1980
4 मधुमति - दिसम्बर 1994
5 वर्तमान साहित्य - शताब्दी विशेषांक
6 वागर्थ - फरवरी 1996
7 साक्षात्कार - जून 1993
8 वही - अप्रौल 1996

9 वही - नवंबर 1992-जनवरी 1993
10 वही - 200 वाँ अंक
11 हंस - जनवरी 2001

मलयालम

12 कला कौमुदी - जनवरी 2000
13 गल्फ वोइस - जून 1999
14 भाषा पोषिणी - अक्तूबर 1995
15 वही - अक्तूबर 1996
16 वही - वार्षिक विशेषांक 1998
17 वही - वार्षिक विशेषांक 1999
18 वही - वार्षिक विशेषांक 2000
19 वही - वार्षिक विशेषांक 2002
20 भाषा साहिति - जुलाई-सितंबर 1988
21 मलयाला मनोरमा वार्षिक विशेषांक 1994
22 मलयाला मनोरमा वार्षिक विशेषांक 1998
23 मातृभूमि साप्ताहिक फरवरी 28-मार्च 6 1999
24 मातृभूमि दैनिक - अगस्त 9 1998
25 वनिता - जनवरी 1-14 1999
26 सांस्कारिका विकारम अप्रैल 2002